दैनिक जागरण

अंत:करण की शुद्धता के अभाव में साधना संभव नहीं

रोजगार की चुनौती

प्रधानमंत्री ने बीसवें रोजगार मेले में इक्यावन हजार युवाओं को नियुक्ति पत्र वितरित करते हुए यह प्रतिबद्धता जताई कि उनकी सरकार रोजगार बढ़ाने के लिए हर मोर्चे पर काम कर रही है। यह सही है कि मोदी सरकार ने 2022 में पहले रोजगार मेले की शुरुआत करते हुए 2023 के अंत तक दस लाख सरकारी नौकरियां देने का लक्ष्य तय किया था और अभी तक 12.75 लाख युवाओं को नियुक्ति पत्र दिए जा चुके हैं। यह स्वाभाविक है कि यह सिलसिला कायम रहेगा, लेकिन सच्चाई यह भी है कि सभी युवाओं को सरकारी नौकरियां देना संभव नहीं। वास्तव में कोई भी सरकार हो, वह नौकरी के आकांक्षी सभी युवाओं को सरकारी नौकरियां चाहकर भी नहीं दे सकती। इन स्थितियों में यह आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है कि ऐसी परिस्थितियां पैदा की जाएं, जिनसे निजी क्षेत्र में रोजगार के अधिकाधिक अवसर सृजित हो सकें। चूंकि नई तकनीक के आगमन और विशेष रूप से एआइ के कारण नौकरियों की प्रकृति बदल रही है, इसलिए निजी क्षेत्र में भी रोजगार के पर्याप्त अवसर पैदा करना एक चुनौती बन गया है। आने वाले समय में यह चुनौती और बढ़ सकती है। यह सही है कि एआइ के चलते नौकरियों के जो परंपरागत अवसर खत्म होंगे, उनके स्थान पर नए अवसर उत्पन्न होंगे, लेकिन इन नए अवसरों को भुनाने के लिए शिक्षा व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन करने की जो आवश्यकता है, उसकी पूर्ति तो प्राथमिकता के आधार पर की ही जानी चाहिए।

यह ठीक नहीं कि वर्तमान में बड़ी संख्या में छात्र उच्च शिक्षा संस्थानों से ऐसी डिग्रियां लेकर निकल रहे हैं, जिनकी उपयोगिता कम होती चली जा रही है। आने वाले समय में सामान्य डिग्रीधारी छात्रों के लिए रोजगार के अवसर और कम हो सकते हैं। इसे देखते हुए सरकार को शिक्षा व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन के लिए तेजी के साथ कदम उठाने होंगे। यह इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि हाल ही में नीति आयोग की एक रिपोर्ट में यह कहा गया है कि आठ करोड़ से अधिक युवा ऐसे हैं, जो न तो पढ़ाई कर रहे हैं और न ही कोई कार्य और न ही किसी तरह का प्रशिक्षण ले रहे हैं। नीति आयोग की रिपोर्ट यह भी कहती है कि केवल 8.25 प्रतिशत स्नातक ही ऐसे काम में लगे हैं, जो उनकी शैक्षणिक योग्यता के अनुरूप है। यह अच्छा हुआ कि प्रधानमंत्री ने बढ़ते स्टार्टअप और कौशल विकास कार्यक्रमों की चर्चा की, लेकिन नीति आयोग के इस आकलन की अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि व्यावसायिक शिक्षा और उद्योगों की आवश्यकता के अनुरूप प्रशिक्षण की कमी के कारण युवाओं की रोजगार क्षमता प्रभावित हो रही है। इसे देखते हुए नीति आयोग के सुझाव के अनुसार रोजगार की क्षमता बढ़ाने के लिए छठी कक्षा से ही छात्रों की अभिरुचि एवं कौशल विकास पर विशेष ध्यान दिया जाए।

किसानों को राहत

झारखंड में धान उत्पादन करने वाले किसानों के लिए सरकार की धान खरीद योजना राहत देने वाली है। धान खरीद की प्रक्रिया शुरू करने के साथ समय सीमा निर्धारित करना और किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य समय पर दिलाने को प्राथमिकता देना सराहनीय कदम है। खरीद प्रक्रिया में पारदर्शिता बनाए रखने के लिए जमीन का सत्यापन करने का निर्णय भी महत्वपूर्ण है। इससे बिचौलियों की भूमिका सीमित करने और वास्तविक किसानों से ही खरीद सुनिश्चित करने में मदद मिल सकती है। सरकारी स्तर पर धान खरीद में कालाबाजारी और अनियमितताओं की शिकायतें सामने आती रही हैं। ऐसे में धान की उपज से लेकर मिल तक पहुंचने की प्रक्रिया की आनलाइन निगरानी व्यवस्था लागू करना जरूरी है। इससे खरीद, परिवहन और भंडारण में होने वाली गड़बड़ियों पर अंकुश लगाया जा सकेगा। हालांकि, तकनीकी व्यवस्था तभी प्रभावी होगी, जब उसकी नियमित निगरानी और जवाबदेही भी सुनिश्चित हो। धान के भंडारण के लिए उच्च क्षमता वाले गोदामों के निर्माण का लक्ष्य भी स्वागतयोग्य है। किसानों की मेहनत का उचित प्रतिफल तभी सुनिश्चित होगा, जब खरीद सुचारु हो, भुगतान समय पर मिले और पूरी प्रक्रिया पारदर्शी रहे। सरकार को इन तीनों बिंदुओं पर लगातार निगरानी रखनी होगी।

> सरकार ने किसानों से धान खरीद की योजना बनाई है। इसमें पारदर्शिता के साथ समय पर भुगतान को प्राथमिकता दी गई है

राष्ट्र की राह रोकती न्यायिक शिथिलता

संजय गुप्त

यदि न्यायपालिका और कार्यपालिका समय पर न्याय देने के उपायों को लेकर सहमति नहीं कायम कर पातीं तो न्यायिक तंत्र में सुधार होना कठिन ही है

सुप्रीम कोर्ट से लेकर निचली अदालतों में लंबित मुकदमों की संख्या का विवरण रह-रहकर सामने आता ही रहता है। जब ऐसा होता है तो किसी न किसी स्तर पर चिंता व्यक्त की जाती है और फिर सब कुछ पहले की तरह ही चलने लगता है। देखना है कि हाल में आई एक रिपोर्ट पर देश के नीति-नियंता केवल प्रतिक्रिया ही व्यक्त करते हैं या फिर स्थितियों में सुधार के लिए कोई ठोस प्रयत्न भी करेंगे? इस रिपोर्ट के अनुसार देश के उच्च न्यायालयों में लंबित मामलों की संख्या 65 लाख से अधिक हो गई है। उच्च न्यायालयों में इतनी बड़ी संख्या में मुकदमों के लंबित होने का मतलब है कि हमारी न्यायिक व्यवस्था देश की प्रगति में आड़े आ रही है। यह सभी को विदित होना चाहिए कि किसी भी देश और विशेष रूप से विकासशील देश में यदि त्वरित न्याय नहीं होगा तो सामाजिक स्तर पर तो कुंठा बढ़ेगी ही, नियम-कानूनों का समय पर सही तरह पालन भी नहीं हो पाएगा। यह स्थिति केवल जनता को निराश करने का ही काम नहीं करती, बल्कि आर्थिक प्रगति में अवरोध भी बनती है। समस्या केवल यह नहीं है कि उच्च न्यायालयों में बड़ी संख्या में मुकदमे लंबित हैं, समस्या यह भी है कि उच्चतम न्यायालय में भी लंबित मामलों की संख्या बढ़ती जा रही है और निचली अदालतों में भी। एक और विडंबना यह है कि एनसीएलटी और न्यायाधिकरणों मे भी लंबित मामले बढ़ रहे हैं। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि इनमें सरकार और कंपनियों अथवा शेयरधारकों के बीच के विवादित मसले जिस तरह उलझते और लंबे खिंचते रहते हैं, उससे भी स्थितियां बद से बदतर होती दिख रही हैं। कुल मिलाकर न्याय के किसी भी मंच पर समय पर न्याय मिलता कठिन होता जा रहा है।

हाई कोर्ट में लंबित मामलों की संख्या रेखांकित करने वाली रिपोर्ट के अनुसार सुप्रीम कोर्ट में ऐसी याचिकाएं आती रहती हैं, जिनमें उच्च न्यायालयों को मामले के शीघ्र निस्तारण का निर्देश देने की मांग की गई होती है। यह रिपोर्ट यह भी बता रही है कि उच्च न्यायालयों में सबसे अधिक लंबित मामले इलाहाबाद हाई कोर्ट और राजस्थान हाई कोर्ट में हैं। कुछ ऐसा ही हाल बंबई, मद्रास, कर्नाटक और मध्य प्रदेश हाई कोर्ट समेत अन्य उच्च न्यायालयों का भी है। इलाहाबाद हाई कोर्ट में प्रत्येक न्यायाधीश की बेंच को औसतन डेढ़-दो सौ मामलों की सुनवाई करनी होती है, लेकिन लंबित मामलों की भारी संख्या एक समस्या बनी हुई है। सुप्रीम कोर्ट की समस्या यह है कि वह उच्च न्यायालयों को किसी मामले की शीघ्र सुनवाई के लिए निर्देश नहीं दे सकता। इसका कारण यह है कि यदि वह कुछ मामलों में ऐसा करेगा तो उसके यहां ऐसी याचिकाओं का तांता लग जाएगा, जिनमें मामलों के शीघ्र निस्तारण की मांग की जाएगी।

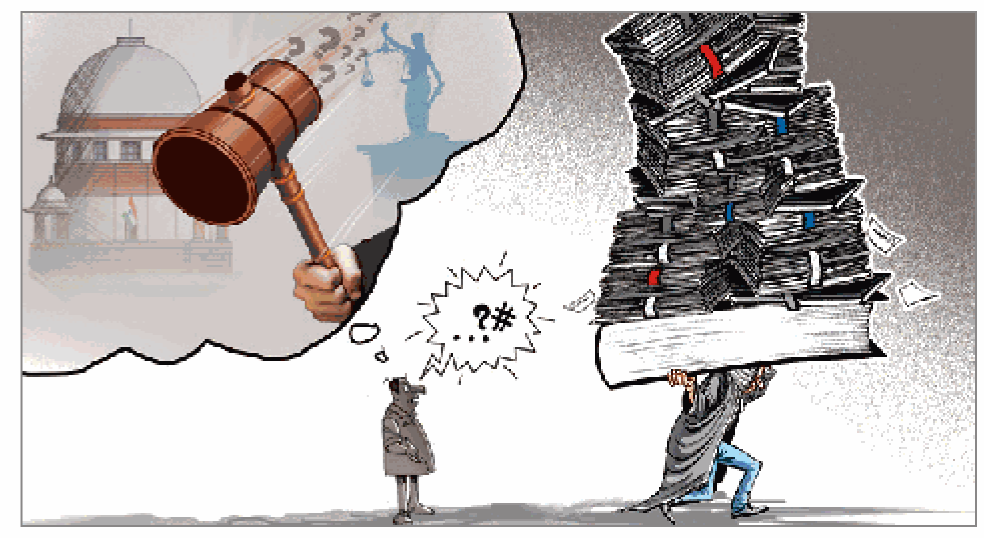

अवधेश राजपूत

अच्छा होगा कि हमारे नीति-नियंता यह समझें कि वर्तमान न्याय प्रणाली आम जनता से लेकर कारपोरेट जगत और यहां तक कि शासन-प्रशासन की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतर पा रही है। समस्या केवल इतनी ही नहीं है कि न्यायाधीशों की कमी है। समस्या न्यायालयों में संसाधनों के अभाव की भी है। एक अन्य समस्या न्यायिक तौर-तरीकों की भी है। इन तरीकों के चलते ही तारीख पर तारीख का सिलसिला कायम हो जाता है। इस समस्या का समाधान तब तक नहीं होगा, जब तक सरकार, न्यायाधीश और वकील उसके निस्तारण के लिए आपस में मिलकर सक्रिय नहीं होते। इस समस्या को लेकर सुप्रीम कोर्ट के प्रधान न्यायाधीशों के साथ कार्यपालिका और विधायिका के शीर्ष पदों पर बैठे लोग भी अपनी चिंता व्यक्त कर चुके हैं, लेकिन देश की व्यवस्था से जुड़े तीनों अंग अर्थात न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका के बीच समस्या के समाधान के उपायों पर सहमति नहीं बन पा रही है। सभी को समय पर न्याय सुलभ कराने में धन के अभाव से अधिक राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव जिम्मेदार है। यदि न्यायपालिका और कार्यपालिका समय पर न्याय देने के उपायों को लेकर सहमति नहीं कायम कर पातीं तो न्यायिक तंत्र में सुधार होना कठिन ही है।

आज जब देश तेजी से आगे बढ़ रहा है और मोदी सरकार ने भारत को 2047 तक विकसित राष्ट्र बनाने का एक लक्ष्य रखा है, तब त्वरित न्याय देने वाली प्रक्रिया का निर्माण किया जाना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। न्याय प्रणाली में सुधार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए, क्योंकि ऐसे लंबित मामलों की संख्या भी बढ़ रही है, जो एक-डेढ़ या दो दशक पुराने हैं। कई मामलों में यह सामने आ चुका है कि लोग बिना दोषसिद्धि के ही वर्षों तक जेल में बंद रहते हैं और बाद में निर्दोष साबित होते हैं। कुछ चर्चित मामले भी वर्षों तक लंबित बने रहते हैं। उनके निस्तारण में देरी का मामला रह-रहकर चर्चा में भी आता है, लेकिन अंतिम फैसले की कोई सूरत नहीं नजर आती। इसका कोई औचित्य नहीं कि एक गंभीर समस्या को लेकर हर स्तर पर चिंता तो जताई जाए, लेकिन उसका कोई समाधान न निकले। यह एक तथ्य है कि लंबित मुकदमों के बोझ को लेकर चिंता जताने का सिलसिला पिछले लगभग दो दशकों से कायम है, लेकिन नतीजा ढाक के तीन पात वाला ही है। यह सच्चाई चिंतित करने वाली है कि सभी अदालतों और न्यायाधिकरणों में लंबित मुकदमों की संख्या बढ़ते-बढ़ते पांच करोड़ के आंकड़े को पार कर गई है। यदि किसी मामले से पांच लोग भी जुड़े हों तो इसका मतलब है कि लगभग 25 करोड़ मुकदमेबाजी में फंसे हैं। तथ्य यह भी है कि तमाम लंबित मामलों और खासकर न्यायाधिकरणों में लंबित मामलों में लाखों करोड़ रुपये की धनराशि भी फंसी हुई है।

देश और समाज के हित में न्यायपालिका और कार्यपालिका को मिलकर बिना किसी देरी के कोई ऐसा ठोस रास्ता निकालना होगा, जिससे लंबित मुकदमे जल्दी निपटें। मुकदमों के एक निश्चित समयसीमा में निस्तारण करने की किसी व्यवस्था का निर्माण आज की अनिवार्य आवश्यकता है। यह समझा जाना चाहिए कि यदि न्याय मिलने में देरी का सिलसिला कायम रहता है तो इससे हर स्तर पर समस्याएं बढ़ेंगी और वे देश का मार्ग अवरुद्ध कर भारत के विकसित राष्ट्र बनने में बाधाएं भी खड़ी करेंगी।

response@jagran.com

नाराजगी से फूफाओं का नाता

हास्य-व्यंग्य

केदार शर्मा

चाहे जितना भी बड़ा और व्यवस्थित आयोजन क्यों न हो, लेकिन उसमें कोई न कोई फूफा नाराज हो ही जाता है

हमारे राष्ट्र-समाज में फूफा होना अब महज रिश्तेदारी तक सीमित नहीं रहा। फूफा रिश्तों के दायरे से निकलकर एक प्रवृत्ति, एक प्रतीक और जरूरत पड़ने पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने की कला भी बन चुका है। किसी समय कोई भी नाराज फूफा किसी भी कोने में मुंह फुलाकर बैठ जाया करते थे, ताकि सबको पता चल जाए कि समारोह का कोई न कोई सिस्टम उनके मनोनुकूल नहीं है। उनके आसपास के कुछ लोग इसी फिराक में रहते थे कि उनकी नाराजगी को परवान चढ़ाने में कोई कोर-कसर बाकी न रह जाए। वे आवाज उठाते थे। कभी फूफा के कहने के बावजूद रायते में दही कम डाला गया या उनको सम्मानजनक शगुन देने में कंजूसी बरती गई। तुनकमिजाजी के ऐसे उदाहरणों की एक अंतहीन सी सूची है।

समय बीतने के साथ-साथ उपर्युक्त 'फूफा-दर्शन' भी सर्वजनीन और सर्वसुलभ होता गया। फैमिली के अतिरिक्त समाज, पालिटिक्स, बिजनेस, सभी जगह फूफा अनेक रूपों में दर्शन देने लगे। राजनीति में वे कुछ ज्यादा ही सुलभ हैं। यह 'दर्शन' किसी भी गैर-जरूरी मुद्दे पर सबका ध्यान खींचने का माध्यम बन गया। राजनीति में तो फूफा-दर्शन ने पांव पसार लिए हैं। राजनीति में इसका नया नाम है-'फूफा पालिटिक्स'। राजनीति में फूफा पालिटिक्स अपना स्थायी मुकाम बनाती जा रही है। टिकट वितरण हो, पदों का बंटवारा हो, मंत्रिमंडल का गठन हो या विपक्ष में भूमिका तय करने का समय, हर जगह यह चिंता दिखाई देती है कि कहीं कोई नाराज फूफा कुकुरमुत्ते की तरह न उग आए। राजनीति के संसार में फूफा ऐसे पनपते भी हैं, जैसे बरसात में कुकुरमुत्ते। बस अंतर इतना है कि कुकुरमुत्ते मौसम में उगते हैं और फूफा मौका देखकर।

सरकार बनाना शायद उतना कठिन न हो, लेकिन रूठे फूफाओं को मनाना उससे कठिन जरूर हो सकता है। फैमिली फूफा तब नाराज होते थे, जब उनके बनाए गए मेन्यू को अनदेखा किया जाता था। पालिटिकल फूफागण इसलिए नाराज हो सकते हैं कि किसी मेन्यू में देश में विद्यमान विविधता के तथ्य को नजरअंदाज किया जा रहा हो। भले ही मेहमान बिना शिकवा-शिकायत के विविध व्यंजनों के चटकारे लेकर विदा हो जाएं, मगर इधर नाराज फूफा, बातों के चटकारे के लिए कोई न कोई शिगूफा छोड़ ही जाते हैं। वैसे भी नाराज फूफा की नाराजगी के अपने अलग से तर्क हुआ करते हैं। वे इस बात को बयां नहीं करते कि कार्यक्रम में क्या-क्या अच्छा हुआ? इनको समस्या यह होती है कि हमसे कुछ भी क्यों नहीं पूछा गया? पूछा गया तो वैसा किया क्यों नहीं गया?

आज इंटरनेट मीडिया की मेहरबानी से तो नाराज फूफाओं को एक से बढ़कर मिल गए हैं। पहले जहां फैमिली फूफा किसी कमरे के कोने में बैठकर रिश्तेदारों को अपनी नाराजगी बयान करते थे, वहीं आज के फूफाओं के पास इंटरनेट का दायरा है। किसी प्लेटफार्म पर एक वाक्य लिखते हैं, जिसे कुछ लोग साझा करते हैं, कुछ लोग टिप्पणी करते हैं और कुछ लोग बहस करते हैं। देखते-देखते फूफा राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बन जाते हैं। कहने वाले यह भी कह सकते हैं कि नाराजगी को नाक पर रखना फूफाओं का जन्मसिद्ध अधिकार है। नाराजगी से फूफापन की शोभा में इजाफा होता है। उसमें निखार आता है। यह नाराजगी ही नाराज फूफा को असली फूफा बनाती है।

response@jagran.com

ऊर्जा

धैर्य

गति के इस दौर में मनुष्य की सबसे गहरी साधना उसका धैर्य ही है। हम तुरंत सफलता, तात्कालिक समाधान और त्वरित परिणाम चाहते हैं। हालांकि जीवन का शाश्वत नियम यह है कि चेतना और प्रकृति की अपनी एक आंतरिक लय होती है, जिसे जल्दबाजी के शोर से बदला नहीं जा सकता है। आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य में धैर्य का अर्थ निष्क्रियता या शिथिलतापूर्वक हाथ पर हाथ रखकर बैठना नहीं है। यह आत्मा की वह सजग और जागृत अवस्था है, जहां मनुष्य अपने कर्म को पूरी निष्ठा से करता है, किंतु उसके प्रतिफल के लिए अधीर नहीं होता है। जैसे भूमि में बोए गए बीज और एक छायादार वृक्ष के रूप में उसके रूपांतरण के बीच का मौन काल व्यर्थ नहीं होता है, ठीक उसी प्रकार हमारी प्रतीक्षा का समय भी निरर्थक नहीं है। यदि फल समय से पूर्व आ जाए, तो वह न तो सुपाच्य होगा और न ही उसमें मिठास होगी और न ही अपेक्षित पोषण।

मानसिक और आध्यात्मिक परिपक्वता की कसौटी यही है कि हम विलंब को विफलता न समझें। प्रायः विलंब हमें कुछ बेहतर की ओर ही ले जाता है। यह भी स्मरण रहे कि धैर्य का वास्तविक स्वरूप कर्मरत रहकर नियति और समय की गति में पूर्ण श्रद्धा रखना है। यह हमें सिखाता है कि समय केवल बाहरी परिस्थितियों को ही नहीं बदलता, बल्कि हमारे भीतर की अधीरता और कच्चेपन को तराश कर हमें अधिक गंभीर, परिपक्व और ठोस बनाता है।

इसलिए जब भी जीवन के किसी मार्ग पर रुकावट महसूस हो, तब याद रखना चाहिए कि यह ठहराव नहीं, बल्कि प्रकृति द्वारा की जा रही एक तैयारी है। जीवन का सबसे सुंदर और गहरा रहस्य यही है कि जिसे आज हम अनुचित देरी मानकर व्यथित हो रहे हैं, कल वही हमें एक सही ईश्वरीय मार्गदर्शन के रूप में समझ आएगा।

लवली आनंद

हिंद और प्रशांत महासागरों का अनोखा रिश्ता

मुकुल व्यास

ग्लोबल वार्मिंग अब हिंद महासागर पर पड़ने वाले प्रशांत महासागर के प्राकृतिक प्रभाव पर हावी हो रही है

हिंद महासागर में मौसम में होने वाले बदलाव प्रशांत महासागर के बदलावों के साथ-साथ चलते रहे हैं, लेकिन अब यह रिश्ता कमजोर पड़ रहा है। पिछले 400 वर्षों में उष्णकटिबंधीय हिंद महासागर में मौसम की स्थितियां आम तौर पर प्रशांत महासागर की स्थितियों के साथ-साथ बदलती रही हैं। दूसरे शब्दों में प्रशांत महासागर के मौसम में होने वाले बदलावों का हिंद महासागर पर गहरा असर होता रहा है। एक नई रिसर्च के अनुसार 1980 के दशक से, यह पुराना रिश्ता तेजी से कमजोर हुआ है। रिसर्च करने वाले विज्ञानियों का कहना है कि इंसानों की वजह से हो रही ग्लोबल वार्मिंग अब इन दोनों महासागरों के व्यवहार में बहुत बड़ा और असामान्य बदलाव ला रही है। अमेरिका के वुड्स होल ओशनोग्राफिक इंस्टीट्यूशन (डब्ल्यूएचओआइ) की सीनियर साइंटिस्ट कैरोलीन उमेनहोफर ने कहा कि एक अहम बात यह पता चली है कि ग्लोबल वार्मिंग और इंसानों द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन अब हिंद महासागर पर पड़ने वाले प्रशांत महासागर के प्राकृतिक प्रभाव पर हावी हो रहे हैं।

अतीत को और गहराई से समझने के लिए विज्ञानियों ने उष्णकटिबंधीय इलाकों में कोरल (मूंगा), पेड़ों के छल्लों और स्टैलेग्माइट चट्टानों में सुरक्षित मौसम के प्राकृतिक रिकार्ड का इस्तेमाल किया। इन रिकार्ड की मदद से वे 1600 के दशक की शुरुआत तक हिंद और प्रशांत महासागरों में मौसम में होने वाले बदलावों का पता लगा पाए। उस समय के ज्यादातर हिस्से में, दोनों महासागरों के बीच गहरा रिश्ता दिखा, जिसमें हिंद महासागर का मौसम आम तौर पर प्रशांत महासागर में होने वाले बदलावों के साथ-साथ चलता रहा। उस लंबे रिकार्ड ने रिसर्च करने वालों को उन समय-अवधियों की पहचान करने में मदद की जब यह सामान्य संबंध कमजोर पड़ गया था।

लगभग 1810 और 1850 के बीच, हिंद और प्रशांत महासागर के बीच का आम संबंध कमजोर हो गया था। रिसर्चर ने इस रुकावट का संबंध उष्णकटिबंधीय इलाकों में हुए कई बड़े ज्वालामुखी विस्फोटों से जोड़ा। इस असर का आकार विस्फोटों की तीव्रता और उस समय के मौसम की स्थितियों, दोनों पर निर्भर करता था। यह समझना जरूरी है कि हिंद और प्रशांत महासागर एक-दूसरे पर कैसे असर डालते हैं, क्योंकि उनका संबंध विज्ञानियों को बारिश और मौसम के दूसरे पहलुओं में भविष्य के बदलावों का अनुमान लगाने में मदद करता है। यह नया अध्ययन इस बात की बेहतर समझ देता है कि हिंद और प्रशांत महासागर एक-दूसरे पर कैसे असर डालते हैं। इस अध्ययन से जुड़े रिसर्चरों का कहना है कि हिंद महासागर गर्मी का एक बहुत बड़ा भंडार है और यह प्रशांत महासागर की गतिविधियों से अलग व्यवहार कर सकता है।

(लेखक विज्ञान के जानकार हैं)

राजरंग

अब रुकना मुश्किल है

समान नागरिक संहिता को लेकर विपक्ष ही नहीं सत्तापक्ष के कुछ सहयोगी दलों में भी असहजता है। हालांकि उनमें स्पष्टता नहीं है कि हिचकिचाहट किस बात की है। तीन तलाक, शादी की न्यूनतम उम्र जैसे विषयों पर पहले ही कानून बन चुका है। लिव-इन को लेकर भी समाज में व्यापक चर्चा हो रही है और ऐसे मामलों में आपराधिक घटनाओं को लेकर भी चिंताएं बढ़ी हैं। मजे की बात तो यह है कि जो लोग समान नागरिक संहिता का विरोध कर रहे हैं, वे भी अमेरिका जैसे स्वतंत्र समाज की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हैं, जहां हर किसी के लिए एकसमान नियम हैं। माना जा रहा है कि विपक्ष समेत सत्तापक्ष के दलों से भी इस मुद्दे पर चर्चा होगी, क्योंकि जिस तरह बिहार के बाद खुद केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने यह एलान किया है कि 2029 से पहले भाजपा और राजग शासित राज्यों में यूसीसी लागू होगा, उसके बाद यह तय माना जा रहा है कि समान नागरिक संहिता की राह पर अब कदम रुकने मुश्किल हैं।

आफत के बीच राहत

ममता बनर्जी के राजनीतिक भविष्य को लेकर बड़े असमंजस की स्थिति बन गई है। सिंबल की लड़ाई में उनका पासा कुछ सटीक बैठा है। पुराना चुनाव चिह्न तो फ्रीज हो गया है, लेकिन उन्होंने जो दो प्रस्ताव दिए थे, वे बंगाल की खेल संस्कृति से जुड़े हैं। उन्होंने बैट और फुटबाल खेलते खिलाड़ी के चिह्न का प्रस्ताव दिया था। ये दोनों खेल बंगाल में प्रचलित हैं और खासतौर पर फुटबाल। वही फुटबाल निशान उन्हें मिल भी गया है। ध्यान रहे कि 2021 के विधानसभा चुनाव में उन्होंने अपने चुनाव प्रचार का आगाज फुटबाल की किक और 'खेला होबे' के नारे से किया था। ममता विरोधी गुट को चुनाव चिह्न के रूप में लिफाफा मिला है। जाहिर तौर पर लिफाफे को लेकर तंज भी हो रहा है कि आखिर उसके अंदर क्या है? यानी राजनीति के गुणा-गणित में ममता भले ही बैकफुट पर हों, लेकिन आयोग के रण में वह फ्रंटफुट पर दिख रही हैं। यानी तमाम आफतों के बीच उन्हें कुछ तो राहत मिली है।

ज्यादा जोगी, मठ उजाड़

बांग्लादेश में भारतीय उच्चायुक्त दिनेश त्रिवेदी दिन-रात रिश्ते सुधारने की कसरत कर रहे हैं, लेकिन वहां विदेश नीति पर काम करने वालों की इतनी भरमार है कि गिनता करना भी मुश्किल हो रहा है। एक पीएमओ जो हर फैसले पर मुहर लगाता है, दूसरा विदेश मंत्रालय है। फिर आती है सलाहकारों की फौज। इसके अलावा कई कैबिनेट मंत्री जो अपने मंत्रालय से ज्यादा भारत-बांग्लादेश रिश्तों पर भाषणबाजी करते हैं। एक भारतीय अफसर की टिप्पणी है कि ढाका में एक पीएमओ है, बाकी सारे कैबिनेट मंत्री अपने आपको विदेश मंत्री समझते हैं। इसी घालमेल में पीएम तारिक रहमान का भारत दौरा अधर में लटक गया। भारत ने उन्हें ब्रिक्स में बुलाया, रिश्ते सामान्य करने की कोशिश भी की, लेकिन बंग्लादेश में सलाहकारों की भीड़ में फैसला ही नहीं निकला। सम्मेलन खत्म होते ही अब संदेश आ रहा है-अब आ सकते हैं साहब! पहले ना, बाद में हां। आखिर विदेश मंत्रालय की जिम्मेदारी कौन देख रहा है? यही सवाल नई दिल्ली को परेशान किए हुए है।

ज्वलनशील एथनाल

रसायन विज्ञान की बात करें तो फ्लैश प्वाइंट के आधार पर पेट्रोल से अधिक ज्वलनशील एथनाल है, लेकिन वर्तमान परिस्थितियों में राजनीति विज्ञान ने इस सिद्धांत को बदल दिया है। सत्ता के गलियारे में वह एथनाल अधिक ज्वलनशील माना जा रहा है, जो पेट्रोल में मिलाया जा रहा है। इसका असर बड़े-बड़े अफसरों पर भी दिखाई दे रहा है। पिछले दिनों सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय के कुछ बड़े अफसर मीडिया से मुखातिब थे। कई बिंदुओं पर खुलकर चर्चा की, लेकिन जैसे ही उनसे एथनाल का जिक्र किया, उन्होंने तुरंत अधूरे वाक्य पर ही पूर्ण विराम लगा दिया। खुद ही बोले कि एथनाल इतना ज्वलनशील मुद्दा है कि इस पर तो कुछ भी कहना ही खतरनाक है। कुछ भी कहा तो...। और वह रुक गए। एक अफसर के इस रुख पर बाकी अफसरों ने सहमति में सिर हिला दिया।

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष: नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

1952 में बना था सिनेमैटोग्राफी एक्ट। मनोरंजन की दुनिया के बदलते स्वरूप और तकनीक के कारण बदलते समय के हिसाब से इस एक्ट में संशोधन होता रहता है।

आजकल

अनंत विजय
anant@nda.jagran.com

सेंसर बोर्ड के समक्ष नई चुनौतियां

नौ वर्षों के लंबे अंतराल और प्रतीक्षा के बाद हाल में केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड (चलन में सेंसर बोर्ड) का पुनर्गठन किया गया। नियमानुसार हर तीन साल में नया बोर्ड बनाया जाना चाहिए। सेंसर बोर्ड में सिनेमा से जुड़े लोगों को प्राथमिकता दी गई है। फिल्मकार, अभिनेता, लेखक और रंगमंच से जुड़े लोगों को सदस्य बनाकर सूचना और प्रसारण मंत्रालय ने बोर्ड के गठन को तर्कसंगत बनाया है। अब मनोरंजन की दुनिया के साथ-साथ समाज भी बदल रहा है। ऐसे में सेंसर बोर्ड के सामने फिल्मों के कंटेंट को देखने और उनके प्रमाणन आदि कई चुनौतियां हैं

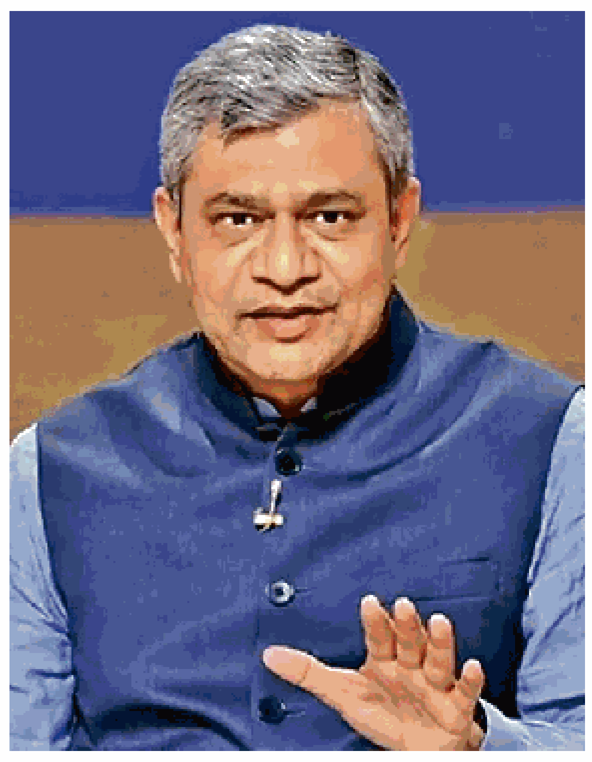

अश्विनी वैष्णव, केंद्रीय सूचना और प्रसारण मंत्री

शशिशेखर वेंपति, सेंसर बोर्ड के अध्यक्ष

नौ वर्षों के लंबे अंतराल और प्रतीक्षा के बाद हाल में केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड (चलन में सेंसर बोर्ड) का पुनर्गठन किया गया। 2017 में केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड में नए सदस्यों का मनोनयन हुआ था। नियमानुसार हर तीन साल में नया बोर्ड बनाया जाना चाहिए। इस वर्ष मई में जब केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड के अध्यक्ष प्रसून जोशी को प्रसार भारती का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था, तब चर्चा हुई थी कि सेंसर बोर्ड का नए सिरे से गठन होगा। प्रसून जोशी के बाद शशिशेखर वेंपति को सेंसर बोर्ड का अध्यक्ष नियुक्त किया गया, पर बोर्ड के नए सदस्यों की घोषणा नहीं हुई। अध्यक्ष की नियुक्ति के लगभग चार महीनों बाद बीते 16 सितंबर को सूचना और प्रसारण मंत्रालय ने अगले तीन वर्षों के लिए सेंसर बोर्ड के 18 नए सदस्यों के नाम की घोषणा कर दी। सेंसर बोर्ड में सिनेमा से जुड़े लोगों को प्राथमिकता दी गई है। फिल्मकार, अभिनेता, लेखक और रंगमंच से जुड़े लोगों को सदस्य बनाकर सूचना और प्रसारण मंत्रालय ने बोर्ड के गठन को तर्कसंगत बनाया है, पर प्रश्न है कि जिस बोर्ड का गठन तीन वर्षों बाद यानी 2020 में हो जाना चाहिए था, उसके गठन में इतनी देरी क्यों हुई? पिछले नौ वर्षों में सेंसर बोर्ड कई बार विवादों में घिरा था। तब के अध्यक्ष प्रसून जोशी ने अपनी सूझ-बूझ से उन विवादों का हल निकाल लिया था। नए बोर्ड के सामने अब नई तरह की चुनौतियां हैं। अब फिल्मकारों में सेंसर बोर्ड को फिल्म के प्रचार के टूल के तौर पर उपयोग करने की प्रवृत्ति बढ़ी है। बोर्ड के गठन से ऐसा प्रतीत होता है कि मंत्रालय को इन चुनौतियों का अनुमान है। इस कारण विभिन्न क्षेत्रों में फिल्मों से जुड़े लोगों को सदस्य बनाया गया है।

सेंसर बोर्ड के गठन के बाद मनोरंजन की बदलती दुनिया को दृष्टिगत रखते हुए 1952 के सिनेमैटोग्राफी एक्ट में समयानुकूल बदलाव करने की चुनौती थी। मनोरंजन की दुनिया के बदलते स्वरूप और तकनीक के कारण बदलते समय के हिसाब से एक्ट में बदलाव पर लंबे समय से विमर्श हो रहा था। कोई निर्णय नहीं लिया जा सका था। सूचना और प्रसारण मंत्रालय में बैठे यथास्थितिवाद के देवता बदलावों को नोटिफाई नहीं कर पा रहे थे। जिस दिन सेंसर बोर्ड के सदस्यों के नाम घोषित किए गए, उसी दिन सरकार ने फिल्म प्रमाणन को लेकर एक नई गाइडलाइन भी जारी कर दी। 35 वर्षों बाद जारी इस गाइडलाइन में ड्रग्स और बच्चों को लेकर स्पष्टता दी गई है। दर्शकों के वर्गीकरण को और भी स्पष्ट किया गया है। 2016 में जब स्वर्गीय अरुण जेटली सूचना और प्रसारण मंत्री थे तो श्याम बेनेगल की अध्यक्षता में उन्होंने एक समिति बनाई थी। उस समिति की सिफारिशों को आंशिक रूप से समय-समय पर लागू किया जाता रहा। अब जब मनोरंजन की दुनिया के साथ-साथ समाज भी बदल रहा है तो इसमें और भी सुधार की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। 35 वर्षों बाद सूचना और प्रसारण मंत्रालय ने यह कदम उठाया है। इस गाइडलाइन के आरंभ में ही कहा गया है कि कलात्मक और सृजनात्मक अभिव्यक्ति को बाधित नहीं किया जाएगा। प्रमाणन को सामाजिक बदलाव के अनुसार तय किया जाए। नई गाइडलाइन में अश्लीलता पर भी एक पंक्ति है। हम सब जानते हैं कि अश्लीलता को परिभाषित करना बहुत मुश्किल है। जहां जुगुप्साजनक अश्लीलता होगी, उसकी पहचान तो आसानी से की जा सकती है। बहुत लंबा चुंबन दृश्य हो या इंटीमेट सीन को देखकर अनुमान लगाया जा सकता है कि ये कहानी की मांग है या फिर फिल्मकार की मुनाफा कमाने की मंशा।

गाइडलाइन की एक और बिंदु ने ध्यान खींचा, जिसमें लिखा गया है कि सेंसर बोर्ड फिल्म के समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का आकलन करते हुए प्रमाणन का निर्णय ले। कई बार फिल्मकार बहुत चालाकी से पात्रों के नाम आदि के आधार पर यह संदेश देने की कोशिश करते हैं कि अमुक समुदाय पीड़ित है और अमुक समुदाय उसको दबा रहा है या उस पर अत्याचार कर रहा है। फिल्म 'मुक्काबाज' के एक संवाद का उदाहरण कई बार दिया जा चुका है। संवाद है-''वो आएंगे और पीट-पीटकर तुम्हारी हत्या कर देंगे और भारत माता की जय का नारा लगाकर चले जाएंगे।'' संवाद से स्पष्ट था कि फिल्मकार किसको टार्गेट कर रहे थे। इस संवाद का फिल्म की कहानी और संबंधित दृश्य से बहुत अधिक लेना-देना नहीं था। लेना-देना था तो फिल्मकार के सोच और राजनीतिक मानस एवं प्रतिबद्धता से। फिल्मों के माध्यम से राजनीति करने की, अपनी विचारधारा को आगे बढ़ाने की और विरोधी विचारधारा को गिराने का खेल इन दिनों काफी बढ़ गया है। बहुत सारे ऐसे फिल्मकार हैं, जो मोदी सरकार के विरोधी हैं और वे अपनी कहानी और संवाद के माध्यम से सरकार के विरुद्ध माहौल बनाने के लिए फिल्म की कलात्मक और सृजनात्मक स्वतंत्रता का सहारा लेते हैं। पहले भी ऐसा होता था, पर कम।

पिछले दिनों खबरें आईं कि पंजाबी फिल्म 'दस्तार' को लेकर सेंसर बोर्ड ने कड़ा रुख अपनाया था। उसमें कई कट्स लगाने की सलाह दी गई थी। इस फिल्म के दृश्य और संवाद ऐसे थे, जो कि समाज हित में नहीं थे। आतंकवादियों को लेकर गांवों में जिस तरह के दृश्य दिखाकर उनको महिमामंडित करने की कोशिश की गई थी, वह समाज और देशहित में नहीं था। इसके पहले फिल्म 'सतलुज' को पिछले चार वर्षों से सेंसर सर्टिफिकेट नहीं मिला था तो उसके पीछे कारण है। वह फिल्म सिस्टम पर सवाल उठाने के आवरण में देश पर प्रश्न खड़े करती है। सेंसर बोर्ड के सामने इस तरह के कंटेंट को देखना और उसका प्रमाणन बड़ी चुनौती है। सेंसर बोर्ड के क्षेत्रीय कार्यालयों को भी सुधारना होगा। वहां से पूर्व में भ्रष्टाचार की खबरें आती रही हैं। जो फिल्में क्षेत्रीय स्तर पर प्रमाणित की जाती हैं, उनमें पारदर्शिता और जिम्मेदारी तय करने की आवश्यकता है। अकारण किसी फिल्म को रोका न जाए और कारण हो तो किसी फिल्म को प्रमाण पत्र दिया भी न जाए। चतुर फिल्म निर्माताओं ने ऐसी जुगत निकाली है कि फिल्म मुंबई में बनाओ, लेकिन सर्टिफिकेशन के लिए कोलकाता या दिल्ली में आवेदन करो। क्यों?

सूचना और प्रसारण मंत्री अश्विनी वैष्णव के पास कई अहम जिम्मेदारियां हैं, पर एक काम अच्छा किया गया कि सेंसर बोर्ड का चेयरमैन शशिशेखर वेंपति को बनाया गया। शशिशेखर वेंपति तकनीक में माहिर हैं। उनके इस हुनर का लाभ सेंसर बोर्ड के क्रियाकलापों को और पारदर्शी बनाने में किया जाना चाहिए। हालांकि सेंसर बोर्ड का एक्स हैंडल, जो 2022 के बाद से निष्क्रिय था, उसको सक्रिय किया गया है। दरअसल फिल्म एक ऐसी विधा है, जिसका समाज पर व्यापक प्रभाव है। इस कारण लोगों की इसमें अधिक रुचि होती है। कोई फिल्म विवादित होती है तो चर्चा बटोरती है। कोई सूत्र मिल जाए तो प्रधानमंत्री तक को लपेटे में लेने का प्रयास किया जाता है। नए बोर्ड के समक्ष चुनौतियां भी हैं और अवसर भी।

फिर से

सीखने-सिखाने की नई परंपरा

संध्या राजीव पांडेय

हमारे यहां घर ही पहली पाठशाला हुआ करता था। मां पहली गुरु और विवाह के बाद सास दूसरी गुरु। मां बेटी को गृहस्थी के गुर सिखाती थी और सास बहू को घर-परिवार चलाने की बारीकियां। समय के साथ पीढ़ियां भी बदल गईं। अब गुरु-शिष्य परंपरा का स्वरूप कुछ ऐसा हो गया है कि गुरु कौन है और शिष्य कौन, यह तय करना भी मुश्किल हो गया है! आज की जेन-जी पीढ़ी का मामला तो और भी दिलचस्प है। यह पीढ़ी सीखने में भले ही थोड़ी संकोची हो, लेकिन सिखाने में इतनी एक्सपर्ट है कि बिना मांगे भी ज्ञान बांटने को हमेशा तैयार रहती है। पहले मां के साथ रसोई में खड़े होकर बेटियां धीरे-धीरे गृहस्थी सीखती थीं।

आज की लड़की बड़े आत्मविश्वास से कहती है, 'मम्मी, ये सब यूट्यूब पर है... जब जरूरत होगी तब सीख लूंगी।' मोबाइल चलाना, आनलाइन पेमेंट करना, फोटो एडिट करना, रील बनाना और दुनिया भर की जानकारी गूगल से निकालना आज की पीढ़ी को खूब आता है। यह भी कम उपलब्धि नहीं है, लेकिन कभी-कभी लगता है कि गूगल ने जानकारी तो बहुत दे दी, बस धैर्य, सहनशीलता और रिश्ते निभाने का अपडेट अभी डाउनलोड होना बाकी है! पहले बेटियां मां से पूछती थीं- 'मां, यह कैसे होगा?' आज बेटियां कहती हैं- 'मां, आपको यह ऐसे करना चाहिए!' यानी जमाना ऐसा बदला कि मां की गोद से शुरू हुई सीखने की परंपरा अब मां को सिखाने तक पहुंच गई है।

अब आइए ससुराल की पाठशाला में। यहां का हाल तो और भी दिलचस्प है। पहले सास बड़ी धैर्यवान गुरु हुआ करती थी। बहू घर में आई नहीं कि प्रशिक्षण शुरू और बुनाई से लेकर सिलाई, खाना बनाने से लेकर घर संभालने तक, बहू को धीरे-धीरे गृहस्थी की पूरी पढ़ाई करा दी जाती थी। सास का उद्देश्य भी यही होता था कि बहू घर को अपना समझे और आने वाले समय में परिवार को अच्छी तरह संभाल सके। पहले की बहुओं के पास सास को कुछ सिखाने का खास हुनर नहीं होता था या ऐसा कहें कि साहस भी नहीं होता था, लेकिन आज की बहू कम प्रतिभाशाली नहीं है। उसने सास के लिए भी आधुनिक जीवन का पूरा कोर्स तैयार कर रखा है। 'मम्मी जी, थोड़ा खुलकर जीना सीखिए! इतना घर में मत बैठिए, किट्टी पार्टी ज्वाइन कीजिए। ये कपड़े पुराने जमाने के हैं, कुछ माडर्न पहनिए। हर चीज घर में बनाने की क्या जरूरत? बाजार में सब मिलता है। बचा हुआ खाना? अरे मम्मीजी, डस्टबिन है न!' अब सास भी मजे से सीख रही है- आनलाइन शापिंग, बाहर घूमना, पार्टी करना, किटी में जाना और हर दूसरे दिन कहना- 'आज खाना बनाने का मूड नहीं है!'

और अब जरा साठ के बाद वाली सास की हालत देखिए। उम्र भर गृहस्थी के गुर सीखने के बाद अब खुद बहू को सिखाने की बारी आ गई है। बहू को नहीं सीखना, आपसे वह बड़े प्यार से कहती है, 'मम्मीजी, अब आप आराम कीजिए, जिंदगी को एंजाय कीजिए। छोड़िए इन सब झमेलों को।' सास मन ही मन सोचती है, 'अरे! यही बात अगर किसी ने तीस साल पहले कही होती तो मैं भी तुम्हारी तरह खुश रहने का आशीर्वाद पाती!' अब सास को भी धीरे-धीरे अहसास होता है कि जिंदगी भर दूसरों को समय देने के बाद थोड़ा समय अपने लिए भी होना चाहिए। अब सास भी बहू से कह देती है- 'बहू, आज खाना तुम बना लेना... आज मेरा मूड नहीं है!' बहू कुछ पल चुप रहती है और फिर मुस्कुराकर कहती है- 'ठीक है मम्मी जी... बाहर से मंगवा लेते हैं। आखिर सीखने की शुरुआत घर से ही तो होती है!'

पोस्ट

रूस से तेल खरीदने वाले देशों पर सौ प्रतिशत टैरिफ के विधेयक पर ट्रंप ने हस्ताक्षर कर दिए हैं। हालांकि इसका यह अर्थ नहीं कि भारत पर स्वत: ही इतना टैरिफ लग जाएगा। इस मामले में बहुत कुछ भारत-अमेरिका रिश्तों पर भी निर्भर करेगा।
पल्लवी घोष@_pallavighosh

डूसू चुनाव में एबीवीपी की बड़ी जीत यही दर्शाती है कि जेन-जी ने राहुल गांधी के 'छात्रों की गूंज' अभियान और काकरोचों के दाना-पानी पर किया गया सारा खर्चा बर्बाद कर दिया।
सुशांत सिन्हा@SushantBSinha

अमेरिका पर आतंकी हमले के 25 साल गुजर गए, लेकिन उसका रवैया अभी तक नहीं सुधरा। वह अभी भी पाकिस्तान, सीरिया और तुर्किये जैसे देशों को शह देने और दुलारने में लगा है। ऐसे में अमेरिका पर फिर से कोई आतंकी हमला हो जाए तो हैरानी नहीं।
प्रकाश सिंह@singh_prakash

भारतीय राजनीति में एक समय मायावती की तूती बोलती थी, लेकिन आज उन्हें अपना उत्तराधिकारी तक नहीं मिल रहा। पहले भतीजों पर भरोसा किया। फिर अविश्वास हुआ तो अधिकार छीन लिए। अब भतीजी को आगे बढ़ाने का फैसला किया है। न मालूम, यह भरोसा कितने दिन टिकेगा। दरअसल परिवारवादी राजनीति का एक दिन यही हश्र होता है!
गोविंद सिंह@govind24

रचनाकर्म

न्याय व्यवस्था को भारतीय बनाने की वकालत

अजय कुमार राय

समय, समाज, शासन और तकनीक के बदलने के साथ न्याय की संस्थाएं, प्रक्रियाएं और उसकी सामाजिक समझ भी बदलती है। यह पुस्तक इसी परिवर्तनशील न्याय व्यवस्था को भारतीय संदर्भों में समझने का प्रयास करती है...

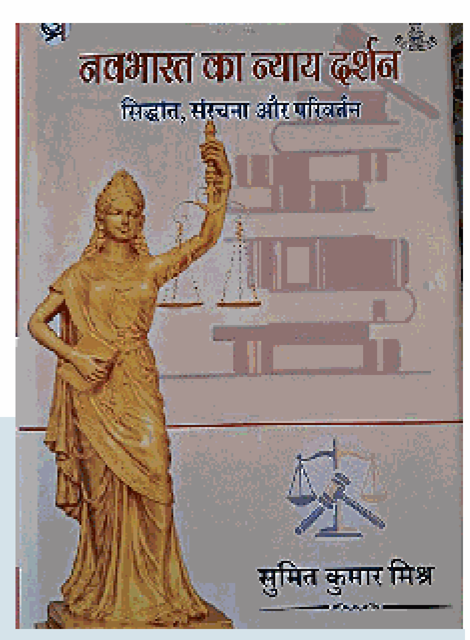

पुस्तक: नवभारत का न्याय दर्शन-सिद्धांत, संरचना और परिवर्तन
लेखक: सुमित कुमार मिश्र
प्रकाशक: अनंग प्रकाशन
मूल्य: 995 रुपये

कानून वे रास्ते हैं, जो एक नागरिक को न्याय की मंजिल तक पहुंचाते हैं। दुर्भाग्य से भारत में ये दोनों बेहद जटिल और दुर्गम हैं। शायद इसकी वजह इनकी जड़ें भारतीय जीवनदर्शन एवं संस्कृति के बजाय अंग्रेजी शासनकाल के औपनिवेशिक ढांचे में निहित है। यही कारण है कि देश के लोग ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि उन्हें कानून और कोर्ट-कचहरी के पचड़े में न पड़ना पड़े, क्योंकि लोगों को त्वरित, सस्ता और आसानी से न्याय नहीं मिल पाता। तारीखें जरूर मिलती रहती हैं। इसीलिए न्याय पाते-पाते उनकी एड़ियां तो घिस ही जाती हैं, कई बार पीढ़ियां भी गुजर जाती हैं। यही आज हमारी न्याय व्यवस्था की सच्चाई है। दिल्ली उच्च न्यायालय में अधिवक्ता सुमित कुमार मिश्र की पुस्तक 'नवभारत का न्याय दर्शन-सिद्धांत, संरचना और परिवर्तन' देश की कानून एवं न्याय व्यवस्था की राह को आसान बनाने का एक अनुभवजन्य दस्तावेज है।

लेखक ने पुस्तक में नवभारत के न्याय दर्शन की यात्रा को नौ अध्यायों में क्रमबद्ध प्रस्तुत किया है। सबसे पहले 'परिवर्तन का काल' में 1860 से 2023 तक कानून की यात्रा, औपनिवेशिक कानूनों से मुक्ति और नए आपराधिक कानूनों की पृष्ठभूमि बताई गई है। इसके बाद 'भारतीय न्याय परंपरा' के अंतर्गत ऋग्वेद के 'ऋत', रामराज्य, दंड और लोकमर्यादा, महाभारत के धर्मसंकट तथा मनुस्मृति-याज्ञवल्क्य की विधि-व्यवस्था, कौटिल्य के अर्थशास्त्र एवं राज्य दंडनीति के माध्यम से भारतीय न्याय-बोध की ऐतिहासिक जड़ों को तलाशा गया है। अगले अध्याय में ब्रिटिश कानूनों की मानसिकता और औपनिवेशिक उद्देश्य को मैकाले और 1860 की आइपीसी के संदर्भ में समझाया गया है। इसके बाद 2023 में बने तीन नए कानूनों-भारतीय न्याय संहिता (बीएनएस), भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता (बीएनएसएस) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम (बीएसए) के बारे में विस्तार से बताया गया है। अगले अध्याय में लेखक कानून परिवर्तन को केवल विधिक बदलाव न मानकर उसके सामाजिक प्रभाव-महिला सुरक्षा, साइबर अपराध, माब लिंचिंग, आतंकवाद, संगठित अपराध तथा गरीब-किसान-मजदूर की न्याय तक पहुंच से जोड़ते हैं। आगे प्रशासन और राजनीति के संदर्भ में पुलिस, न्यायालय, लंबित मुकदमों, न्यायिक प्रक्रिया और कानून के क्रियान्वयन की चुनौतियों पर विचार किया गया है। विश्व तुलना वाले अध्याय में अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस की न्याय प्रणालियों के संदर्भ में भारतीय व्यवस्था को समझने का प्रयास किया गया है। अंततः भविष्य दर्शन नामक अध्याय में तकनीक, डिजिटल साक्ष्य, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और बदलती सामाजिक आवश्यकताओं के बीच भविष्य और विकसित भारत की न्याय व्यवस्था की संभावनाओं की चर्चा की गई है।

भारत की सभ्यता में न्याय का अर्थ केवल अपराध और दंड तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यहां न्याय का संबंध मानव गरिमा, सामाजिक संतुलन और नैतिक उत्तरदायित्व से जुड़कर विकसित हुआ है, लेकिन अंग्रेजी शासनकाल में न्याय की हमारी अवधारणा विकृत हो गई, क्योंकि उसका सारा जोर भारतीयों पर शासन करने और कठोर दंड देकर हतोत्साहित कर पराधीन बनाए रखने पर था। इसीलिए कानून की धाराएं दमनकारी और न्याय तंत्र की प्रक्रियाओं को जटिल बनाया गया कि आम भारतीय जन उसे समझ न पाएं और उसी में उलझे रहें। यह विकृति कमोबेश आज भी बनी हुई है। लंबित मुकदमों का अंबार भी कहीं न कहीं इसी की देन है। यह पुस्तक इसी व्यवस्था को बदलने की वकालत करती है।

बौद्ध सिद्धांतों का विवेचन

आकांक्षा अवस्थी

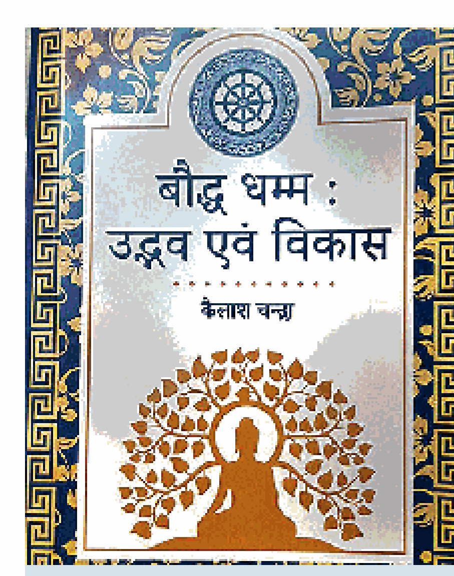

पुस्तक : बौद्ध धम्म : उद्भव एवं विकास
लेखक : कैलाश चन्द्रा
प्रकाशन : डायमंड बुक्स
मूल्य : 350 रुपये

परिवर्तन जीवन का अटल सत्य है। प्राचीन भारत के इतिहास में सामाजिक, धार्मिक और नैतिक जीवन में व्याप्त अंधविश्वास, पाखंड, असमानता, छुआछूत और कृतियों के विरुद्ध परिवर्तन की गहरी आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। इसी आवश्यकता ने भारतीय समाज में अनेक संप्रदायों और जन आंदोलन को जन्म दिया, जिनका उद्देश्य एक ऐसे समाज का निर्माण करना था जो समानता, नैतिकता और मानवीय गरिमा पर आधारित हो। इन सामाजिक आंदोलन में से दो ही ऐसे थे, जो व्यापक जन समर्थन प्राप्त कर सके और कालांतर में सुदृढ़ परंपराओं के रूप में स्थापित हुए-बौद्ध धम्म और जैन संस्कृति। इन दोनों धाराओं ने कर्म, अहिंसा, आत्मसंयम और नैतिक आचरण को सामाजिक जीवन का आधार बनाने का प्रयास किया। विशेषतः बौद्ध धम्म ने जनसामान्य की समस्याओं को केंद्र में रखकर एक व्यावहारिक और अनुभव आधारित मार्ग प्रस्तुत किया।

लेखक कैलाश चन्द्रा की पुस्तक बौद्ध धम्मः उद्भव एवं विकास का मूल संदेश यह है कि मनुष्य स्वयं अच्छाई की ढाल बनकर बुराई से संघर्ष कर सकता है। पुस्तक में बौद्ध धम्म के उद्भव से पूर्व भारतीय समाज की संरचना कैसी थी और बुद्ध अथवा उनके समकालीन विद्वानों को एक नए मार्ग की आवश्यकता क्यों अनुभव हुई, इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। साथ ही बुद्ध की शिक्षाओं के वास्तविक, मौलिक और मानवीय स्वरूप को समझाने का भी प्रयास किया है। धम्म के माध्यम से समानता, स्वतंत्रता और मानवता का जो संदेश बुद्ध ने दिया, वह विश्व में शांति और सह अस्तित्व की स्थापना के लिए आज भी अत्यंत आवश्यक है। पुस्तक बुद्ध के जीवन से प्रारंभ होकर बौद्ध धम्म के उदय, उसके विकास, व्यापक प्रसार और भारतीय दर्शन पर पड़े उसके गहरे प्रभावों का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करती है।

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या पार्टी का नाम और चुनाव चिह्न छिन जाने से ममता बनर्जी की राजनीतिक वापसी मुश्किल हो गई है?

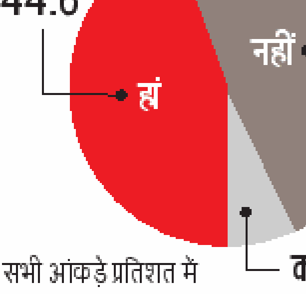

सभी आंकड़े प्रतिशत में

आज का सवाल

क्या दिल्ली विश्वविद्यालय छात्र संघ के चुनाव नतीजे विपक्षी दलों के लिए एक बड़ा झटका है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है

जनपथ

ताऊ जी को दे दिया अब मुंहतोड़ जवाब,
नहीं सहेगा देश अब अमेरिका का दाब।
अमेरिका का दाब करो जो चाहे मर्जी,
होगी अब नाकाम तुम्हारी धमकी फर्जी।
अब का भारतवर्ष नहीं है सीधी 'काऊ',
हम हैं नंदी सांड समझ लो तुम भी ताऊ!
-ओम प्रकाश तिवारी

दारा शिकोह की सामासिक जीवन-दृष्टि

यतीन्द्र मिश्र

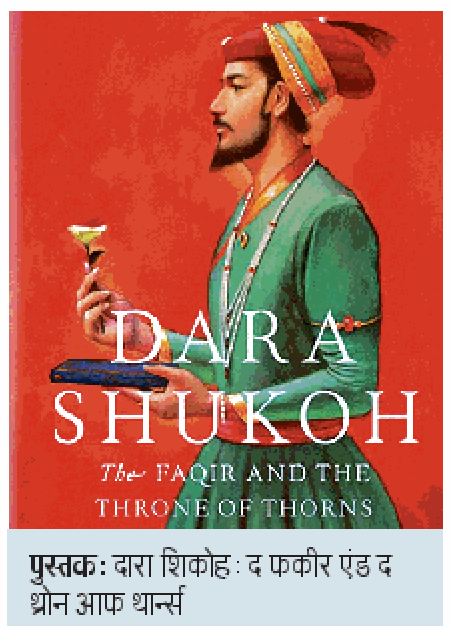

पुस्तक: दारा शिकोह : द फकीर एंड द थ्रोन आफ थार्न्स
लेखक: अमित रंजन
प्रकाशक: पेंगुइन रैंडम हाउस इंडिया
मूल्य: 799 रुपये

दारा शिकोह (1615-1659) मुगल इतिहास का वह नाम है, जिसकी पहचान केवल शाहजहां के ज्येष्ठ पुत्र और उत्तराधिकारी के रूप में करना उसके व्यक्तित्व की व्यापकता को सीमित कर देता है। वह एक जिज्ञासु अध्येता, सूफी विचारों से गहरे प्रभावित साधक, कला और साहित्य का अनुरागी तथा विभिन्न धार्मिक परंपराओं के बीच संवाद की संभावना तलाशने वाला राजकुमार था। संस्कृत ग्रंथों, उपनिषदों और सूफी परंपरा में गहरी रुचि उसके बौद्धिक संसार को सामने लाती है और भारत की उस सांस्कृतिक परंपरा से जोड़ती है, जिसमें अलग-अलग आस्थाओं में आध्यात्मिक साम्य खोजने की उत्कंठा थी। उसके लिए ज्ञान किसी एक परंपरा की सीमा में बंधा विषय नहीं था। इतिहास में बाबर से लेकर औरंगजेब तक के शासकों पर जितना लिखा गया, दारा प्रायः उत्तराधिकार संघर्ष में औरंगजेब से पराजित राजकुमार और उसकी त्रासद परिणति तक सीमित दिखाई देता है। उसकी विद्वत्ता, आध्यात्मिक खोज, अनुवाद-कार्य और सांस्कृतिक दृष्टि इस राजनीतिक कथा के पीछे छूट गए। अमित रंजन की पुस्तक 'दारा शिकोहः द फकीर एंड द थ्रोन आफ थार्न्स' इस विस्मृति को अपना प्रश्न बनाती है। लेखक दारा की जीवन-कथा को कालानुक्रमिक रेखा में रखने के बजाय उसके विचारों, जिज्ञासाओं, संबंधों, प्रसंगों, आध्यात्मिक संसार और ऐतिहासिक स्मृतियों के सहारे उसे समझते हैं।

दारा के गुरु, नंगे फकीर और कलंदर सरमद का शक्तिशाली चरित्र पुस्तक की शुरुआत में ही पाठक का ध्यान खींचता है। दारा की हार, चांदनी चौक में उसकी अपमानजनक परेड और उस पर जनता की तीखी प्रतिक्रिया इसकी प्रमुख कड़ियां हैं। सिख गुरुओं से उसके संवाद, उसकी उदारता, नादिरा बेगम, राणा दिल, रोशनआरा, जहांआरा जैसे पात्रों से दारा के व्यक्तित्व के विविध पक्ष उभरते हैं। भतीजी जेब-उन-निसा का दारा से गहरा स्नेह था।

दारा ने बनारस के पंडितों के सहयोग से संस्कृत ग्रंथों के फारसी अनुवाद की एक महत्वपूर्ण परंपरा को आगे बढ़ाया। 'सिर्र-ए-अकबर' जैसी महत्वपूर्ण कृति के अलावा उपनिषदों के फारसी अनुवाद ने उन्हें पश्चिमी बौद्धिक दुनिया तक पहुंचाने का महत्वपूर्ण मार्ग बनाया। लियोनार्ड कोहेन की पंक्तियों से अध्यायों की शुरुआत पुस्तक की विशिष्ट शैली का प्रमाण है।

पवनसुत का आत्मीय आख्यान

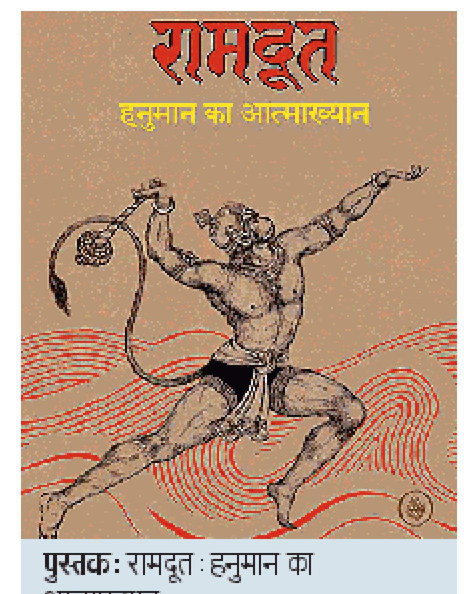

पुस्तक: रामदूत : हनुमान का आत्माख्यान
लेखक: त्रिलोक नाथ पांडेय
प्रकाशक: राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.
मूल्य: 399 रुपये

रामकथा भारतीय साहित्य और लोकमानस की ऐसी अक्षय धारा है, जो युगों से निरंतर प्रवाहित होते हुए प्रत्येक युग में अपने भीतर नए अर्थ और नए भावों को उजागर करती रही है। इस श्रद्धेय कथा-परंपरा में हनुमान जी का चरित्र अपनी अनन्य भक्ति, विनम्रता, सेवा-भाव और अदम्य पराक्रम के कारण विशेष महत्व रखता है। वे प्रभु श्रीराम के परम भक्त और दूत होने के साथ भक्ति में विनय, सेवा में समर्पण और कर्तव्य में पराक्रम के अनुपम आदर्श हैं।

हनुमान जी के विराट व्यक्तित्व और प्रभु श्रीराम के प्रति निष्काम समर्पण को केंद्र में रखकर त्रिलोक नाथ पांडेय की 'रामदूतः हनुमान का आत्माख्यान' रामकथा को एक आत्मीय और विशिष्ट दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती है। इसका सबसे आकर्षक पक्ष इसका आत्मकथात्मक विन्यास है, जिसमें हनुमान जी की दृष्टि से रामकथा के परिचित प्रसंगों को उनके अनुभवों और भावनाओं के साथ प्रस्तुत किया गया है। हनुमान जी के जीवन और उनके अनुभवों की कथा आगे बढ़ते हुए उस महत्वपूर्ण प्रसंग तक पहुंचती है, जब उनकी पहली भेंट राम और लक्ष्मण से होती है। उन्हें व्याकुल देखकर हनुमान का हृदय करुणा से भर उठता है। ब्राह्मण-वेश में भगवान राम से संवाद के बाद उन्हें ज्ञात होता है कि वे अयोध्या के राजकुमार राम हैं और सीता का अपहरण हो चुका है। सूर्यदेव के संकेतों और हनुमान के अंतर्मन के भावों के माध्यम से लेखक ने इस प्रसंग को आध्यात्मिक संवेदना दी है। आगे हनुमान राम-लक्ष्मण की सुग्रीव से भेंट कराकर मैत्री और सहयोग का सेतु बनते हैं, जो अंततः औपचारिक मैत्री-संधि में परिणत होता है।

प्रस्रवण पर्वत का प्रसंग राम के बड़प्पन और हनुमान के प्रति उनके सम्मान को उजागर करता है। यह संवाद राम के उस उदात्त व्यक्तित्व को सामने लाता है, जो प्रेम को बंधन नहीं, सम्मान और उत्तरदायित्व का रूप देता है। सीता की खोज के बाद हनुमान जब उनका चूड़ामणि लेकर राम के पास लौटते हैं, तो दृश्य भावुक हो उठता है। चूड़ामणि को हृदय से लगाकर राम का सीता और दशरथ की स्मृतियों में डूबना तथा रावण के विरुद्ध युद्ध का संकल्प लेना लेखक ने अत्यंत सजीवता से उकेरा है।

हनुमान जैसे सर्वज्ञात चरित्र को केवल चमत्कारों और शक्ति के सहारे देखने के बजाय उनके विचार, भावनाओं, संबंधों और निर्णयों की दृष्टि से मानवीय धरातल पर प्रस्तुत करता उपन्यास।

त्योहारी सीजन में 2.5 लाख अस्थायी नौकरियां सृजित होंगी

मुंबई: त्योहारी सीजन के दौरान देश में 2-2.5 लाख अस्थायी और गिग नौकरियां सृजित होने की संभावना है। वैश्विक टेक्नोलाजी एंड डिजिटल टैलेंट समाधानप्रदाता एनएलबी सर्विसेज ने एक रिपोर्ट में बताया कि इसमें वार्षिक आधार पर 15-20 प्रतिशत की वृद्धि होने की उम्मीद है। ई-कामर्स, क्विक कामर्स, खुदरा, लाजिस्टिक्स, हास्पिटालिटी, यात्रा और उपभोक्ता सेवा कारोबार के लिए त्योहारी सीजन सबसे अधिक मांग वाला समय होता है। (प्रेट्र)

2047 तक विकसित भारत का लक्ष्य हासिल करने के लिए ज्यादा वित्तीय अनुशासन, ज्यादा पूंजी आकर्षित करने वाले सुधारों और बेहतर मैन्यूफैक्चरिंग क्षमताओं की जरूरत है।

– उदय कोटक, दिग्गज बैंकर

उपभोक्ता वस्तु लोन: शून्य ब्याज के आकर्षण से बचें, इन बातों का ध्यान रखें

आज बड़ी संख्या में लोग उपभोक्ता वस्तुएं जैसे- फ्रिज, टीवी, वाशिंग मशीन, एयर कंडीशनर और स्मार्टफोन लोन पर लेते हैं। इसको कंज्यूमर ड्यूरेबल्स लोन (उपभोक्ता वस्तु लोन) भी कहा जाता है। ऐसा कर्ज लेने वालों में नए उपभोक्ताओं या पहली बार लोन लेने वालों की बड़ी संख्या होती है। कई सारी कंपनियां उपभोक्ता वस्तुओं पर शून्य ब्याज या बिना ब्याज लोन का आफर देती हैं। इस प्रकार के लोन बड़ी आसानी से मिल जाते हैं। हालांकि, कई बार ऐसे लोन पर चुकाई गई राशि कंपनी का आफर से अधिक हो सकती है। उपभोक्ता वस्तुओं पर लोन लेते समय ध्यान रखने योग्य बातें बता रहे हैं **मनोज कुमार...**

अतिरिक्त लागत के बारे में जानें

उपभोक्ता वस्तु बेचने वाली कंपनियां कई बार बिना ब्याज समान मासिक किस्त (ईएमआइ) की पेशकश करती हैं। ऐसे मामलों में सामान खरीदने वाले उपभोक्ता को कोई ब्याज नहीं देना पड़ता है, बल्कि निर्माता और व्यापारी खरीद के समय ब्याज को सब्सिडी के तौर पर उधार देने वाले बैंक या वित्तीय संस्थान को देते हैं। लेकिन उपभोक्ताओं को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि लेनदेन में कोई अतिरिक्त लागत तो नहीं है। बिना ब्याज वाले ईएमआइ प्रस्ताव में उपभोक्ता से प्रोसेसिंग फीस या सामान पर मिलने वाली छूट को खत्म करके ब्याज की वसूली की जा सकती है। ऐसे में लोन लेने से पहले प्रोसेसिंग फीस, सुविधा शुल्क, लागू कर और पूर्व-भुगतान फीस की अच्छी तरह पड़ताल कर लेनी चाहिए।

लोन देने वाले संस्थान की जांच करें

जानकारों का कहना है कि उपभोक्ताओं को इस प्रकार की वस्तुओं पर लोन देने वाले संस्थान की पड़ताल अच्छे से करनी चाहिए। उपभोक्ताओं को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि लोन देने वाला संस्थान आरबीआइ के पास पंजीकृत बैंक या गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी (एनबीएफसी) हो। यदि उधार देने वाला बैंक या एनबीएफसी आरबीआइ के पास पंजीकृत नहीं है तो वह आपके डाटा के साथ खिलवाड़ कर सकता है जिससे आपकी वित्तीय सुरक्षा को खतरा हो सकता है। साथ ही लोन देने वाले बैंक या एनबीएफसी को केवल आवश्यक डिजिटल डाटा की सहमति प्रदान करें।

जरूरत पर ही करें खरीदारी

विशेषज्ञों का कहना है कि पहली बार औपचारिक वित्तीय प्रणाली में प्रवेश के लिए उपभोक्ता वस्तु लोन एक बेहतर विकल्प है। ऐसे लोन की समय पर अदायगी के जरिये एक उपभोक्ता अपना अच्छा क्रेडिट प्रोफाइल बना सकता है। लेकिन कई बार ऐसे में लोन में छिपी हुई लागत होती है जो इसको काफी महंगा बना देती है और पुनर्भुगतान में दिक्कत हो सकती है। ऐसे में जरूरत पड़ने पर ही उपभोक्ता वस्तुएं लोन पर खरीदें। यदि जरूरी न हो तो ऐसी खरीदारी को स्थगित करना अधिक समझदारी भरा फैसला हो सकता है।

40% से अधिक न हो कुल ईएमआइ

कई बार लोग पहले से ही ईएमआइ चुका रहे होते हैं और नई उपभोक्ता वस्तुएं लोन पर लेने की योजना बनाते हैं। तमाम वित्तीय सलाहकारों का मानना है कि किसी भी व्यक्ति पर उसकी कुल आय का 40 प्रतिशत से अधिक ईएमआइ नहीं होना चाहिए। ऐसे में लोन पर उपभोक्ता वस्तु लेने से पहले अपनी पुरानी ईएमआइ का ध्यान रखना चाहिए और सुनिश्चित करना चाहिए कि नया लोन लेने के बाद कुल ईएमआइ 40 प्रतिशत से अधिक न हो।

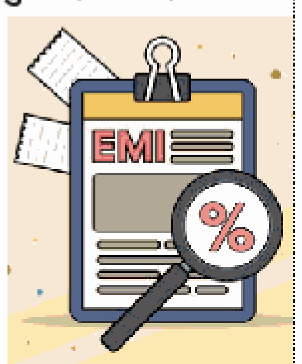

खाते में पर्याप्त पैसा हो

ऐसे लोन के मामले में अधिकांश बैंक या वित्तीय संस्थान उपभोक्ताओं को आटो-डेबिट (खाते से अपने आप पैसा कटना) का विकल्प देते हैं। समय पर मासिक किस्त के भुगतान के लिए अपने संबंधित बैंक खाते में पर्याप्त पैसा रखें। यदि किसी कारणवश आटो-डेबिट विफल हो जाता है तो 24-48 घंटे के भीतर मैन्युअल भुगतान करके बैंक या वित्तीय संस्थान को सूचित करें। अगले क्रेडिट-ब्यूरो रिपोर्टिंग चक्र से पहले बकाया चुकाने से शुल्क और क्रेडिट स्कोर के नुकसान को सीमित किया जा सकता है।

जागरण इन्फो

रिवार्ड प्वाइंट्स आपकी संपत्ति नहीं

एक बड़े बैंक ने अपने प्रीमियम क्रेडिट कार्ड के नियम बदल दिए हैं। आगे से ये कार्ड सिर्फ उन ग्राहकों के पास रहेगा, जो या तो जमकर खर्च करते हैं या बैंक के साथ बड़ी 'रिलेशनशिप वैल्यू' बनाए रखते हैं। बाकी सबका कार्ड बंद या डाउनग्रेड कर दिया जाएगा। इस पर प्रतिक्रिया गजब की रही है। इनमें सैकड़ों मैसेज तक लंबे-लंबे थ्रेड, सुबूत के तौर पर घुमाए जा रहे रिलेशनशिप मैनेजर के ईमेल के स्क्रीनशाट और आरबीआइ में शिकायत करने की बातें शामिल हैं। इस गुस्से का कुछ हिस्सा जायज है। अगर कोई बैंक सालाना फीस वसूल ले और साल पूरा होने से पहले ही ग्राहकों से कहे कि आप इस क्लब के लायक नहीं हैं, तो उसने एक ऐसे वादे के पैसे लिए हैं जिससे वो अब पीछे हट चुका है।

धीरेंद्र कुमार, संपादक, हिंदी डाट वैल्यूरिसर्चआनलाइन डाट काम

बोनस

मैं आपको इस बारे में लिखना नहीं चाहता। मुझे जिस बात ने हैरान किया, वो थी इसमें लगाई जा रही मेहनत। अगर आप वो थ्रेड पढ़ें, तो आपको ऐसा स्तर मिलेगा जो किसी अच्छी निवेश रिसर्च टीम के लायक है। लोगों ने अपने खर्च को ट्रैक करने के लिए एक्सेल शीट बना ली हैं। उन्हें पता है कि कौन-कौन सी श्रेणी गिनी जाती है और सेटलमेंट कैसे किसी ट्रांजेक्शन को अगले वित्त वर्ष में धकेल सकता है। उन्होंने सारी बारीक शर्तें पढ़ी हैं और समझी भी हैं। ये उस सवाल पर लगातार चलने वाला आंकड़ों से भरा विश्लेषण है, जो उनके लिए बहुत अहम है।

अब इन्हीं लोगों में से किसी एक से पूछिए कि उनके म्यूचुअल फंड का खर्च अनुपात क्या है या उनका पोर्टफोलियो इक्विटी और फिक्स्ड इनकम में कैसे बंटा है। मैंने ऐसे प्रयोग किए हैं और मुझे जवाब पता है। इसकी वजह बेवकूफी या आलस नहीं है। क्रेडिट कार्ड का प्रोग्राम एक ऐसे गेम की तरह बनाया जाता है जिसका फायदा फौरन मिलता है। तब आपको लगता है कि आपने कुछ जीत लिया। निवेश में ऐसा कोई रोमांच नहीं है। इस हफ्ते नतीजा देने वाले गेम और 20 साल में नतीजा देने वाले गेम में से चुनने को कहा जाए, तो लोग तेज गेम चुनेंगे। वित्तीय उद्योग यह बात अच्छी तरह जानता है।

सुस्त गेम का हिसाब लगाना भी फायदे का काम है। 50 लाख के पोर्टफोलियो पर साल का 0.5 प्रतिशत लेने वाले फंड और 1.5 प्रतिशत लेने वाले फंड के बीच का फर्क पहले ही साल में 50,000 है। चूंकि ये रकम कभी निवेश ही नहीं होती, इसलिए हर अगले साल ये फासला बढ़ता जाता है। दो हफ्ते की वो मेहनत, अगर अपने फंड की लागत और एसेट एलोकेशन पर लगाई जाए, तो वो उन सारे रिवार्ड प्वाइंट्स से ज्यादा कीमती है जो आप जिंदगी भर में कमाएंगे।

बैंक के खुद के नोटिस में कार्डधारकों से कहा गया कि ये कार्ड एक प्रोडक्ट नहीं, बल्कि एक रिश्ते का आईना है। बात बिल्कुल सही है और दिक्कत भी बिल्कुल यही है। रिश्ता वो चीज है जिसे सामने वाला कभी भी खत्म कर सकता है। तो इनमें से असल में आपका क्या है? प्वाइंट, टियर, लाउंज एक्सेस और रिलेशनशिप स्टेटस आपकी संपत्ति नहीं हैं।

म्यूचुअल फंड में आपकी यूनिट और किसी कंपनी में आपके शेयर आपके हैं। आपको कभी ऐसा ईमेल नहीं आएगा कि पर्याप्त सक्रियता न बनाए रखने के चलते आपको बाहर कर दिया गया है। कोई स्कीम मर्ज हो सकती है या बंद हो सकती है, लेकिन पैसा आपका ही रहता है और आपके पास लौट आता है। वैल्यू घटेगी-बढ़ेगी, लेकिन वो बाजार का चलना है, किसी बैंक का आपसे हक छीनना नहीं।

टाटा संस की लिस्टिंग पर क्यों अड़ा है आरबीआइ

शेयर बाजारों में लिस्टिंग के बाद टाटा संस की फंडिंग और निवेश के तरीके पर होगी ज्यादा निगरानी

- टाटा संस के लाइसेंस सरेंडर आवेदन को खारिज कर चुका है केंद्रीय बैंक
- एसपी समूह ने भी किया लिस्टिंग का समर्थन, विरोध में सिर्फ नोएल टाटा

जागरण ब्यूरो, नई दिल्ली: आरबीआइ टाटा संस को शेयर बाजारों में सूचीबद्ध (लिस्टिंग) कराने पर क्यों अड़ा हुआ है, यह सवाल गुरुवार की बोर्ड बैठक और शुक्रवार को शापूर मिस्त्री की चिट्ठी के बाद और तीखा हो गया है। समूह के चेयरमैन एन चंद्रशेखरन को पांच साल का नया कार्यकाल मिलता नजर आ रहा है। नोएल टाटा अकेले विरोध में खड़े रहे और शापूरजी पलोनजी (एसपी) समूह के चेयरमैन शापूर मिस्त्री ने पत्र जारी कर लिस्टिंग को अब नैतिक अनिवार्यता बता दिया है। इससे साफ है कि समूह का सबसे बड़ा आंतरिक विवाद यही है, जबकि आरबीआइ के 11 सितंबर के रुख से ही साफ हो गया है कि अपर लेयर एनबीएफसी होने और ग्रुप कंपनियों में निवेश के कारण अप्रत्यक्ष पब्लिक फंड मिलने के कारण टाटा संस का शेयर बाजार में उतरना अनिवार्य है।

इस पूरे प्रकरण की शुरुआत सितंबर 2022 में तब हुई, जब आरबीआइ ने टाटा संस को अपर लेयर एनबीएफसी और कोर निवेश कंपनी के रूप में चिह्नित किया था। अपर लेयर एनबीएफसी की श्रेणी में वो कंपनियां शामिल है जिनकी परिसंपत्तियों का आकार एक लाख करोड़ रुपये से ज्यादा है और जो देश के वित्तीय ढांचे के लिए महत्वपूर्ण हैं। आरबीआइ के नियमों के मुताबिक, ऐसी कंपनियों को तीन साल के भीतर शेयर बाजार में सूचीबद्ध होना अनिवार्य है।

टाटा संस की संपत्ति एक लाख करोड़ रुपये की सीमा से काफी ऊपर, करीब दो लाख करोड़ रुपये है। ऐसा नहीं है कि टाटा संस निदेशक मंडल शुरू से ही आरबीआइ के नियमों के पालन करने के पक्ष में था। जब तक संभव हुआ, इसको टालने की कोशिश की गई। यहां तक कि कंपनी ने 2024 में कर्ज चुकाकर रजिस्ट्रेशन सरेंडर करने की कोशिश की गई, ताकि एनबीएफसी के दायरे से बाहर निकला जाए। लेकिन आरबीआइ ने 11 सितंबर 2026 को वह अर्जी खारिज कर दी।

आरबीआइ का तर्क है कि टाटा समूह की सूचीबद्ध कंपनियां बाजार से सार्वजनिक फंड जुटाती हैं और उनमें से कुछ टाटा संस में हिस्सेदारी भी रखती हैं। इसलिए होल्डिंग कंपनी को अप्रत्यक्ष रूप से सार्वजनिक फंड मिलता है। लिहाजा टाटा संस की भी पूरी व सतर्क निगरानी होनी चाहिए।

बाजार और निवेशक दोनों को सीधा फायदा होगा

मोटे तौर पर माना जा रहा है कि टाटा संस की लिस्टिंग से बाजार और निवेशकों दोनों को सीधा फायदा होगा। लिस्टिंग के बाद आम निवेशक समूह की टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज (टीसीएस), टाटा मोटर्स या टाटा स्टील जैसी कंपनियों से आगे बढ़ कर अब मुख्य होल्डिंग कंपनी में निवेश कर सकेंगे। टाटा स्टील, टाटा केमिकल्स और टाटा पावर जैसी लिस्टेड कंपनियां टाटा संस में हिस्सेदारी रखती हैं। लिस्टिंग के बाद इनके बाजार मूल्य पर भी सकारात्मक असर पड़ने की संभावना विशेषज्ञ जता रहे हैं। साथ ही स्वतंत्र निदेशक, सेबी के नियमों के मुताबिक दी जाने वाली जानकारी और बाजार के नियमों का पालन करने से पूरे समूह में गवर्नेंस का स्तर और बेहतर होगा। टाटा संस खुद सेमीकंडक्टर या एअर इंडिया जैसे बड़ी परियोजनाओं के लिए बाजार से पूंजी जुटा सकेगी।

टाटा ट्रस्ट्स के पास 66% हिस्सेदारी

नोएल टाटा और टाटा ट्रस्ट्स के लिस्टिंग के विरोध के पीछे सबसे बड़ा तर्क यह है कि इनके पास टाटा संस में करीब 66 प्रतिशत हिस्सेदारी है और अभी इसके कामकाज पर उनका सबसे ज्यादा नियंत्रण है। लिस्टिंग के बाद बाजार नियामक के मुताबिक बहुत कुछ करना होगा। बाजार में प्रवेश के बाद हर तिमाही नतीजों का दबाव रहेगा, जिससे दीर्घकालिक निवेश योजनाओं पर काम करना मुश्किल होगा। ऐसे में जब टाटा ट्रस्ट्स का नियंत्रण कमजोर होगा तो अनचाहे अधिग्रहण का खतरा भी बढ़ेगा। नोएल टाटा का कहना है कि इससे टाटा संस का सौ साल से चला आ रहा चरित्र बदल जाएगा।

भारत में एक्सिस बैंक के साथ सेवा शुरू कर सकती है एपल पे

मुंबई, रायटर: अमेरिका की दिग्गज टेक्नोलाजी कंपनी एपल भारत में अपनी पेमेंट सेवा एपल पे की शुरुआत एक्सिस बैंक के क्रेडिट कार्ड के साथ कर सकती है। सूत्रों के अनुसार, कंपनी अन्य बैंकों के साथ भी गठजोड़ करने में जुटी है। भारत अभी उन बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है, जहां एपल पे की सेवा अभी उपलब्ध नहीं है। एक्सिस बैंक भारत का चौथा सबसे बड़ा क्रेडिट कार्ड जारी करने वाला बैंक है।

सूत्रों के अनुसार, एपल पे एक्सिस बैंक के बड़े प्रतिस्पर्धियों एचडीएफसी बैंक और एक्सिस बैंक से भी बातचीत कर रहा है। हालांकि, अभी तक वाणिज्यिक शर्तों पर सहमति नहीं बन पाई है। इस संबंध में एपल, एचडीएफसी बैंक और एक्सिस बैंक ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी है। काउंटरप्वाइंट रिसर्च के अनुसार, 2022 के बाद से भारत के स्मार्टफोन बाजार में एपल की हिस्सेदारी दोगुना बढ़कर आठ प्रतिशत हो गई है और यह उसके बड़े बाजारों में से एक है।

राष्ट्रीय फलक

आने वाले वर्षों में क्वालकाम, इंटेल जैसी कंपनियां बनाएंगे भारतीय युवा: वैष्णव

अश्विनी वैष्णव।

केंद्रीय आइटी मंत्री बोले, भारत की सेमीकंडक्टर नीति में भरोसा जता रही वैश्विक कंपनियां

नई दिल्ली, प्रेट्र: केंद्रीय इलेक्ट्रानिक्स एवं आइटी मंत्री अश्विनी वैष्णव का कहना है कि भारत की भारत की सेमीकंडक्टर रणनीति में आत्मविश्वास के संकेत मिल रहे हैं। इसका कारण यह है कि देश में पांच सेमीकंडक्टर इकाइयों में वाणिज्यिक उत्पादन शुरू हो गया है और वैश्विक कंपनियों नए निवेश की कतार में लगी है। उन्होंने भरोसा जताया कि स्टार्टअप में कार्यरत भारतीय युवा आने वाले वर्षों में क्वालकाम और इंटेल जैसी बड़ी कंपनियां बनाएंगे।

एक साक्षात्कार में वैष्णव ने बताया कि कई देश भारत को एक विश्वसनीय साझेदार मानते हैं, लेकिन सेमीकंडक्टर उद्योग को संभावित साइबर हमलों और व्यवधानों के प्रति सतर्क रहना चाहिए। पिछले चार से पांच वर्षों में भारत की निर्माण क्षमताओं के प्रति वैश्विक धारणा में बदलाव आया हैं। अब परियोजनाएं वाणिज्यिक उत्पादन की ओर बढ़ रही हैं। वैश्विक सीईओ भारत में निवेश करने के लिए तैयार हैं। एक सीईओ को उनकी कंपनी के बोर्ड ने भारत की सेमीकंडक्टर योजनाओं में पूंजी लगाने के लिए अधिकृत किया है। यह केवल पहला कदम है, बहुत कुछ करना बाकी है। सेमीकंडक्टर 2.0 नीति के तहत सरकार 1,27,500 करोड़ का भारी पूंजी प्रोत्साहन प्रदान कर रही है। इससे लगभग 11-12 अरब डालर के निवेश की रुचि उभरी है। सरकार 200 चिप-डिजाइन स्टार्टअप को उद्यम फंडिंग प्रदान करने व एक लाख तकनीशियनों को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य बना रही है।

यूपीआइ पेमेंट लेने में अभी से करने लगे आनाकानी

जागरण टीम, नई दिल्ली

- मप्र में व्यापारियों ने 23 सितंबर को नो-यूपीआइ डे मनाने का किया एलान

दो हजार रुपये से अधिक के यूपीआइ भुगतान पर 15 अक्टूबर से मर्चेंट डिस्काउंट रेट (एमडीआर) लागू होना है, लेकिन अभी से इसका विरोध होने लगा है। गाजियाबाद में व्यापारी यूपीआइ से भुगतान लेने में आनाकानी करने लगे हैं तो झांसी में कुछ पेट्रोल पंपों ने यूपीआइ से पेमेंट नहीं लेने की सूचना चस्पा कर दी है। हरियाणा के कई जिलों में पेट्रोल पंपों पर रात के समय स्कैनर व्यवस्था काफी कम कर दी गई है। मध्य प्रदेश के व्यापारियों ने 23 सितंबर को नो-यूपीआइ दिवस मनाने का निर्णय लिया है। उस दिन वे यूपीआइ से भुगतान नहीं लेंगे।

राजधानी दिल्ली, पंजाब, उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, छत्तीसगढ़ समेत कई राज्यों में इसका कोई असर नहीं है, लेकिन, मध्य प्रदेश के साथ हरियाणा और उत्तर प्रदेश में कई जगहों पर विरोध दिखने लगा है। मध्य प्रदेश के 125 व्यापारी संगठनों ने शनिवार को इंदौर में बैठक कर 23 सितंबर को नो-यूपीआइ दिवस मनाने का निर्णय लिया है। मध्य प्रदेश पेट्रोलियम डीलर्स एसोसिएशन ने कहा है कि पेट्रोल पंप 16 अक्टूबर से दो हजार रुपये से अधिक के यूपीआइ भुगतान स्वीकार नहीं करेंगे। एसोसिएशन के अध्यक्ष अजय सिंह ने कहा कि हमने अपने राज्य स्तरीय समन्वयक को भी पत्र लिखा है। झांसी में कुछ पेट्रोल पंपों पर यूपीआइ के जरिये दो हजार से अधिक का पेट्रोल-डीजल नहीं देने का नोटिस चस्पा कर दिया गया है। हालांकि झांसी पेट्रोल-डीजल एसोसिएशन के अध्यक्ष राजीव बब्बर का कहना है कि संगठन स्तर पर ऐसा कोई निर्णय नहीं लिया गया है। पंप पर लगी सूचनाएं संचालकों का व्यक्तिगत फैसला हो सकती हैं। गाजियाबाद में कुछ दुकानदारों ने ग्राहकों से नकदी की मांग करनी शुरू कर दी है। एक कन्फेक्शनरी शाप के बाहर नोटिस लगाया गया है कि यूपीआइ से भुगतान स्वीकार नहीं किया जाएगा। क गाजियाबाद पेट्रोलियम डीलर एसोसिएशन के पूर्व महामंत्री बृजमोहन सिंघल का कहना है कि पहले क्रेडिट कार्ड से भुगतान पर भी फ्लैट पांच रुपये पंप संचालक के खाते से कटते थे, जो सरकार वापस भेजती थी।

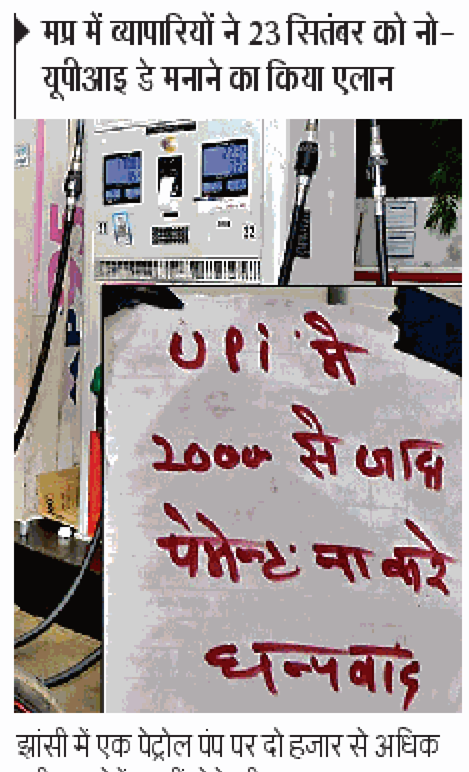

झांसी में एक पेट्रोल पंप पर दो हजार से अधिक यूपीआइ पेमेंट नहीं लेने की सूचना। जागरण

त्योहारों से पहले चीनी भंडारण सीमा 15 दिन से बढ़ाकर 30 दिन की

- अगस्त में 65 रुपये प्रति किलो के उच्च स्तर से चीनी की खुदरा कीमत अब 58.50 रुपये
- नए चीनी सत्र में गन्ने का उचित एवं लाभकारी मूल्य बढ़कर 365 रुपये प्रति क्विंटल होगा

नई दिल्ली, प्रेट्र: केंद्र सरकार ने आगामी त्योहारी सीजन और चीनी की बढ़ती मांग को देखते हुए थोक उपभोक्ताओं के लिए चीनी भंडारण की सीमा 15 दिन से बढ़ाकर 30 दिन कर दी है। खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण विभाग के अनुसार, 10 टन से अधिक मासिक खपत वाले औद्योगिक उपभोक्ता अब 30 दिनों की जरूरत के बराबर चीनी रख सकेंगे। हालांकि, पहले 15 दिनों से अधिक का अतिरिक्त भंडार केवल टैरिफ रेट कोटा (टीआरक्यू) या एडवांस आथराइजेशन स्कीम (एएएस) के तहत आयातित चीनी से ही रखा जा सकेगा। खुले बाजार से खरीदी गई चीनी के लिए 15 दिनों की खपत की सीमा बरकरार रहेगी।

सरकार ने टीआरक्यू के तहत 10 लाख टन चीनी आयात की अनुमति दी है। साथ ही एएएस के तहत निर्यात के लिए खरीदी गई चीनी की घरेलू बिक्री की अनुमति दी गई है। भंडार पर निगरानी के लिए थोक उपभोक्ताओं को प्रत्येक शुक्रवार आनलाइन पोर्टल पर चीनी स्टाक की जानकारी देनी होगी। सरकार ने कहा कि यह फैसला उपभोक्ताओं संग चर्चा के बाद लिया गया है। सरकार ने बताया कि मिल स्तर पर चीनी की कीमतें करीब 25 प्रतिशत घटी हैं, लेकिन खुदरा कीमतों में लगभग 10 प्रतिशत ही कमी आई है। अगस्त में 65 रुपये प्रति किग्रा के उच्च स्तर से खुदरा कीमत 58.50 रुपये है। सरकार ने कम कीमतों का लाभ उपभोक्ताओं तक पहुंचाने की अपील की। एक अक्टूबर से शुरू होने वाले नए चीनी सत्र में गन्ने का उचित व लाभकारी मूल्य (एफआरपी) बढ़कर 365 रुपये प्रति क्विंटल होगा।

सब्सिडी वाले सिलिंडर के लिए एक अक्टूबर से आधार सत्यापन जरूरी

27.43 करोड़ ग्राहक करा चुके हैं सत्यापन, 210 रुपये सब्सिडी मिल रही

- ई-केवाईसी नहीं कराने पर सिलिंडर मिलेगा, लेकिन सब्सिडी का लाभ नहीं

नई दिल्ली, प्रेट्र: घरेलू एलपीजी सिलिंडर पर सब्सिडी का लाभ लेने के लिए एक अक्टूबर से आधार बायोमीट्रिक प्रमाणीकरण पूरा करना जरूरी होगा। सरकार का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सब्सिडी का लाभ केवल पात्र उपभोक्ताओं को मिले और फर्जी या डुप्लीकेट कनेक्शन के जरिए इसका दुरुपयोग न हो। जिन ग्राहकों ने पहले ही आधार बायोमीट्रिक सत्यापन या ई-केवाईसी करा लिया है, उन्हें दोबारा प्रक्रिया पूरी करने की जरूरत नहीं होगी। पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय के अनुसार, 19 सितंबर तक 27.43 करोड़ सक्रिय घरेलू एलपीजी ग्राहकों यानी 89.9 प्रतिशत उपभोक्ताओं का आधार बायोमीट्रिक सत्यापन पूरा हो चुका था। सरकार ने इसके लिए 30 जून की समयसीमा तय की थी, जिसे बाद में बढ़ाकर 14 सितंबर किया गया।

सितंबर 2026 में 14.2 किलो के घरेलू एलपीजी सिलिंडर पर करीब 210 रुपये की अप्रत्यक्ष सब्सिडी मिल रही है। मंत्रालय के मुताबिक, जिन उपभोक्ताओं ने अब तक सत्यापन नहीं कराया है, वे इसे पूरा करने के बाद सब्सिडी वाले सिलेंडर की बुकिंग कर सकेंगे। उपभोक्ता एलपीजी डिस्ट्रीब्यूटर के शोरूम पर या सिलेंडर की डिलीवरी के समय डिलीवरी कर्मचारी के मोबाइल एप के जरिये आधार बायोमीट्रिक सत्यापन करा सकते हैं। तेल कंपनियों के मोबाइल एप से भी यह प्रक्रिया पूरी की जा सकती है। आधार बायोमीट्रिक प्रमाणीकरण नहीं कराने वालों को एलपीजी सिलिंडर की आपूर्ति बंद नहीं होगी, लेकिन उन्हें सब्सिडी का लाभ नहीं मिलेगा। ऐसे ग्राहकों को सिलेंडर बाजार मूल्य पर लेना होगा। ऐसे उपभोक्ताओं कोसंबंधित तेल कंपनी के डिजिटल प्लेटफार्म वेब पोर्टल, मोबाइल एप, वाट्सएप चैटबाट या आइवीआरएस जैसी सुविधाओं के जरिए पंजीकरण कराना होगा।

वीबी-जीराम जी योजना की जांच के लिए केंद्रीय टीम आज पहुंचेगी जमुई

जागरण संवाददाता, जमुई : वीबी-जीरामजी योजना के तहत हुए कार्यों में गड़बड़ी की खबर प्रकाशित होने के बाद केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा गठित दो सदस्यीय जांच टीम रविवार को बिहार के जमुई पहुंचेगी। टीम तीन दिनों (23 सितंबर) के प्रवास के दौरान जमुई में वीबी-जीराम जी योजना के क्रियान्वयन की जांच करेगी। टीम में सेक्शन आफिसर राकेश कुमार और प्रोजेक्ट आफिसर राज प्रसाद शामिल हैं। केंद्रीय टीम को संबंधित अभिलेख, कार्यस्थल व अधिकारियों तक पहुंच उपलब्ध कराने के लिए राज्य सरकार को सहयोग व व्यवस्था करने को कहा गया है।

मालूम हो कि दैनिक जागरण ने 17 सितंबर, 2026 के अंक में जमुई जिले में वीबी-जीराम जी योजना के तहत चल रहे कार्यों में अनियमितता को लेकर खबर प्रकाशित की थी। खबर में यह बताया गया था कि अफसरों और बिचौलियों की साठगांठ से पानी से लबालब तालाब में भी खोदाई दिखाकर भ्रष्टाचार किया जा रहा है।

साप्ताहिक राशिफल

रविवार, 13 सितंबर, 2026 से शनिवार 19 सितंबर, 2026 तक

पं. बी. बी. शास्त्री 'देवेश'

मेष (चू, चे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, आ) साझेदारी में सावधानी, नकरात्मक कार्य करने वालों से सावधान, शत्रुपक्ष प्रभावी, जीवन में प्रसन्नता, साहस से ऊर्जा की प्राप्ति, समाज में यश, लेखन में प्रगति, प्रणय में मधुरता, धर्म में रुचि, राजनैतिक अपयश, त्वचा व रक्त विकार योग, व्यय अधिक, शुभ अंक 6

वृष (इ, ऊ, ए, ओ, पा, वी, वू, वे, वो) पूंजी निवेश में सावधानी, माता-पिता के स्वास्थ्य के प्रति चिन्ता, धनागम में सफलता, अतिविश्वास से बचें, पारिवारिकजनों का सहयोग, शत्रुपक्ष प्रभावी साधनों की पूर्ति, सन्तान से सहयोग, प्रणय में सुख, धर्म में रुचि, वाद विवाद में विजय, व्यय अधिक, शुभ अंक 5

मिथुन (का, की, कू, घ, ङ, छ, के, को, हा) परिवार में समय बितायें, स्वार्थीजनों से सावधान, निजी संबंधों में सुधार, लेखन शिक्षा में प्रगति, धनागम में सुधार, लक्ष्य के प्रति सजगता, भवन साजसज्जा का योग, पूंजी निवेश में सावधानी, महिला से सहयोग, दाम्पत्य में सुख, राज्यपक्ष से सावधान, व्यय अधिक, शुभ अंक 4

कर्क (ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो) धन के आवागमन में सावधानी, निजी मतभेद, विदेश कार्य में प्रयास करे, अधिक विचारों से मन अशान्त, सन्तान से सहयोग, चयन में सफलता, धनागम में सफलता, कार्य के प्रति सजगता, परिस्थिति के अनुरुप कार्य करें, जीवनसाथी का मिलन, व्यय अधिक, कुसंग से बचें, शुभ अंक 2

सिंह (मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू, टे) कार्य क्षेत्र में सही निर्णय करें, दिनचर्या व्यस्ततम, धनागम में प्रयास, लक्ष्य के प्रति चेष्टारत् रहें, धन के आवागमन में सावधानी, सन्तान के लिये योजना, मित्रों से लाभ, क्रोध, ईर्ष्या से बचें, दाम्पत्य में सुख, अधिकारी से सहयोग, व्यय अधिक, शुभ अंक 1

कन्या (टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो) अर्थसाधन में सफलता, पूर्व प्रयास और युक्ति से लाभ, नकरात्मक कार्य करने वालों से सावधान, कार्य क्षेत्र में सहयोग से सफलता, शिक्षा में सफलता, भौतिक साधनों की पूर्ति, भावना कल्पना पर नियन्त्रण, दाम्पत्य में सुख, अधिकारी से सहयोग, व्यय अधिक, शुभ अंक 9

तुला (रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू, ते) सामाजिक कार्य योग, भूमि, भवन कार्य में सफलता, पूंजी निवेश में सावधानी, पारिवारिकजनों से सहयोग, सार्थक निर्णय से लाभ, प्रणय में मधुरता, युक्ति एवं तर्क से सफलता, खानपान पर ध्यान दें, स्थान पद परिवर्तन योग, राज्य पक्ष से सहयोग, व्यय अधिक, शुभ अंक 8

वृश्चिक (तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी, यू) अर्थसाधन में सफलता, निर्णय सलाह से करें, शिक्षा में सफलता, कल्पना और भावना की वृद्धि, लक्ष्य के प्रति सजगता साधनों की पूर्ति, अतिविश्वास से बचें, राज्यपक्ष से सावधान, सन्तान के लिये योजना, ध्यान से शांति, वाहन में सावधानी, आय में सुधार, शुभ अंक 7

धनु (ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा, भे) धनागम में सफलता पर धन के आवागमन में सावधानी, कार्य क्षेत्र में विस्तार, नवीन युक्ति और सोच के साथ कार्य करें, समाज में यश, वायु विकार, सिर दर्द योग, भावना पर नियंत्रण, संतान से अनबन, मित्रों से सावधान, दाम्पत्य में सुख, आय में सुधार, शुभ अंक 6

मकर (भो, जा, ज, खी, खू, खे, खो, गा, गी) अर्थसाधन में प्रयास, कार्यस्थल में परिवर्तन से लाभ, प्रयास से कार्य में सम्पन्नता, लक्ष्य के प्रति सजगता, लेखन कार्य में प्रगति, अतिविश्वास से बचें, खानपान पर सजग रहें, दाम्पत्य में सुख, धर्म में रुचि, त्वचा व रक्त विकार का योग, व्यय अधिक, शुभ अंक 5

कुम्भ (गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सा, दा) निर्णय सलाह से करें, साहस की वृद्धि, कार्य में देरी, अधिक विचारों से मन अशान्त, चयन में सफलता, खानपान पर ध्यान रखें, अतिविश्वास से बचें, भावना कल्पना पर नियन्त्रण, संतान से सहयोग, ससुराल से सहयोग, वाहन में सावधानी, आय में सुधार, शुभ अंक 4

मीन (दी, दू, थ, झ, दे, दो, चा, ची) नकरात्मक कार्य करने वालों से सावधान, निजी मतभेद, विदेश कार्य में अवरोध, लेखन में प्रगति, आलस्य से बचें, साधनों की पूर्ति, कार्य में समयानुसार सुधार करें, धनागम में प्रयास, शिक्षा, मित्रों से सहयोग, स्थान पद परिवर्तन, दाम्पत्य में सुख, व्यय अधिक, शुभ अंक 2

सर्वकार्येषु सर्वदा

परवडणाऱ्या दरात आरोग्यसेवा देण्याचा संकल्प

महापालिकेच्या मालकीची वापरात नसलेली इमारत स्थानिक महापालिकेने नमराहच्या समाजोपयोगी कार्यासाठी दिली. याच इमारतीत आज नमराहचे दहा खाटांचे रुग्णालय सुरू आहे. आरोग्यसेवा गरजू आणि मध्यमवर्गीय कुटुंबांना परवडणारी व्हावी, हा या प्रयत्नामागचा मुख्य उद्देश आहे. २०२२ मध्ये नमराह फाऊंडेशन आणि महानगरपालिका यांच्या संयुक्त विद्यमाने नमराह पॅथॉलॉजी लॅब आणि रुग्णालयाची स्थापना करण्यात आली. गेल्या चार वर्षांच्या काळात या माध्यमातून ४२ हजाराहून अधिक रुग्णांना सेवा देण्यात आली.

विविध वैद्यकीय तज्ज्ञ या रुग्णालयात येऊन रुग्णसेवा देतात. पैशांअभावी उपचार थांबणार नाहीत असा फाऊंडेशनला विश्वास आहे. फाऊंडेशनच्या आरोग्य उपक्रमातून अत्यल्प दरात तपासण्या आणि उपचार उपलब्ध करून देण्याचा प्रयत्न केला जातो. भविष्यात सवलतीच्या दरात दंतचिकित्सा आणि आधुनिक डायग्नोस्टिक सेंटर सुरू करण्याचे उद्दिष्ट आहे.

शिक्षण, आरोग्य, रोजगारासाठी लोकसेवा

करोना काळात आपल्या आसपासच्या लोकांना उपचारांसाठी करावी लागलेली वणवण बघून सांगली-मिरज परिसरातील काही कार्यकर्ते मदतीसाठी उभे राहिले. पण त्यांची ही तळमळ करोनाची महासाथ संपल्यावर आटली नाही तर तिथूनच पुढे वाढत गेली, गरजूंना परवडेल अशी आरोग्यसेवा मिळवून देण्याची कळकळ. त्यातूनच संस्थेचे समाजसेवेचे असिधारा व्रत विस्तारत गेले आहे.

करोना काळात असंख्य कुटुंबांसमोर एका बाजूला महासाथीची भीती आणि दुसऱ्या बाजूला उपचारांचा वाढता खर्च, अशी दुहेरी कोंडी होती. अशा परिस्थितीत सांगलीतील काही सामाजिक कार्यकर्त्यांनी रुग्णसेवेचा श्रीगणेशा केला. यातून उभी राहिली नमराह फाऊंडेशन. शिक्षण, आरोग्य आणि रोजगार या त्रिसूत्रीच्या आधारे संस्थेने समाजसेवेचा संकल्प केला.

करोना काळात सुरू झालेल्या या सेवाकार्याचा पुढे आरोग्य, शिक्षण, रोजगार, अन्नदान, व्यसनमुक्ती, रक्तदान आणि सामाजिक जनजागृती अशा विविध क्षेत्रांत विस्तार झाला. आज नमराह फाऊंडेशन म्हणजे माणूस केंद्रस्थानी ठेवून उभी राहिलेली सामाजिक बांधिलकीची चळवळ आहे. करोना महासाथीच्या काळात नमराह फाऊंडेशन आणि सांगली-मिरज-कूपवाड महानगरपालिका यांच्या संयुक्त विद्यमाने कोविड हॉस्पिटल व कोविड सेंटरच्या माध्यमातून रुग्णसेवा करण्यात आली. ती नागरिकांसाठी मोलाची ठरली.

करोनाचे संकट टळल्यानंतरही नमराहची रूग्णसेवा आणि सेवाभाव चर्चेत राहिला. यातून रूग्णालय उभारणीचा संकल्प कार्यकर्त्यांनी सोडला. महापालिकेच्या मालकीची वापरात नसलेली इमारत नमराहच्या समाजोपयोगी कार्यासाठी देण्याच्या स्थानिक नगरसेवक संतोष पाटील यांच्या प्रस्तावाला प्रशासन आणि महापालिका सदस्यांनी मान्यता दिली. याच इमारतीत आज नमराहचे दहा खाटांचे रूग्णालय अहोरात्र सुरू आहे. आरोग्यसेवा गरजू आणि मध्यमवर्गीय कुटुंबांना परवडणारी व्हावी, हा या प्रयत्नामागचा मुख्य उद्देश आहे. संकटाच्या काळात नफा किंवा व्यवसायापेक्षा माणसाचे जीवन महत्त्वाचे आहे, या भावनेतून सन २०२२ मध्ये नमराह फाऊंडेशन आणि महानगरपालिका यांच्या संयुक्त विद्यमाने नमराह पॅथॉलॉजी लॅब आणि रुग्णालयाची स्थापना करण्यात आली. गेल्या चार वर्षांच्या काळात या माध्यमातून ४२ हजारांहून अधिक रुग्णांना सेवा देण्यात आली.

रूग्णांची वैद्यकीय तपासणी, तसेच विविध चाचण्या 'ना नफा ना तोटा' या तत्वावर होत असल्याने गेल्या चार वर्षांत रूग्णांच्या खर्चात कपात होऊन त्यांच्या १२ कोटी ८९ लाख रूपयांची बचत झाली आहे.

रुग्णांची वैद्यकीय तपासणी, विविध चाचण्या ना नफा ना तोटा या तत्त्वावर होत असल्याने गेल्या चार वर्षांत रुग्णांच्या खर्चात मोठी कपात होऊन त्यांच्या १२ कोटी ८९ लाख रुपयांची बचत झाली आहे. विविध वैद्यकीय तज्ज्ञ या रुग्णालयात येऊन रूग्णसेवा देतात. आंतररुग्ण विभागात दहा खाटांची क्षमता आहे. पैशांअभावी उपचार थांबणार नाहीत असा फाऊंडेशनला विश्वास आहे.

नमराह फाऊंडेशनच्या आरोग्य उपक्रमातून अत्यल्प दरात तपासण्या आणि उपचार उपलब्ध करून देण्याचा प्रयत्न केला जात आहे. भविष्यात सवलतीच्या दरात दंतचिकित्सा आणि आधुनिक डायग्नोस्टिक सेंटर सुरू करण्याचे उद्दिष्ट आहे.

काही वृद्ध एकेकटे राहतात. त्यांना तसेच निराधारांना भुकेच्या वेळेला जेवण मिळत नाही. त्यांना अन्न पुरवण्याचा मुद्दा नमराहने उचलून धरला. त्यासाठी प्रत्येक घरातून सकाळी आणि संध्याकाळी निराधारांसाठी जेवण द्यायचे, अशी कल्पना पुढे आली. ती विकसित होऊन आज भुकेल्या वृद्धांना दोन वेळा ताजे आणि सकस अन्न घरपोच होत आहे. नमराह मस्जिद आणि नमराह फाऊंडेशनच्या माध्यमातून लंगर-ए-रहमानिया' हा उपक्रम राबविला जातो. ज्यांच्या घरातील चूल विझली आहे, त्यांच्या घरापर्यंत अन्नाची ऊब पोहोचविणे, ही या उपक्रमामागील खरी भावना आहे. भूक जात, धर्म, वर्ग बघत नाही. त्यामुळे धर्मापेक्षा माणुसकी मोठी हा संदेश अन्नदानातून अधोरेखित होतो.

लोक चारचौघांत सहज बोलताना, अथवा रागाला वाट करून देताना शिवीचा वापर करतात. त्यातून माता-भगिनींचा अवमान होतो. लोकांनी अपशब्द वापरले नाही, तर असा अवमान होणार नाही, या भूमिकेतून 'शिवीमुक्त कट्टा' हे अभियान सुरू करण्यात आले. यासाठी मोक्याच्या ठिकाणी फलकही लावण्यात आले. समाजपरिवर्तनाची सुरुवात स्वतःच्या भाषेपासून व्हावी, हा या उपक्रमामागील विचार आहे.

व्यसनाधीन व्यक्तीमुळे अनेक संसार उद्ध्वस्त होतात. शिक्षणाचा अभाव, बेरोजगारी, आर्थिक विवंचना आणि निराशा यांसारख्या कारणांमुळे तरुण व्यसनाच्या विळख्यात अडकतात. त्यांना दोष न देता त्यातून बाहेर पडण्यासाठी आधार देणे आवश्यक आहे. नमराह फाऊंडेशनच्या व्यसनमुक्ती शिबिरांमधून याच दिशेने प्रयत्न केला जातो.

कोविड काळात शिक्षणक्षेत्रावर मोठा परिणाम झाला. शाळा बंद झाल्या आणि ऑनलाइन शिक्षण हा पर्याय पुढे आला. मात्र सगळ्या विद्यार्थ्यांकडे स्मार्टफोन, इंटरनेट किंवा अभ्यासासाठी योग्य वातावरण नव्हते.

संस्थेपर्यंत कसे जाल?

मिरज रस्त्यावरील विश्रामबाग रेस्ट हाऊस नजीक रेल्वे उड्डाणपूल ओलांडल्यानंतर डाव्या बाजूला सह्याद्रीनगर येथे नमराह फाऊंडेशनची पॅथालॉजी लॅब व रुग्णालय आहे.

नमराह फाऊंडेशन

Namrah Foundation

या नावाने धनादेश काढावा. धनादेशामागे किंवा त्याबरोबर देणगीदाराने आपले संपूर्ण नाव, पत्ता, दूरध्वनी तसेच भ्रमणध्वनी क्रमांक लिहावा. संस्थेकडे ८० जी प्रमाणपत्र नाही.

ऑनलाइन देणगीसाठी तपशील

- **बँकेचे नाव :** कॉसमॉस बँक, शाखा-सांगली
- **चालू खाते क्रमांक :** ०८५१००१०८९३८
- **आयएफएससी :** सीओएसबी ००००८५

या सामाजिक विषमतेची जाणीव ठेवून नमराह स्टडी ग्रुपच्या माध्यमातून विद्यार्थ्यांना शैक्षणिक सुविधा उपलब्ध करून देण्यात आल्या. शिक्षकांसाठी प्रशिक्षण शिबिरे आयोजित करण्याबरोबरच शाळा दत्तक घेऊन तिच्या शैक्षणिक गुणवत्तेत सुधारणा करण्याचा प्रयत्नही करण्यात आला.

कोविडनंतर बेरोजगारी आणि उत्पन्नातील घट ही अनेक कुटुंबांसमोरील गंभीर समस्या ठरली. गरजू व्यक्तीच्या हाताला काम मिळाले आणि तिला स्वतःच्या पायावर उभे राहता आले, तर त्यातून आत्मविश्वास निर्माण होतो, स्वाभिमान वाढतो. याच विचारातून 'नमराह गारमेंट्स'सारख्या उपक्रमांच्या माध्यमातून रोजगाराच्या संधी निर्माण करण्याचा प्रयत्न करण्यात येत आहे. नमराह फाऊंडेशनच्या सामाजिक कार्यामध्ये रक्तदान शिबिरे, आरोग्य तपासणी शिबिरे आणि गरजू नागरिकांना वैद्यकीय मदत यांचाही समावेश आहे.

भविष्यात सेवा अधिक व्यापक करण्याच्या दिशेने नमराह फाऊंडेशनकडून विविध उपक्रमांचा संकल्प करण्यात आला आहे. यामध्ये- सवलतीच्या दरात दंतचिकित्सा सेवा, आधुनिक डायग्नोस्टिक सेंटर, आरोग्यसेवेचा विस्तार, शिक्षण क्षेत्रातील अधिक उपक्रम, रोजगारनिर्मिती, व्यसनमुक्ती आणि सामाजिक जनजागृती या क्षेत्रांवर भर देण्याचा संकल्प आहे. समाजाच्या गरजा बदलत असतात. त्यामुळे सामाजिक संस्थेचे कार्यही त्या गरजांनुसार विकसित झाले पाहिजे. नमराह फाऊंडेशनची वाटचाल याच व्यापक विचाराकडे असल्याचे दिसते.

रुग्णालयात उपचार घेणारा रुग्ण असो, जेवणाची वाट पाहणारा वृद्ध असो, व्यसनातून बाहेर पडण्यासाठी प्रयत्न करणारा तरुण असो, ऑनलाइन शिक्षणापासून वंचित विद्यार्थी असो किंवा रोजगाराच्या शोधात असलेला युवक असो-प्रत्येकाच्या गरजेनुसार सेवा उभी करण्याचा प्रयत्न या सेवाप्रवासातून दिसून येतो. जिथे गरज आहे, तिथे मदतीचा हात देण्यासाठी नमराहचे कार्यकर्ते प्रयत्नशील आहेतच, पण याच हातांना आता समाजाचीही साथ हवी आहे.

– दिगंबर शिंदे

लोकसत्ता
सर्वकार्येषु सर्वदा
बँकिंग पार्टनर
कॉसमॉस को-ऑपरेटिव्ह बँक लि. (मल्टिस्टेट शेड्यूल्ड बँक)

धनादेश येथे पाठवा... एक हजार किंवा त्याहून अधिक रुपयांची देणगी देणाऱ्यांची नावे 'लोकसत्ता'त प्रसिद्ध केली जातील.

मुंबई कार्यालय	महापे कार्यालय	ठाणे कार्यालय	पुणे कार्यालय	नागपूर कार्यालय	दिल्ली कार्यालय
लोकसत्ता, संपादकीय विभाग, मफतलाल सेंटर, सातवा मजला, नरिमन पॉइंट, मुंबई - ४०००२१, ०२२-६७४४०२५०	**संपादकीय विभाग,** प्लॉट नं. ईएल १३८, टीटीसी इंड. एरिया, एमआयडीसी, महापे, नवी मुंबई - ४००७१०. ०२२-२७६३९९००	**संपादकीय विभाग,** फ्लॅट नं.५, तिसरा मजला, होशबानो मॅन्शन, तनिष्क शोरूमच्या वर, गोखले रोड, नौपाडा ठाणे (प.) ४००६०२. ०२०-२५३८५१३२	**संपादकीय विभाग,** एक्स्प्रेस हाऊस, प्लॉट नं. १२०५/२/६, शिरोळे रस्ता, पुणे- ४११००४. ०२०-६७२४११२५	**संपादकीय विभाग,** प्लॉट नं. ३८, ऑडिसन ट्रेड सेंटर, अंबाझरी, नागपूर - ४४००१०, ०७१२ - २२३०४२१	**संपादकीय विभाग,** द इंडियन एक्स्प्रेस बिल्डिंग, बी१/ बी, सेक्टर १०, नॉएडा- २०१३०१. ०१२०- २०६६५१५००

नेते आहेत, पण मराठवाड्याचे नेतृत्व कुठे आहे?

सुहास सरदेशमुख

काही नेते खुजे असतात. मतदारसंघाबाहेरच्या समस्यांकडे आपण कशाला लक्ष घालायचे, अशी त्यांची वृत्ती असते. मराठवाड्यात अशा नेत्यांची संख्या खूप. त्यातल्या काहींचे पंख कापले जातात. काँग्रेसमध्ये प्रादेशिक पातळीवर नेतृत्व घडू देण्याची मुभा होती. किंबहुना असे प्रस्थापित नेते हीच ताकदही होती. पण १९८० च्या दशकात या विरोधात प्रश्न विचारणारा तरुण बाळासाहेब ठाकरेंनी उभा केला. पुढे सत्तामार्गे तो घरंगळत भ्रष्ट होत गेला. ती प्रश्न विचारण्याची धमक संपली. वयोगट बदलला. 'मराठवाड्यात नेतृत्व पोकळी निर्माण केली जाते आहे का', असा प्रश्न आता शिवसेना पक्षप्रमुख उद्धव ठाकरे यांनी उपस्थित केला आहे. क्षमता असणारे नेते आता संकुचित आणि अरुंद मार्गावरून प्रवास करत आहेत. नेतृत्वाची काटछाट हा पद्धतशीर डावच असल्याचे चित्र समोर येत आहे.

दोन उदाहरणे पाहू. शंकरराव चव्हाण मुख्यमंत्री होते तेव्हा अशोक चव्हाण यांचे वय होते १७ वर्षे. काँग्रेसमधील बलाढ्य नेत्याचे ते चिरंजीव. सध्या ते राज्यसभेत भाजपचे खासदार आहेत. अलीकडे ते सरसंघचालकांना फेसबुकसारख्या माध्यमातून वाढदिवसाच्या शुभेच्छा वगैरे देत असतात. देशभर काँग्रेसचा वरचष्मा होता, तेव्हा देशाच्या राजकारणाला आकार देण्याची क्षमता असणाऱ्या नेत्यांमध्ये शिवराज पाटील चाकूरकर यांचा दबदबा होता. लोकसभा सभापती आणि काँग्रेसच्या 'किचन कॅबिनेट'पर्यंतचा वावर, अशी त्यांची क्षमता. केंद्रीय गृहमंत्री म्हणून काम करताना एका बॉम्बस्फोटाच्या स्थळी पाहणी दरम्यान वारंवार कपडे बदलल्यामुळे झालेल्या टीकेनंतर त्यांना राजीनामा द्यावा लागला. पुढे त्यांच्या सूनबाई अर्चना पाटील यांना लातूरमधून भाजपची उमेदवारी मिळाली. त्यांना यश आले नाही. पण राजकीय 'करिअर' हे फक्त भाजपमध्येच घडू शकते, हा विचार काँग्रेसमधील नेत्यांमध्ये किती खोलवर रुजला याची ही उदाहरणे.

प्रस्थापित राजकीय पुढाऱ्यांची मोठी यादी मराठवाड्यात होती. यातील चौघे मुख्यमंत्री झाले. शंकरराव चव्हाण आणि विलासराव देशमुख (दोनदा), शिवाजीराव पाटील निलंगेकर, अशोकराव चव्हाण हे मराठवाड्यातून पुढे आलेले नेतृत्व. यातील शंकरराव चव्हाण वगळता तीन मुख्यमंत्र्यांना बदनाम होऊन पद सोडावे लागले होते. 'नीट'च्या पेपरफुटीचा लातूर पॅटर्न आता चर्चेत असला, तरी वैद्यकीय शिक्षण घेणाऱ्या मुलीचे गुण वाढवून दिले गेल्याचा आरोप होऊन निलंगेकर यांना पद सोडावे लागले. मराठवाड्याचे लाडके नेते विलासराव देशमुख यांनी मुंबई बॉम्बस्फोटानंतर पाहणी वेळी चित्रपट दिग्दर्शक राम गोपाल वर्मा यांना सोबत येऊ दिल्याचा आरोप झाला, त्यामुळे ते अडचणीत आले. अशोक चव्हाण यांचे 'आदर्श' सोसायटीतील घोटाळ्यात नाव पुढे आले आणि त्यांनाही पायउतार व्हावे लागले. याशिवाय हिंगोलीतील सातव कुटुंबावर तर काँग्रेस नेतृत्वाचे प्रेम होते. राजीव सातव यांच्याकडे तर राष्ट्रीय जबाबदारी देण्यात आलेली. पुढे त्यांच्या दुर्दैवी मृत्यूनंतर डॉ. प्रज्ञा सातव यांची काँग्रेसने विधान परिषदेवर आवर्जून निवड केली, पण तो कार्यकाळ संपण्यापूर्वीच राजीनामा देऊन त्यांनी भाजपमध्ये प्रवेश केला. तत्पूर्वी भाजप विस्ताराचा खेळ भास्करराव पाटील खतगावकरांनीही मांडून पाहिला. यातील निलंगेकरांचे नातू संभाजी पाटील निलंगेकर कौटुंबिक वादातून बाहेर पडून भाजपमध्ये गेले. तेव्हा गोपीनाथ मुंडे मराठवाड्यातील निर्णय घेत. पुढे संभाजी पाटील कॅबिनेट मंत्री झाले. आजही भाजपचे आमदार आहेत. पण त्यांचा ना मराठवाड्यात संपर्क, ना प्रश्न जाणून घेण्याची इच्छा. नेतृत्व म्हणून ते पुढे आले नाहीत. या भाजप भरतीच्या रांगेतून फक्त विलासराव देशमुख यांचे चिरंजीव अमित देशमुख यांनी अजून तरी काँग्रेसचा 'हात' सोडलेला नाही. किंवा कदाचित त्यांना सबुरीचा सल्ला देण्यात आलेला असू शकतो. यातून त्यांचा मराठवाड्यातील काँग्रेसचा काय उपयोग हा प्रश्न उरतोच. ते ना कधी आंदोलन करतात, ना एखादा प्रश्न हाती घेतात. प्रश्न धसाला लावण्याची वृत्ती तर कधी नव्हतीच. सगळी शक्ती मतदारसंघापुरतीच!

मुख्यमंत्री, केंद्रीय मंत्री, लोकसभा सभापती अशा सर्वोच्च पदांपर्यंत पोहोचलेले अनेक नेते मराठवाड्याने राज्याला दिले. मात्र आज याच मराठवाड्यातील नेतृत्वाची धार बोथट झाल्याचे चित्र आहे. पक्षांतर, सत्तेशी जवळीक आणि मतदारसंघापुरते मर्यादित झालेले राजकारण यामुळे मराठवाडा नेतृत्वहीन झाला आहे, असे दिसते आहे.

हे सारे घडविण्याचे एक तंत्र दिसते आहे. ते असे - नेत्याला बदनाम करायचे, अडचणीत आणायचे आणि शक्य झाले तर त्याला किंवा त्याच्या पुढच्या पिढीला भाजपमध्ये स्थान द्यायचे. हा राजकीय डाव वर्चस्ववादी तर आहेच, पण याहीपेक्षा श्यामाप्रसाद मुखर्जी आणि दीनदयाल उपाध्याय यांच्या वैचारिक शक्तीला आम्ही सारे शरण आलो आहोत, असा संदेश देण्यासाठी याचा अधिक वापर होतो. एवढेच नाही, काँग्रेस आणि अन्य पक्षातील नेते सत्ता आणि त्यातून मिळणाऱ्या पैशांसाठी कसेही वाकवले जाऊ शकतात, हा संदेशही भाजपला द्यायचा आहे. अशोकराव चव्हाण यांनी सरसंघचालकांना दिलेल्या वाढदिवसाच्या शुभेच्छा संदेशाकडे लोक या नजरेने पाहतात आणि मग समाजमाध्यमांवर टीका होते. ते पंतप्रधानांच्या वाढदिवसाला आवर्जून गेले तेव्हा त्यांच्याकडे मोदींनी ढुंकुनही पाहिले नव्हते, ही चित्रफीतही अनेकांच्या आजही स्मरणात आहे. सहकारातील भानगडींमधून प्रचंड संपत्ती मिळवल्यानंतर साखर कारखान्याच्या माध्यमातून बांधलेल्या मतदारसंघात कमळ दिसते ते असे; मग नेता काँग्रेसचा असो किंवा राष्ट्रवादीचा!

अजित पवार यांच्या निधनानंतर आणि तत्पूर्वीदेखील राष्ट्रवादीतील फुटीनंतरच्या घडामोडींच्या पार्श्वभूमीवर साखर कारखान्यांतून निर्माण होणारी संपत्ती आणि शिक्षण संस्थांचे व्यवस्थापन कोणाकडे जाणार, हे जवळपास सर्व नेत्यांना उमगले आहे. यामुळे मराठवाड्यातील बहुतांश पुढाऱ्यांनी सत्तेच्या जवळ जाण्यासाठी आपापली मुले भाजपमध्ये धाडली. जयप्रकाश दांडेगावकर यांचा मुलगा आतिश दांडेगावकर हे त्याचे एक उदाहरण. सहकार मंत्री बाबासाहेब पाटील, संजय बनसोडे हे आजीमाजी मंत्रीही सत्तेची उब घेत आहेत. पण प्रादेशिक प्रश्नावर या सहकार मंत्र्यांनी एकही बैठक घेतलेली नाही. धनंजय मुंडे यांचे नेतृत्व तर त्यांच्या वर्तनामुळे राजकीय पटलावरून भिरकावले गेले. यातील कोणीही मराठवाड्याच्या प्रश्नावर बोलत नाही. तशी कोणाची बिशादही नाही. राष्ट्रवादीतील प्रत्येक आमदार आपला नेता कोण याचा शोध घेत आहे. पण राष्ट्रवादीतून भाजपात जाणाऱ्यांमधील मराठवाड्यातील पहिली मोठी उडी मात्र राणा जगजीतसिंह पाटील यांच्या नावावर. ते आता 'मित्रा' संस्थेचे उपाध्यक्ष आहेत. सत्तेची ऊब कायम आहे. पण राजकीय निर्णय घेण्याची मुभा भाजपमध्ये कोणालाच नाही. तशी त्यांनाही असण्याची शक्यता कमीच.

राष्ट्रवादीतील नेत्यांना भाजपमध्ये आणण्याचे सोपे हत्यार 'ईडी'ची नोटीस हे होते. पूर्वी वापरले जाणारे हे शस्त्र आता गुळगुळीत झाले आहे. दोन्ही राष्ट्रवादीचे नेते आपापल्या राजकीय गुंत्यात एवढे अडकले आहे की, प्रादेशिक स्तरावर संघटना बांधणी करावी लागते, हेच ते विसरून गेले आहेत. या सगळ्या पोकळीत आपण मराठा नेते म्हणून मराठवाड्यात रुजू व्हावे असे सत्तेत असणाऱ्या एकनाथ शिंदे यांना वाटत होते. त्यांच्याकडून जरांगे यांना दिले जाणारे बळ याच धारणेतून होते, अशी चर्चा राजकीय व्यासपीठावर होतेच. पण जरांगे यांच्या १२ व्या उपोषणानंतर हे समीकरण पुन्हा बिघडले आहे. 'एक मराठा लाख मराठा' ही संख्यात्मक शक्ती दर्शवणारी घोषणा राजकीय बळ म्हणून वापरता येते याचे भान असणारे आणि थेट भाजपमध्ये गेले तर 'शेटजी-भटजी' पक्षाचा शिक्का बसेल आणि मराठा - मुस्लीमबहुल मतदारसंघात तो उपयोगाचा नाही, असे मानणारे लोक एकनाथ शिंदे यांच्याकडे वेगाने गेले. आणखीही त्या तयारीत आहेत. परिणामी फुटीनंतरच्या एकनाथ शिंदे यांच्या शिवसेनेला विस्ताराला वाव मिळला. पण या मंडपातून त्या मंडपात जातानाचा कोडगेपणा हाच २०१४ नंतरच्या राज्याच्या राजकारणाचे 'सांस्कृतिक' अंग असल्याने हे पक्षीय बदल आता सहज होऊन जातात. वारंवार दिली जाणारी शिवी नंतर अर्थहीन आणि बोथट होते, तसेच आहे हे. अशा नेतृत्वहीन पोकळीतील मराठवाड्यात मग कमळ रुजविण्यासाठी लाडक्या बहिणीचा प्रयोग यशस्वी ठरला आणि भाजपचे १९ आमदार निवडून आले. यात मूळ भाजपचे किती, हा प्रश्न वर्षानुवर्षे दीनदयाल उपाध्याय यांच्यावरील बौद्धिक ऐकणारे अधूनमधून विचारतात, पण दबक्या आवाजात. ती कुजबूजसुद्धा बाहेर येऊ नये, एवढी सत्तेची ताकद असते.

खरे तर मराठवाड्यातील भाजपचे दोन मोठे नेते राष्ट्रीय पातळीपर्यंत पोहोचलेले होतेः प्रमोद महाजन आणि गोपीनाथ मुंडे. महाजन-मुंडे यांनी राज्यातील भाजपला आकार दिला. वाढीचे वसंतराव भागवत यांनी घालून दिलेले 'माधव' सूत्र अंमलबजावणीमध्ये आणले. प्रमोद महाजन यांची हत्या झाली आणि गोपीनाथ मुंडे यांचा अपघाती मृत्यू झाला. या अपघाताबाबत संशय व्यक्त केला गेला होता. पण त्यात खरे काय, हे अजून जनतेसमोर आलेच नाही, असा संशय शिवसेना पक्षप्रमुख उद्धव ठाकरे यांनी पुन्हा चर्चेत आणला. आता प्रमोद महाजन यांच्या कन्या राजकारणात आहेत, पण त्यांचा मराठवाड्याशी कार्यकर्तृत्वाच्या अंगाने संबंध नाही; आणि गोपीनाथ मुंडे यांच्या कन्या पंकजा मुंडे यांची मराठवाड्याचे नेतृत्व करण्याची इच्छा आणि क्षमता भाजपमधील धुरिणांनी अशी काही मारली की आता 'जनतेच्या मनातील मुख्यमंत्री' हे शब्दही त्यांचे समर्थक उच्चारत नाहीत. रावसाहेब दानवे यांच्यामध्ये क्षमता असूनही आणि प्रयत्न करूनही त्यांना यश मिळाले नाही. आता त्यांचा मुलगा आणि मुलगी दोघेही आमदार आहेत. एखाद्या प्रदेशाचे नेतृत्व करण्यासाठी तो मतदारसंघ माहीत असावा लागतो. त्या मतदारसंघातील 'खोडील' कार्यकर्ते नेत्यांना माहीत असावे लागतात. प्रसंगी संघर्ष करण्याचीही तयारी लागते. कोणी तरी वर्चस्व गाजवतेय म्हटल्यावर उफाळून येणारे लढण्याचे बळ आता आरक्षण आंदोलनात अडकवून टाकण्यात आले आहे. आव्हान स्वीकारण्याची शक्ती असणारे नेते 'कमळ' छायेत पहुडले गेले आहेत. परिणामी, मराठवाड्याच्या समस्या आरक्षणाच्या सतरंजीखाली ढकलण्याचा उद्योग सत्ताधाऱ्यांना चांगला जमून आला आहे.

suhas.sardeshmukh@expressinda.com

राष्ट्रीय उत्पन्नाच्या आकड्यांभोवतीचा गदारोळ

प्रदीप आपटे

> राष्ट्रीय उत्पन्नाचे आकडे मांडणे ही अत्यंत गुंतागुंतीची आणि सतत सुधारत जाणारी प्रक्रिया आहे. त्यात त्रुटी आहेत, मर्यादा आहेत आणि त्या दूर करण्यासाठी पद्धतीही बदलत राहतात. मात्र त्याचा विचार न करता संपूर्ण सांख्यिकी व्यवस्थाच संशयास्पद ठरविण्याची मोहीम सध्या सुरू झाली आहे.

सुप्त असणाऱ्या छत्रीवाल्या अळंबी पाऊस पडल्यावर डवरतात, तसेच काहीसे राष्ट्रीय उत्पन्न अदमासाच्या आकड्यांचे झाले आहे. हे आकडे कसे खोटे आहेत हे सांगणाऱ्यांच्या छत्र्या लगोलग उघडतात. पण राष्ट्रीय उत्पादन आणि उत्पन्नांचा अदमास बांधणे ही मोठी किचकट गोष्ट आहे. त्यासाठीची विदा- सामुग्री (डेटा) कुठून उपजते? तिचा वापर करून कोणत्या पैलूचा किती अदमास देणारा वेध घेता येतो? अवाढव्य पसाऱ्याची विविध विदा-सामुग्री कोण पैदा करते ? त्यावर काय संस्कार करावे लागतात हे सगळे प्रश्न महत्त्वाचे असतात.

अवघ्या अर्थव्यवस्थेत उपजणाऱ्या आणि खळबळत फिरणाऱ्या उलाढालीची नक्त मोजदाद करण्याचे तीन प्रकार आहेत. राष्ट्रीय उत्पन्न म्हणजे वर्षभरात वस्तू आणि सेवांच्या उपजेचे एकूण उलाढाल मोल आणि त्यापोटी वापरून खपलेल्या वस्तूसेवांच्या मोलाची वजावट करून राहणारे मोल. उत्पन्नातून नवे मूल्य किती उगवले याचा अदमास घेण्याचे दोन मार्ग आहेत. उत्पन्नाचा खर्च किंवा वापर कसा झाला याचा अदमास करणे हा संलग्न पण अगदी निराळ्या धाटणीने मोजणे हा तिसरा मार्ग असतो. यापैकी काही बाबतीत आकडेवारी संपूर्ण नसली तरी पुरेश्या प्रमाणात मिळते. काही आकडेवारी केंद्र सरकारच्या खाती आपसूक येत असते. उदा. आयकर वस्तू-सेवा कर यांची जमाबंदी. कंपनी कायद्याच्या तरतुदीने येणारी माहिती, खाणी (खनिजे आणि तेल) कापारी मंडळी (कंपनी) बँका, रेल्वे, लष्कर प्रशासन, बंदरे याबद्दलच्या उलाढाली, वस्तू, आयात-निर्यात आकडे. शेती, मत्स्योद्योग, वनउपज, खनिजे, बांधकामे इत्यादी माहिती अशीच राज्य सरकारांकडे येत असते.

भारतीय अर्थव्यवस्थेत वस्तू आणि सेवा पैदासणारा पण नोंदीकृत असण्याची गरज वा सक्ती नसलेला असा एक फार अवाढव्य पसारा आहे. या बिगर नोंदवा पंजीकरण असणाऱ्या व्यवसायांबद्दलची माहिती तुलनेने त्रोटक असते. ठरावीक काळाने असे छोटे उद्योग नव्याने उगवतात. काही जुने विराम पावतात. त्यांचा पूर्ण ठाव मिळत नाही.

उत्पन्न चलनात मोजायचे असते. म्हणजे त्याचे मोजमाप रुपयांत करावे लागते. हजारो वस्तूंच्या उत्पादनाच्या मोजमाप आणि उलाढालीच्या जोडीने शेकडो बाजारपेठांतील किमान दरमहा हिंदकाळणाऱ्या किमतींचा माग ठेवावा लागतो. खरेदी विक्रीप्रमाणेच वस्तूक्षेत्रागणिक साठवण करण्याच्या आणि मोलाने मोजण्याच्या रीती-रूढी आहेत. प्रत्येक उत्पादन उपयोग क्षेत्रात संख्यात्मक माहितीच्या विभिन्न समस्या आहेत. त्याचे एकाहून अधिक तोडगे असतात.

स्वातंत्र्य मिळाले तेव्हा माहितीचा दुष्काळ होता. स्रोत नव्हते. व्याख्या, मोजमापाची पठडी अगदी दुबळी होती. ही परिस्थिती विकसित देशातही होती. 'राष्ट्रीय उत्पन्न लेखा पद्धती' कशी असावी, कशी सुधारावी यासाठी संयुक्त राष्ट्रसंघाचे आंतरराष्ट्रीय मानदंड आहेत. बदलती अर्थव्यवस्था म्हणजे उत्पादन, उपभोग, बचतीची ठेवण या सर्वांमध्ये जवळपास १५ ते २० वर्षांनी सुधारणा, फेरफार होतात. नवी माहिती हाती येते. त्यानुरूप अदमास नव्याने सुधारले जातात. स्थिर किंमती आणि बदलत्या चालू किंमती या दोन्हीत मोजमाप केलेले उत्पन्न किती काळाने आणि कसे बदलते ठेवावे याचे मार्गदर्शक तत्त्व आणि पद्धती सुचवल्या जातात. स्थिर किमतींमधले मोजमाप पायाभूत आधारवर्ष यांचा कालानुरूप सांधा बदलायचा असतो. याची स्पष्ट पद्धती, त्याचा अर्थवाहीपणा आणि मर्यादा हे सर्व रीतसर स्पष्ट करणारे छापील पुस्तक सरकार प्रकाशित करते! गेली ६० वर्षे ही रूढ वाट भारत सरकार चोखाळते आहे! दर तिमाहीचे अंदाजही बदलावे, सुधारावे लागतात. या पद्धतीमधील त्रुटी, मर्यादा, सुधारणा यांची पुरेशी चर्चा जाहीरपणे होते! अशा बदलांचा खुद्द सरकारला त्रास पत्करावा लागतो. दर तिमाहीला मुद्रावित्त धोरणाचा आढावा घेऊन योग्य तो फेरबदल रिझर्व बँकेला करावा लागतो. त्यासाठी ते अगोदरच्या तिमाही अदमासावर विलंबतात. पण सरकारचे संख्या नियोजन खाते गेल्या तिमाहीचा सुधारित अदमास देते तेव्हा मोठी पंचाईत होते! आमच्या गोखले संस्थेतल्या काळे स्मृती व्याख्यानात बोलताना याबद्दल वाय. व्ही. रेड्डी म्हणाले होते, 'भविष्यकाळ सगळ्यांसाठीच अनिश्चित असतो, पण आम्हाला तर भूतकाळाचे अनिश्चितपणही पत्करावे लागते!'.

अशा किती तरी मर्यादा, त्रुटी पेलत अदमास सुधारण्याची कसरत या उत्पन्न अदमासण्याच्या खटाटोपात असते, यापूर्वीही होती, यापुढेही नव्यानव्या रूपात अवतरत राहील. कोळसा विकणाऱ्याला कपडे काळे झाल्याची खंत सतावून चालत नाही.

असे शेकडो बदल गेली ६० वर्षे सुरू आहेत. त्यात राजकीय हितसंबंध हुंगण्याची गरज नाही. उदाहरणार्थ राज्य पातळीवरील सकल उत्पन्न आणि देश पातळीवरील अदमास यातील विसंवाद हा गेले दशकभर सुरू असलेला विषय आहे. प्रा. रवींद्र ढोलकिया यांच्या समितीने याबद्दलचा सुधारित अहवाल दोन वर्षांपूर्वी दिलेला आहे. ज्यांना हा विषय आणि त्यातील खाचखळगे माहीत असणे अपेक्षित त्यांनी या धुळवडीत उतरावे, तेही अशा छचोरपणे हे दुर्दैव!

हे चऱ्हाट लावण्याचे कारण काय? तर गेली पाच-सात वर्षे सरकार उत्पन्नविषयक माहिती दडवते, बदलते, स्वतःचीच आरती ओवाळणारी खोटी आकडेवारी माहिती प्रसिद्ध करते असे एक बंड माजले आहे. दुर्दैव असे की ज्यांना हे नीट माहीत हवे किंवा असावे अशा तज्ज्ञांनी या धुळवडीत हिरिरीने भाग घेतला आहे. वृद्धी दर सात आठ टक्के नसून दोन टक्के आहे असा दावा करणाऱ्या आणि वयोवृद्ध असल्याने ज्ञानवृद्ध समजल्या जाणाऱ्या महाभागांनी ही राळ उडवली आहे. विशेष म्हणजे आजच्या तुलनेत ज्या काळात आकडेवारी तुटपुंजी असायची, त्या काळातली आकडेवारी भरवशाची होती असे ते प्रत्यक्ष- अप्रत्यक्षपणे म्हणू लागले आहेत. महिन्याभरापूर्वी 'वस्तू सेवाकर पद्धतीमुळे कसे वाटोळे झाले' आणि 'पूर्वीची पध्दती परत आणायला पाहिजे तर गरिबांची स्थिती वधारेल' 'भारतीय अर्थव्यवस्था फारतर दोन अडीच टक्क्यांनी वाढली असेल' असे आकडे ते ठोकून देत आहेत. असे अर्धशिक्षित विद्वान बाजूला ठेवू!

ज्यांनी जेमतेम आठ वर्षांपूर्वी त्याच आकडेवारीच्या आधारावर, तेही उच्च सरकारी पदांवर राहून जाडजूड अहवाल लिहिले तेच आता अचानक साक्षात्कार होऊन ही सगळीच आकडेवारी कशी संशयास्पद आहे हे दाखविण्यासाठी बोरुबहाद्दरकी करीत आहेत. शिवाय ते करताना शाळकरी चुका करणारे संख्याशास्त्रीय खटाटोप 'प्रतिमान पुरावा' म्हणून मिरवित आहेत. उदा. अरविन्द सुब्रमाणियन्! त्यांचा सरकारवर भल्याबुऱ्या कारणासाठी राग आहे. त्यांचे वितुष्ट कशानेही असो, पण त्यासाठी त्यांनी ही सगळी व्यवस्था बदमाश आणि मटक्याचा आकडा काढल्यागत बेभरवशाची आणि अविश्वसनीय आहे असा कांगावा करणे अनाठायी आणि अनाकलनीय आहे.

अलिकडेच निवृत्त झालेल्या एका वित्तसचिवांनीही तीन दिवसांपूर्वी तोच सूर आळवत 'खरी वाढ फार तर दोन अडीच टक्के आहे' असे ठोकून सांगितले. पण त्यांनीच ज्याची नेमणूक केली होती अशा तरुण सल्लागाराने आधारभूत वर्षाची पातळी कशाने आणि किती बदलली यावर त्यांची जाहीर शिकवणी घेतली. नंतर बहुधा अर्धपश्चातापाने त्यांनी वाढीचा दर पाच टक्के आहे, अशीही दुरुस्तीवजा कबुली दिली. काँग्रेसच्या कारकीर्दीत प्रदीर्घ काळ अर्थसल्लागार असलेल्या आणि नाणेनिधीचे सिंहावलोकन अहवाल लिहिणाऱ्या मॉँटेकसिंह अहलुवालियांनीही अर्थतज्ज्ञ या नात्याने त्यांची कानउघाडणी केली.

दोन महिन्यांपूर्वी आंतरराष्ट्रीय नाणेनिधीने दाखविलेल्या त्रुटीवरून असाच गदारोळ केला गेला होता. उदा. भारताच्या सांख्यिकी व्यवस्थेत उत्पादक किंमत निर्देशांकाऐवजी घाऊक व्यापारी किंमत निर्देशांक वापरला जातो. ही पद्धत गेले काही दशके रूढ आहे. ती दूर करण्यासाठी लागणारा सांख्यिकी पाया तयार करणे ही कष्टप्रद तसेच वेळखाऊ गोष्ट आहे! विरोधाभास असा की त्याची निदान नमुना पद्धतीने व्यापक माहिती वस्तू व सेवा कर पद्धतीमधून गोळा होणाऱ्या आकडेवारीने अंशतः सुलभ होऊ शकते! पण त्यासाठीही विशेष सोय करणे लगोलग जमणार नाही, हे नाणेनिधीलाही उमगते! पण भारताला नाणेनिधीच्या मूल्यांकनात 'क' दर्जा मिळाला ही सरकारची दिवाळखोरी असा कालवा उठवला गेला. त्यात भर म्हणून अशा प्रतिष्ठित, पदभूषक तज्ज्ञांनी बिनबुडाचा कांगावा करावा आणि त्याला माध्यमांनी तशाच आकसापोटी मोठा उजाळा द्यावा हे अधिक लजास्पद आहे.

जाता जाता आणखी एक रंजक वाटावी अशी माहिती बघा. नाणेनिधी अहवालाने भारतीय आकडेवारीला तृतीय श्रेणीत बसवले याचा मोठा गवगवा झाला! वस्तुस्थिती अशी आहे की तपशील आणि योग्य मोजमाप याद्दष्टीने २०११ या पायाची आकडेवारी आणखी मर्यादित आणि सदोष होती! या तज्ज्ञांनी त्यावर कधी बोटभर ओळ लिहिलेली कुणाला आढळेल तर नाणेनिधीला कळवावे!

नाणेनिधी अहवालातले दुसरे उदाहरण बघितले तर म्हणजे फुगवलेले राष्ट्रीय उत्पन्न कसे असते याचा मासला मिळेल. 'पीपल्स रिपब्लिक ऑफ चायना' या देशाबद्दलच्या नाणेनिधी शोध अहवालात राजकीय स्वार्थापोटी तसेच भांडवली खर्च फुगविण्यासाठी चीनमधील स्थानिक सरकारे त्यांच्या अखत्यारीतील प्रदेशांमधले उत्पन्न आणि आर्थिक घडामोड फुगवून सांगतात याची नोंद करण्यात आली आहे! चीन सरकारने ती नाकारण्याचा आटापिटा केलेला नाही ! चीनच्या नेत्रदीपक प्रगतीने दिपलेल्या डाव्या आणि उजव्या विचारवंत अर्थतज्ज्ञांनी ही कबुली नीट वाचावी! म्हणजे वाढीचा दर फुगवून कसा सांगतात हे त्यांना कळेल. याची माहिती खुद्द चीन सरकारने मुद्रा आणि बँकिंग अहवालात दिली आहे. या स्थानिक सरकारांनी झपाट्याने गगनचुंबी इमारतींची नगरे वसविली. त्यांचे निर्मिती मोल स्थानिक उत्पन्न आणि गुंतवणूक खर्चात दाखवले. पण ही नगरे ओसाड आहेत. तिथे अपेक्षेनुसार उद्योग अवतरले नाहीत. उलटपक्षी आशेने घरे खरेदी करणारे कर्जात बुडून रानोमाळ झाले आहेत!

कोणत्याही देशाचे राष्ट्रीय उत्पन्न अदमास निखालस निर्दोष नसतो. तो संख्याशास्त्रात सरासरीचा बोध घेताना ठेवतात तसे सावधपण ठेवून समजून घ्यायचा असतो. ज्या मोजमाप व्यवस्थेमध्ये त्रुटी आहेत, त्यात बदल करणे गरजेचे असते, अशा बदलांचे स्पष्टीकरण करणारी सविस्तर टीप दिली जाते. ती वाचून तरी या तज्ज्ञांनी बोलायला अडचण नसावी! हंगाम दर हंगाम विश्वासार्ह आकडेवारी मिळेल अशी स्थिर व्यवस्था नसलेली अनेक आर्थिक क्षेत्रे आणि व्यवसायसंस्था आहेत. त्यामुळे उत्पन्न वगळले जाणाच्या त्रुटींचे प्रमाण मोठे आहे. या त्रुटींचे निराकरण झाले तर आजच्या उत्पन्नाच्या मापात लक्षणीय भर पडेल. दुसऱ्या शब्दात भारतात उपजणाऱ्या उत्पन्नाची पातळी उंचावेल! विशेषतः असंघटित आणि कृषिसंलग्न क्षेत्रातील उत्पन्न आहे त्यापेक्षा कमी गणले जाते. ज्यांना आजही कागदोपत्री ग्रामीण मानले जाते, तेथील छोट्यामोठ्या सेवा आणि व्यवसायांची संख्या आणि उलाढाल वधारते आहे.

मी स्वतः याबद्दल वारंवार लिहिले आहे. त्या सुधारणांसाठी दोष दाखविणे अदमासाची गुणवत्ता वधारण्यासाठी वास्तवाचा अभ्यास करणे, उपाय सुचविणे गरजेचे आहे आणि असते. त्यावेळी सदर तज्ज्ञ बहुतेक वेळेला गायब असतात. कुणी सचिव असला म्हणजे सामान्यतः त्यांना या संख्याशास्त्रीय धकाधकीची जाण असणार अशी सामान्यतः समजूत असते. हा समज पार भाबडा आहे! गाडी वापरणाऱ्या व्यक्तीला गाडीची जुळवाजुळव, दुरुस्ती येते असे मानू नये.

असे कोणतेही प्रस्ताव किंवा पर्याय या तथाकथित तज्ज्ञांनी दिलेले आढळत नाहीत. त्यापैकी बहुतेकांकडे त्यासाठीचा सखोल, प्रदीर्घ निष्णातपणा आणि अनुभव असल्याचेही दिसत नाही. अशा बोलघेवडया आकडेतज्ज्ञांना माध्यमांनी उजाळा देणे बरे लक्षण नाही. अन्यथा अशा समालोचकांनी अडीच टक्के म्हटले की तिप्पट करून साडेसात समजावे असा शिरस्ता पडेलच!

pradeepapte1687@gmail.com

चांदनी चौकातून
दिल्लीवाला

चिंतन मग, फेरबदल?

केव्हापासून मोदी सरकारमध्ये फेरबदल होणार असल्याचं सांगितलं जातंय पण, प्रत्यक्षात मोदींना अजूनही चांगला मुहूर्त मिळत नाही असं दिसतंय. मोदी ऑगस्टमध्ये परदेश दौऱ्यावर गेले होते, त्याआधीपासून केंद्रीय मंत्रिमंडळात नवे चेहरे आणले जाणार वगैरे गोष्टी केल्या जात होत्या. कोणा-कोणाला डच्चू मिळणार हेही अनेकांनी ठरवून टाकलं होतं. मोदींनी बहुधा या कथित सल्लागारांचं म्हणणं मनावर घेतलं नाही असं

दिसतंय. केंद्रीय मंत्रिमंडळातील फेरबदल संसदेचं पावसाळी अधिवेशन संपल्यानंतर लगेच व्हायला हरकत नव्हती. पण, त्या आड लोकसभा मतदारसंघांच्या फेररचनेचे घटनादुरुस्ती विधेयक आलं. अजूनही या विधेयकाला आवश्यक पाठिंबा मिळवण्यात सरकारला यश आलेलं नाही. नाही तर केंद्र सरकारने विशेष अधिवेशनाची घोषणा केली असती. आता असं म्हणतात की, पुढील आठवड्यात मोदींनी केंद्रीय मंत्र्यांची दोन दिवसांची बैठक बोलावली आहे. मोदींचे मंत्री एकत्र येऊन चिंतन करणार आहेत, असं सांगितलं जातंय. प्रत्येक मंत्रालयाच्या कामकाजाचा आढावा घेतला जाणार आहे, असं म्हणतात. पण, मोदींनी काही दिवसांपूर्वी मंत्रालयांच्या प्रधान सचिवांशी चर्चा केली होती. त्यावेळी त्या-त्या मंत्रालयाची स्थिती त्यांना समजली असेलच. मग, पुन्हा मंत्र्यांकडून आढावा घेण्याचं नेमकं कारण काय हे समजत नाही. कदाचित नवं मंत्रिमंडळ अस्तित्वात येण्याआधी जुन्या मंत्र्यांना निरोप देण्याचा इरादाही असू शकतो. पंजाब, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड येथील आगामी विधानसभा निवडणुका लक्षात घेऊन त्या राज्यांतील नेत्यांना स्थान मिळेल असं मानलं जातंय. पण, मोदी चर्चेतील गोष्टी करत नाहीत. ते अचानक कधी तरी नव्या मंत्र्यांना सरकारमध्ये सामील करून घेतील!

वाय-फाय ते शाकाहार

'जी-२०' असो वा 'ब्रिक्स'... अशा वेगवेगळ्या आंतरराष्ट्रीय परिषदांचं आयोजन भारताने केलेलं आहे. या शिखर परिषदा यशस्वी झाल्याचा केंद्र सरकारचा दावा आहे. सरकार म्हणत असेल तर ते खरंही असू शकतं. मोठमोठ्या परिषदांमध्ये आंतरराष्ट्रीय मुत्सद्देगिरी होत असेल, तर त्यातील अनेक गोष्टी सामान्य लोकांपर्यंत पोहोचतही नसतात. त्यामुळं सरकार म्हणत असेल तर शिखर परिषद यशस्वी झाली असं म्हणायला हरकत नाही. बंद दरवाजाआड बोलणी वगैरे झाली असतील. पण, अशा परिषदांचं आयोजन करताना काही गौण मुद्देही असतात, त्यांचा मुख्य परिषदेशी काहीही संबंध नसतो. त्यामुळं कदाचित आयोजकांना त्याकडे फार गांभीर्याने बघण्याची गरज नसेलही. त्यांची चर्चा होत नाही, पण ते मुद्दे महत्त्वाचे असतात. उदाहरणच द्यायचं तर दोन दिवसांच्या ब्रिक्स शिखर परिषदेला देशी-परदेशी पत्रकार आले होते. त्यांच्यात काही मुद्रित माध्यमांचे होते, काही एजन्सीजचे तर काही चॅनलवाले होते. या सगळ्यासाठी वाय-फायची व्यवस्था पुरवण्यात आली होती. पण, बहुधा त्याची सगळी बॅण्डविड्थ चॅनलवाल्यांनी खाल्ली असावी. कारण त्यांचं लाइव्ह टेलिकास्ट आरामात सुरू होतं. पण बाकीच्यांसाठी वाय-फायची शक्ती संपून गेलेली असावी. त्यामुळं त्यांना वाय-फाय मिळतच नव्हतं. अनेक पत्रकारांना लॅपटॉपवर बातम्या टाइप करून पाठवायच्या होत्या. त्यांनाही वाय -फायची गरज होती. तिथल्या आयोजकांनी वाय-फायची जोडणी दिली. पण, ते काम करेना. मग, अनेक पत्रकारांनी मोबाइल हॉटस्पॉट जोडून मजकूर आपापल्या कार्यालयांना पाठवला. तांत्रिक बाजू पाहणाऱ्यांकडं त्याबद्दल विचारणा केली तर, 'आहे हे असं आहे', असं उत्तर मिळालं. त्यांच्याही हातात काही नसावं. वाय-फायचा पासवर्ड द्यायचं हे त्यांचं काम. ते त्यांनी केलं इतकंच. पण, असं का व्हावं? सगळ्यांना वाय-फायचा वापर का करता येऊ नये? वाय-फायच्या सुविधेमध्ये खंड पडावा इतकी आपली आयटी व्यवस्था वाईट आहे का, असा प्रश्न पडला. जी-२० शिखर परिषदेच्या वेळी देखील वाय-फायची सुविधा खंडित होत होती किंवा त्याचा वेग इतका कमी होता की, एखादा पत्रकार पळत पळत गेला असता तर कार्यालयात लौकर पोहोचून त्याने बातमी छापून आणली असती. असो. बाकी ब्रिक्समधल्या जेवणाची बरीच चर्चा झाली. तिथं सगळा शाकाहारी मेन्यू होता. मांसाहार करू नका, असंच जणू परदेशी पाहुण्यांना सांगितलं गेलं होतं. काही परदेशी पाहुण्यांनी देशी शाकाहार केलाही. प्रत्यक्ष शिखर परिषदेत नेत्यांनाही शाकाहारी जेवणच दिलं गेलं होतं. तिथंही मांसाहार वर्ज्य होता. चीनचे अध्यक्ष क्षी जिनपिंग मोदींनी ठेवलेल्या स्नेहभोजनाला आले नाहीत. ते विश्रांतीसाठी गेले असे सांगितले गेले. त्यांचा बराच प्रवास झाला होता, त्यामुळे त्यांची दगदग झालेली असू शकते. परिषदेत त्यांनी मोदींशी चर्चा केली. शिखर परिषदेतही ते बसले होते. रशियाचे अध्यक्ष पुतिन मेजवानीला होते, पण, चर्चा झाली ती क्षी जिनपिंग नव्हते याचीच. सुरक्षेच्या कारणास्तव हे वेगवेगळे राष्ट्रप्रमुख बाहेरचं जेवण जेवतात की नाही, हा प्रश्न आहेच. असो. पंतप्रधान नरेंद्र मोदी मात्र तीन दिवस प्रचंड व्यग्र होते. त्यांची वेगवेगळी भाषणं तर झालीच, त्याशिवाय द्विपक्षीय चर्चाही झाल्या. तीन दिवसांमध्ये मोदींनी १५ द्विपक्षीय बैठका घेतल्या. या तीन दिवसांमध्ये दिल्लीकरांना नाकाबंदी, ट्रॅफीकबंदी वगैरे सगळं सहन करावं लागलं. विश्वगुरू होण्याची किंमत मोजावी लागणारच. त्यामुळं दिल्लीकरांनी तक्रार करणं योग्य नव्हे!

मोदी 'धुरंधर'

पंतप्रधान नरेंद्र मोदींचा ७६ वा वाढदिवस देशभरात कसा साजरा झाला यापेक्षा भाजपने समाजमाध्यमांवरून कसा प्रोजेक्ट केला हे महत्त्वाचं. भाजपच्या एक्स खात्यावर गेल्या चार-पाच दिवसांत फक्त मोदी आणि मोदीच दिसत आहेत. प्रत्येक संदेशात मोदी आहेत. हे वेगवेगळे संदेश दृश्यश्राव्य माध्यमातून म्हणजे व्हिडीओतून देण्यात आले आहेत. काही व्हिडीओ अगदी दहा -वीस सेकंदाचे आहेत तर काही खूप मोठे अर्धा तास किंवा त्याहूनही अधिक कालावधीचे आहेत. या सगळ्या व्हिडीओमधील संगीत हाच भन्नाट भाग आहे. काही ठिकाणी इंग्रजी गाण्यांचे आणि संगीताचे छोटे-छोटे तुकडे टाकलेले आहेत. मोदींची प्रत्येक कृती आणि तिला पार्श्वसंगीत हे मिश्रण अफलातूनच. बहुतांश व्हिडीओंमध्ये मोदींच्या गुजरात तसंच केंद्रातील कार्यकाळाचे महत्त्वाचे क्षण समाविष्ट केलेले आहेत. प्रसिद्ध कवी प्रसून जोशी यांनी घेतलेल्या मोदींच्या अत्यंत महान मुलाखतीचा दोन सेकंदांचा भागही पाहायला मिळतो. तुम्हाला इतिहासाने कसं आठवणीत ठेवावं अस तुम्हाला वाटतं, असं जोशी मोदींना विचारत आहेत. मोदींनी दिलेलं उत्तर 'प्रभावित' करणारं आहे! एका व्हिडीओमध्ये मोदी ते कसे दिवसरात्र देशासाठी काम करत आहेत. त्यांचा जन्मच देशासाठी काम करण्यासाठी झालेला आहे, असे सांगत आहेत... एका व्हिडीओमध्ये मोदी 'धुरंधर' झालेले आहेत. त्यांच्या वाटचालींवर आणि जीवनावर एकेका सेकंदाच्या दृश्यांमध्ये प्रकाश टाकण्यात आला आहे. त्यांचं आयुष्य म्हणजे धुरंधर असल्याचं दाखवण्यात आलं आहे. या व्हिडीओचं वर्णन भाजपनं, 'एव्हरी धुरंधर डिझर्व्हज ॲन आशीर्वाद' असं केलं आहे. मोदींचं माहात्म्य सांगणारे असे अनेक व्हिडीओ भाजपने तयार केले आहेत. ते बघणाऱ्यांची संख्या २०-२५ हजारांपासून दीड- दोन लाखांपर्यंत आहे. हा प्रतिसाद चांगला की तुलनेत बराच, हे ज्याने त्याने ठरवावं. असो.

काँग्रेसने कोणती चूक सुधारली पाहिजे?

तरुण रक्ताला पक्षसंघटनेमध्ये स्थान देण्याचा विचार काँग्रेसमध्ये केला जात आहे. त्यासाठी राष्ट्रीय स्तरावर बदल करण्याचा निर्णय राहुल गांधींनी घेतला आहे. ताज्या दमाचे नवे राष्ट्रीय सचिव नियुक्त केले जाणार असून त्यासाठी गेल्या आठवड्यामध्ये सुमारे १३० जणांच्या मुलाखती घेण्यात आल्या. राहुल गांधी, प्रियंका गांधी आणि के. सी वेणुगोपाल यांनी सर्व उमेदवारांचं म्हणणं जाणून घेतलं. मुलाखतींचं सत्र आता पूर्ण झालं आहे. त्यातून काही जणांची राष्ट्रीय सचिव म्हणून नियुक्ती केली जाऊ शकते. त्यांना राष्ट्रीय महासचिव तसंच राज्य प्रभारींच्या देखरेखीखाली काम करावं लागेल. राज्यांशी नियुक्त महासचिव आणि सचिव संपर्क ठेवत असतात. ही काँग्रेसची कामाची पद्धत आहे. काही दिवसांमध्ये नवे राष्ट्रीय सचिव दिसू शकतील. विद्यमान राष्ट्रीय सचिवांशीही या तिघांनी चर्चा केली. त्यांना जबाबदारी दिलेल्या राज्यांमध्ये काँग्रेसची स्थिती काय हे जाणून घेतलं. त्यांना चार-पाच प्रश्न विचारले गेले. थेट उत्तरं द्या, असंही सांगण्यात आलं. त्यातील एक प्रश्न महत्त्वाचा आहे. काँग्रेसने केलेली एक चूक सांगा आणि ती सुधारण्यासाठी काय केलं पाहिजे हेही सांगा, असा प्रश्न या राष्ट्रीय सचिवांना विचारला गेला. काँग्रेसने संघटना सृजन मोहीम राबवली. बूथ स्तरापासून जिल्हा आणि राज्य स्तरापर्यंत संघटना बळकट करण्यासाठी ही मोहीम राबवली जात आहे. त्याअंतर्गत जिल्हाप्रमुख नियुक्त केले जात आहेत. या मोहिमेचं मूल्यमापनही या राष्ट्रीय सचिवांच्या भेटीतून केलं गेलं. भाजपप्रमाणे काँग्रेसही आता बूथस्तरावरील मजबुतीकरणाची भाषा करू लागला आहे.

एक्स से

हम तालिबान को उनके घिनौने अपराधों के लिए जवाबदेह ठहराते रहेंगे। हम अफगान औरतों और लड़कियों के लिए इंसाफ लेकर रहेंगे और जेंडर के आधार पर होने वाले भेदभाव को मिटवाकर ही मानेंगे- मलाला यूसुफजई /नोबेल विजेता

अशांत दुनिया में शांति दिवस

बदलती और बदहाल होती विश्व-व्यवस्था ने बेजारी और क्षेत्रीय संघर्षों को विस्तार दे दिया है। इस समय दुनिया को पचास से अधिक सशस्त्र संघर्ष गरमा रहे हैं। इनमें से कई तो युद्ध की श्रेणी में आते हैं। यही वजह है कि अंतरराष्ट्रीय शांति दिवस से ऐन पहले दुखी मन से आपको प्लेटो का कथन याद दिलाना चाहता हूं, 'शांति सिर्फ दो युद्धों के बीच का अंतराल है'। हम शायद उस अंतराल को पीछे छोड़ आए हैं।

आजकल स्तंभ के तहत प्रकाशित आलेखों के लिए

शशि शेखर

आजकल

युद्ध लौट आए हैं। दो महायुद्धों से उकताई इंसानियत ने इनसे बचाव के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ जैसी संस्थाएं जतन से गढ़ी थीं। इस विरल वक्त में वे खुद अपनी अस्तित्वहीनता की मुनादी कर रही हैं। सवाल उठता है, इन दिनों को इतिहास अपनी पोथियों में कहां और कैसे दर्ज करेगा? शायद वहीं, जहां सत्तानायकों की धूर्तताएं और आम आदमी की निरीहताएं दर्ज हैं।

दूसरे विश्व युद्ध से ऐन पहले भी सशक्त देशों के सत्ताधीश इसी प्रकार बेलगाम हो चले थे। सन् 1936-39 के बीच रोम-बर्लिन संधि, कम्युनिस्ट विरोधी संधि (एंटी कॉमिण्टर्न पैक्ट), म्यूनिख समझौता और मोलोटोव-रिबेंट्रोप समझौते के जरिये नया वैश्विक निजाम बनाने के नाम पर 'लीग ऑफ नेशंस' की धज्जियां उड़ाई जा रही थीं। अमेरिका तो पहले से ही इससे अलग था, अब हिटलर और मुसोलिनी जैसे तानाशाह उसे हर दिन आघात पहुंचाने में लगे थे। सनद रहे, लीग की स्थापना पहले महायुद्ध के बाद इस नीयत से की गई थी कि वह आगे ऐसे हालात पनपने ही नहीं देगा।

लीग की नाकामी का आलम यह था कि सन् 1930 की अमेरिकी मंदी से नाराज जापानी सम्राट हिरोहितो ने मंचूरिया पर कब्जा जमा लिया था। इटली इथियोपिया पर चढ़ दौड़ा था और हिटलर चेकोस्लोवाकिया पर आधिपत्य के लिए आस्तीनें चढ़ा रहा था। तंग जेब वाले इंग्लैंड और फ्रांस इस उद्धत तानाशाह को रोकने के लिए मिन्नतें कर रहे थे। म्यूनिख समझौते के तहत चेकोस्लोवाकिया के सुडेटनलैंड को जर्मनी को देने पर वे राजी भी हो गए थे, मगर हिटलर रुका कहां?

कोई आश्चर्य नहीं, इस समझौते के ऐन बाद विंस्टन चर्चिल ने तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमंत्री चेम्बरलेन से कहा था- 'आपको युद्ध और अपमान में से एक को चुनना था, आपने अपमान चुना और अब आपको युद्ध भी मिलेगा।' चर्चिल गलत न थे, ठीक एक साल बाद जंग शुरू हो गई थी। उस दौरान हिटलर डींग हांकता था- 'हमारे दुश्मनों के पास कीड़े-मकोड़े जैसे नेता हैं, मैंने उन्हें म्यूनिख में ही परख लिया था। विजेता से कभी नहीं पूछा जाएगा, उसने सच बोला था या नहीं।'

क्या आज वैसे हालात नहीं हैं?

रूस और यूक्रेन साढ़े चार वर्षों से सींग लड़ाए हुए हैं। गाजा पर इजरायल का अत्याचार अभी खत्म नहीं हुआ है। इजरायल और अमेरिका की जोड़ी ने छह महीने पहले ईरान पर यह सोचकर हमला किया था कि वे चंद दिनों में वहां के राजपाट में मनमाफिक परिवर्तन करा सकेंगे, पर ईरान इस बार तैयार बैठा था। इस हमले के जवाब में ईरानी ड्रोन और प्रक्षेपास्त्रों ने खाड़ी में मौजूद 20 से अधिक अमेरिकी सैन्य अड्डों को जबरदस्त क्षति पहुंचाई। रबर की तरह खिंचती इस लड़ाई से अमेरिका का गोला-बारूद चुक चला है। नतीजतन, पेंटागन ने दक्षिण कोरिया और जापान से अपने प्रक्षेपास्त्र एवं अन्य आवश्यक सैन्य संसाधन इस क्षेत्र में स्थानांतरित कर दिए हैं। इससे सियोल और टोकियो में हड़कंप मच गया है। अगर उत्तर कोरिया दक्षिण पर और चीन जापान पर हमला कर दे, तो उन्हें कौन बचाएगा? खाड़ी के देशों और यूरोप की तरह उन्होंने भी अपनी सामरिक सुरक्षा अमेरिका के हवाले कर रखी थी। प्रायश्चित स्वरूप ये देश अमेरिकी छाते से निकलकर अजीबो-गरीब संधियां कर रहे हैं।

जन्मजात विकलांगता का शिकार मक्का समझौता इनमें से एक है।

इस सबसे बाखबर ट्रंप और उनके बेशर्म मंत्रिगण बयान दे रहे हैं कि हमने ईरान को तबाह कर दिया है, हम जीत गए हैं। ईरान के राष्ट्रपति मसूद पेजेश्कियान भी यही दावा पेश कर रहे हैं। इस लड़ाई में कौन जीता, कौन हारा, इसका जवाब किसी के पास नहीं है। इस जंग ने समूची दुनिया में नई धड़ेबंदी को जन्म दे दिया है। अमेरिकी अखबार लिख रहे हैं कि चीन और रूस ईरान के बहाने हमसे छाया युद्ध लड़ रहे हैं। यह वही छाया

युद्ध है, जिसका ईजाद शीतयुद्ध के जमाने में अमेरिका ने किया था। भू-राजनीति में शिकारियों का खुद शिकार हो जाना कोई नई बात नहीं है।

नतीजतन, कुछ हफ्तों से अमेरिकी मिसाइलें और बम ईरान की धरती से मुंह मोड़े हुए हैं। ईरान भी अब सीधे नहीं लड़ रहा। उसने हूती, हिजबुल्लाह और इराकी मिलिशिया के जरिये मैदान-ए-जंग का विस्तार कर दिया है। उसके पाले-पोसे हूतियों ने यमन के तटीय क्षेत्रों और बाब अल-मंदेब जलडमरूमध्य के पास के दो रणनीतिक द्वीपों पर कब्जा जमा लिया है। धनी-मानी सऊदी अरब इन लड़ाकों से खौफजदा है। पड़ोसी संयुक्त अरब अमीरात की तरह उसका तेल निर्यात बुरी तरह बाधित हो गया है। दुनिया का 12 फीसदी व्यापार और 30 फीसदी कंटेनर ट्रैफिक इसी संकरे समुद्री रास्ते से गुजरता है। ईरान के प्रभुत्व वाला होर्मुज जलडमरूमध्य पहले से ही संकट के साए में है। होर्मुज से दुनिया की करीब 20 फीसदी ऊर्जा सामग्री गुजरती है।

यही वजह है कि विश्व बाजार में कच्चे तेल की कीमतें एक बार फिर सौ डॉलर प्रति बैरल के खतरनाक निशान से ऊपर चली गई हैं। लंदन की बॉल्टिक एक्सचेंज के मुताबिक, इन हालात से त्रस्त पोत संचालकों ने तेलवाही जहाजों के भाड़े में 10 लाख डॉलर प्रतिदिन तक की बढ़ोतरी कर दी है। भारत जैसे विकाशसील देश की बात तो छोड़ दें, विश्व की तीन सबसे बड़ी आर्थिक ताकतें अमेरिका, चीन और जापान तक भयंकर दबाव में आ गए हैं। जापान का 90 फीसदी तेल होर्मुज से होकर गुजरता है। मजबूरन, वह जतन से जमा किए अमेरिकी बॉण्ड बेचने को बाध्य हो गया है।

अमेरिका का हाल देखिए, साख बचाने को वह अपने ही बॉण्ड वापस खरीदने पर मजबूर हो गया है। ईंधन महंगा होने के कारण धरती की इस जन्नत में खाद्य और जरूरी सामानों की कीमतें लगातार बढ़ रही हैं। महंगाई की इस मार से अमेरिकियों को बचाने के लिए सेंट्रल बैंक तीन बरस बाद ब्याज दरें बढ़ाने पर मजबूर हो गया है। अन्य मुल्कों के लिए भी यह अच्छी खबर नहीं है।

इस अफरा-तफरी से नाराज केंटकी के रिपब्लिकन सांसद थॉमस मैसी ने संसद में रक्षा सचिव पीट हेगसेथ पर महाभियोग चलाने का प्रस्ताव रखा है। महंगाई और युद्ध के बढ़ते दायरे की वजह से ट्रंप लगातार आलोचनाओं के घेरे में हैं। भारत सहित तमाम देशों पर सौ फीसदी टैरिफ ठोकने का उनका दांव भी उल्टा पड़ता दिख रहा है। क्या संयोग है? जून 1930 में अमेरिकी संसद ने स्मूट-हॉली टैरिफ ऐक्ट लागू किया था। इसके तहत 20 हजार से अधिक विदेशी वस्तुओं पर रिकॉर्ड आयात शुल्क थोप दिया गया था। दुनिया के तमाम मुल्कों ने उसे जस का तस जवाब दिया था। नतीजतन, मंदी का शिकार अमेरिका महामंदी की चपेट में आ गया था। क्या यह महादेश उस पुरानी कहानी को दोहराने जा रहा है?

बदलती और बदहाल होती इस विश्व-व्यवस्था ने बेजारी और क्षेत्रीय संघर्षों को विस्तार दे दिया है। इस समय दुनिया को पचास से अधिक सशस्त्र संघर्ष गरमा रहे हैं। इनमें से कई तो युद्ध की श्रेणी में आते हैं। यही वजह है कि अंतरराष्ट्रीय शांति दिवस से ऐन पहले दुखी मन से आपको प्लेटो का कथन याद दिलाना चाहता हूं, 'शांति सिर्फ दो युद्धों के बीच का अंतराल है'।

हम शायद उस अंतराल को पीछे छोड़ आए हैं।

@shekharkahin
@shashishekhar.journalist

जीना इसी का नाम है

चीनू क्वात्रा
समाजसेवी एवं पर्यावरणविद्

काश! हर जलाशय को एक चीनू मिल जाता

सितंबर 2017 में एक शाम चीनू दादर समुद्री तट पर टहल रहे थे। उन्होंने देखा कि समुद्री लहरों के साथ बहकर किनारे आ गए गणपति प्रतिमा के खंडित अंश कचरों के बीच पड़े हुए थे। उन्हें ठेस पहुंची। जिनको दस दिनों तक पूजा, विसर्जन के बाद क्या उनसे नाता टूट गया?

लगभग डेढ़ अरब की आबादी वाले हिन्दुस्तान में आज भी करोड़ों लोग गरीबी से लड़ रहे हैं। सरकारें उन्हें इसकी खाई से बाहर निकालने की लगातार कोशिशें करती हैं, तरह-तरह की योजनाएं चलाती हैं, मगर दूसरी तरफ लाखों भारतीय हर साल जल-जनित रोगों की चपेट में आ जाते हैं। कई तो अपनी जान गंवा बैठते हैं। इन बीमारियों के कारण अनगिनत परिवार फिर से गरीबी की चपेट में आ जाते हैं। ऐसे में, चीनू क्वात्रा जैसे लोगों की अहमियत समझ में आती है।

आज से 37 साल पहले ठाणे, मुंबई के एक खुशहाल परिवार में जन्मे चीनू का शुरुआती बचपन सुविधाओं के बीच बीता, मगर किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते परिवार की वित्तीय स्थिति बेहद खराब हो गई। जब वह दसवीं में थे, तब स्थिति इतनी बिगड़ गई कि परिवार पालने के लिए मां को ढाबा चलाना पड़ा। कुछ महीने ऐसे आए, जब मां के पास बच्चों की स्कूल फीस देने तक के पैसे नहीं थे, मगर तब स्कूल अपने होनहार छात्र चीनू के साथ खड़ा रहा। उनकी पढ़ाई नहीं रुकी। परिश्रम के बावजूद मां की आंखों की बेबसी चीनू को बेधती थी, मगर वह कर भी क्या सकते थे? हां! स्कूल से आते ही वह ढाबे के जूठे बर्तन धोने में जुट जाते और ग्राहकों के घर तक टिफिन पहुंचा आते।

गरीबी के एहसास ने किशोर चीनू को एक संवेदनशील आदमी के रूप में तराशा। 12वीं की पढ़ाई पूरी करने के बाद उनका नया पड़ाव 'मुलुंड कॉलेज ऑफ कॉमर्स' बना। चीनू बचपन से फौजी बनना चाहते थे, मगर ऐसा हो न सका। तब उन्होंने सोचा कि वर्दी में देश-सेवा करने का मौका नहीं मिला, तो क्या हुआ, बगैर वर्दी के भी समाज और देश की सेवा की जा सकती है। कॉलेज के कुछ दोस्तों के साथ मिलकर वह अक्सर आस-पास के इलाके की साफ-सफाई में जुट जाते थे। इससे उन सबको बहुत खुशी मिलती। ग्रेजुएशन के बाद चीनू ने एमबीए की डिग्री भी हासिल की और उन्हें मार्केटिंग की नौकरी भी मिल गई।

जिंदगी अब ऐसे पड़ाव पर आ गई थी, जहां उनके पास यह भरोसा था कि वह मां, भाई और परिवार की आर्थिक मदद कर सकते हैं। साल 2014 की बात है। वर्षों की मोहब्बत को अब जिंदगी का स्थायी हिस्सा बनाने के बारे में चीनू फैसला करने जा रहे थे, तभी एक सड़क दुर्घटना में वह चल बसी। इस हादसे ने उन्हें बुरी तरह तोड़ दिया था। वह अवसाद के शिकार हो गए थे। तीन बार उन्होंने खुद को खत्म करने की कोशिश की। आखिरकार, मां ने ही यह संबल थमाया- मरने वाले के साथ मर जाना सबसे आसान काम होता है, बहादुरी तो तब है, जब उसकी मोहब्बत को सीने में जिंदा रखते हुए जियो! दूसरों के दर्द बांटो।

लगभग उन्हीं दिनों रिश्ते की एक बहन ने ठाणे में प्री-

प्राइमरी स्कूल खोला था। उन्होंने चीनू से इसरार किया कि वह उनके स्कूल के लिए मार्केटिंग करें। इस सिलसिले में चीनू का स्कूल आना-जाना शुरू हुआ। कुछ दिनों में उन्होंने गौर किया कि चार और सात साल की दो बच्चियां खूब सारा मेकअप थोपकर स्कूल के गेट पर आ बैठती हैं और स्कूल आने वाले बच्चों को बड़ी हसरत से देखा करती हैं। चीनू और उनकी बहन जब इन बच्चियों के अभिभावक से मिलने पहुंचे, तो उन्हें यह जानकर बेहद दुख हुआ कि वे अनाथ थीं और एक बार डांसर रिश्तेदार के यहां रह रही थीं। जब चीनू की बहन ने इन बच्चियों को निःशुल्क पढ़ाने का इरादा दिखाया, तो वह रिश्तेदार भी इसके लिए सहर्ष तैयार हो गई, क्योंकि वह नहीं चाहती थी कि ये बच्चियां उस गलीज पेशे का हिस्सा बनें। चीनू ने उसी समय ऐसे अनाथ बच्चों के लिए काम करने का इरादा बांधा।

साल 2017 में उन्होंने 'खुशियां फाउंडेशन' की शुरुआत की। इसके साये तले वह कई तरह के काम कर रहे हैं, जिनमें बेसहारा गरीब बच्चों को भोजन-शिक्षा और छत मुहैया कराने के साथ-साथ समुद्री तटों की साफ-सफाई के काम शामिल हैं। पिछले नौ साल में लाभार्थी गरीब बच्चों की संख्या 2,000 से ऊपर पहुंच गई है। इसी तरह, गणपति महोत्सव के समय मुंबई अपने इस सपूत को शिद्दत से याद करता है। दरअसल, सितंबर 2017 में एक शाम चीनू अपने कुछ दोस्तों के साथ दादर समुद्री तट पर टहल रहे थे, तभी उन्होंने गौर किया कि गणपति प्रतिमा के खंडित अंश समुद्री लहरों के साथ बहकर किनारे पर आ गए थे और वे तमाम तरह के कचरों के बीच पड़े हुए थे। उन्हें ठेस पहुंची। जिनको दस दिनों तक पूजा, जिनकी आराधना की, विसर्जन के बाद क्या उनसे नाता टूट गया?

चीनू ने सोचा कि जब पूजा के लिए सब एकजुट हो सकते हैं, तो उन समुद्री तटों की सफाई के लिए क्यों नहीं हो सकते, जहां बप्पा का विसर्जन किया जाता है? अगली सुबह ही वह अपने 12 दोस्तों के साथ दादर बीच पर थे। किसी ने उन्हें कचरा वाला कहा, तो किसी ने सफाई वाला समझा, उन्हें इससे क्या फर्क पड़ना था? चीनू और उनके साथियों को सफाई करते देख पास के कॉलेज के कई छात्र उनसे आ जुड़े। इस मुहिम ने 'बीच वॉरियर्स' की नींव रखी। 12 लोगों से शुरू हुआ वह काफिला नौ वर्षों बाद अब 2,000 सेनानियों का हो गया है और ये सेनानी आज मुंबई के चार समुद्री तटों को उनकी नैसर्गिक आभा लौटा रहे हैं। हर शनिवार ये इस काम

12 लोगों से शुरू हुआ 'बीच वॉरियर्स' का वह काफिला नौ वर्षों बाद आज 2,000 सेनानियों का हो गया है और ये सेनानी आज मुंबई के चार समुद्री तटों को उनकी नैसर्गिक आभा लौटा रहे हैं। हर शनिवार ये इस काम को अंजाम देते हैं। पिछले नौ वर्षों में इन्होंने 4,000 टन कचरा समुद्र में जाने से रोका है।

को अंजाम देते हैं। पिछले नौ वर्षों में इन्होंने 4,000 टन कचरा समुद्र में जाने से रोका है।

अब जब बप्पा की विदाई के दिन करीब आ रहे हैं, तो चीनू मुंबइकरों से अपील कर रहे हैं कि वे अगले शनिवार, यानी 26 सितंबर को उनकी मुहिम का हिस्सा बनें और विसर्जन के बाद समुद्र तटों से गणपति प्रतिमा के अवशेषों की सफाई कर अपनी आस्था को गरिमामयी रूप दें। भारत के हर जल स्रोतों को चीनू जैसे वॉरियर्स की जरूरत है।

प्रस्तुति : चंद्रकांत सिंह

वो लम्हा

सचिन नाग
प्रथम एशियाड स्वर्ण विजेता भारतीय

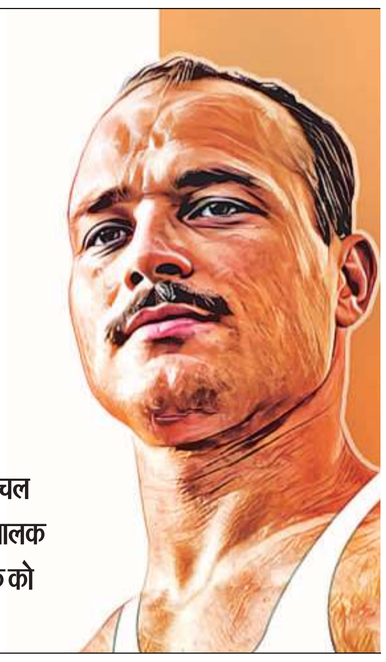

गंगा और बनारस ने बनाया तैराक

तब बेताबी बनारस में भी भरपूर थी। गंगा जी के एक घाट पर जनसभा चल रही थी। वहां जोश में सराबोर भारतीयों के बीच दस वर्षीय बांग्लाभाषी बालक भी था। अचानक पुलिस ने धावा बोल दिया, भगदड़ मच गई। उस बालक को जब कुछ न सूझा, तो वह दौड़कर गंगा जी में कूद गया। लगा तैरने।

वह गुलामी का त्रासद दौर था। कोई भारतीय अपने सागर तट से एक मुट्ठी नमक भी उठाता, तो अंग्रेज पुलिस उसे उठा ले जाती थी। ऐसे अन्याय के विरुद्ध ही सविनय अवज्ञा आंदोलन का बिगुल बजाया गया। साल 1930 की गर्मियों में सख्त कानून तोड़ते हुए मोहनदास करमचंद गांधी ने नमक बनाने की शुरुआत की और पूरा देश नमक बनाने व कानून तोड़ने को बेताब हो गया।

तब यह बेताबी बनारस में भी भरपूर थी। गंगा जी के एक घाट पर जनसभा चल रही थी। वहां जोश में सराबोर भारतीयों के बीच दस वर्षीय बांग्लाभाषी बालक भी था। तभी अचानक पुलिस ने धावा बोल दिया, भगदड़ मच गई। बालक को जब कुछ न सूझा, तो वह दौड़कर गंगा जी में कूद गया। लगा तैरने। उसके बड़े भाई स्वतंत्रता के लिए जेल जा चुके थे, पर यह बालक जेल जाना नहीं चाहता था, तो वह पुलिस की पकड़ से बचने के लिए तैरता जा रहा था। तैरते-तैरते वह ऐसे स्थान पर पहुंचा, जहां से एक तैराकी स्पर्द्धा शुरू होने वाली थी। छिपने के लिए वह बालक तैराकों के बीच जा खड़ा हुआ। जब बाकी तैराक गंगा जी में कूदे, तो वह भी कूद गया। उसे लगा कि अगर वह मुकाबले में पीछे रहा, तो उसे पहचान लिया जाएगा, तो वह पूरी ताकत से तेज तैरने लगा।

नतीजा यह कि स्पर्द्धा के बाद जब वह गंगा जी से निकला, तो सब चकित रह गए कि एक बालक तीसरे स्थान पर आया है। बालक की प्रशंसा का शुभारंभ हुआ कि यह चपल तैराक बचपन में बड़ों के दांत खट्टे कर रहा है, तो बड़ा होकर न जाने क्या करेगा? फिर क्या था, पूरे बनारस में तेज तैराकों में उसकी गिनती होने लगी। आकस्मिक तैराकी ने बालक के जीवन को बदल दिया। गंगा जी में कोई भी तैराकी प्रतियोगिता होती, तो उसे विशेष रूप से बुलाकर लोग अद्भुत तैराकी का आनंद लेने लगे।

कुछ ही वर्ष बाद देश के मशहूर तैराक जैमिनी दास अपने तैराकों की टीम के साथ कोलकाता से वाराणसी आए। बनारस के बालक ने प्रतियोगिता में कोलकाता के तैराकों को बहुत आसानी से पछाड़ दिया। अपनी टीम के सर्वश्रेष्ठ तैराकों के हारने से हैरान जैमिनी दास ने पूछा, 'यह किशोर तैराक कौन है?' उन्हें बनारसवासियों ने बड़े गर्व से बताया, 'इस बनारसी तैराक का नाम सचिन नाग है।' जैमिनी दास ने ज्यादा वक्त जाया न किया। वह बहुत प्रयास से सचिन नाग को प्रशिक्षण के लिए कोलकाता ले गए। सचिन कोलकाता में जैमिनी दास के ही घर रहने लगे और स्थानीय क्लब में तैराकी व वाटर पोलो के अभ्यास में लग गए।

बनारस ने कोलकाता को निराश नहीं किया। पुख्ता प्रशिक्षण के बाद सचिन नाग ने 19 की उम्र में 1 मिनट 4 सेकंड समय के साथ 100 मीटर फ्रीस्टाइल स्पर्द्धा में राष्ट्रीय रिकॉर्ड की बराबरी कर ली और 2 मिनट 29 सेकंड समय के साथ 200 मीटर फ्री-स्टाइल का रिकॉर्ड तोड़ दिया। अगले ही वर्ष देश के नंबर वन तैराक दिलीप मित्रा को पछाड़कर नया रिकॉर्ड रच दिया। प्रतिभा कुछ इस तरह निखरी कि जिस भी स्पर्द्धा में वह उतरते, अव्वल आते। तब देश आजाद होने वाला था और सचिन ओलंपिक में भाग लेने के सपने देख रहे थे, पर कोलकाता में दंगे के हालात बन गए। एक दिन वह प्रशिक्षण से लौट रहे थे और एक गोली उनके दाहिने पैर में आ लगी, हड्डी टूट गई। पांच महीने अस्पताल में रहे, मगर न दृढ़ता पर आंच आई और न सपना टूटा। डॉक्टरों ने कह दिया, फिर तैराकी में दो साल लग जाएंगे। तब सचिन कोलकाता से फिर घर बनारस लौट आए। यहां उनकी सेवा शुरू हुई। कुछ कुशल स्थानीय मालिश वालों ने बहुत नफासत से उनके पैरों को मजबूत करना शुरू किया और एक दिन घाट से नीचे उतार दिया। गंगा जी मानो सचिन नाग की प्रतीक्षा कर रही थीं।

अब इतिहास में दर्ज है, 8 मार्च 1951 को वह मौका आया, जब दिल्ली में पहली बार एशियाई खेलों का आगाज हुआ। दिग्गज विदेशी तैराकों को पछाड़कर सचिन नाग ने 100 मीटर फ्री-स्टाइल स्पर्द्धा में स्वर्ण जीत लिया। यह एशियाड में भारत का पहला स्वर्ण था। वहां मौजूद प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू प्रोटोकॉल तोड़कर दौड़ पड़े और सचिन नाग को गले लगा लिया। भाव विभोर प्रधानमंत्री ने अपनी कोट की जेब से लाल गुलाब निकालकर सचिन नाग को बड़े प्यार से सम्मानित किया।

आज भी अनमोल है वह पदक, जो एशियाई खेलों में तैराकी स्पर्द्धाओं में भारत का एकमात्र स्वर्ण है। अपने समय में खेल-प्रतिकूल परिवेश और अनेक अभावों से जूझते हुए भी सचिन नाग (1920-1987) देश के तैराकों के प्रकाश स्तंभ रहे। आरती साहा से नफीसा अली तक भारतीय तैराकों की नई पीढ़ी को उन्होंने तैयार किया। देर से ही सही, 2020 में उन्हें मरणोपरांत ध्यानचंद पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अचरज नहीं, जब भी एशियाई खेल होते हैं, सचिन नाग की बहुत याद आती है।

प्रस्तुति : ज्ञानेश उपाध्याय

हिंदी का सपना मनी मनी

तिरछी नजर

सुधीश पचौरी हिंदी साहित्यकार

जब से यह खबर आई है कि हिंदी के कविकुल भूषण और कवियों के कवि को '21 लाख' मिला है, तभी से 'मेरा मन डोले मेरा तन डोले' हो रहा है। अधिकांश लेखक बधाइयां दे रहे हैं। मैं चार बार दे चुका हूं। सोचता हूं, जैसे उनके दिन फिरे, अपने भी फिरें। आज उन्हें 21 लाख मिले हैं, कल एक करोड़ मिलें। कारण, वह हिंदी साहित्य के 'पाइड पाइपर' (चमत्कारी पुरुष) हैं। वह रास्ता दिखाते हैं, हमारे जैसे मूषक पीछे-पीछे दौड़े चले आते हैं।

वह हीरो हैं, हम जीरो हैं। वह नवोन्मेषी हैं, नवाचारी हैं। हमेशा दूर की कौड़ी लाते हैं। अवसर की जैसी सटीक पहचान उन्हें है, बड़े-बड़े अचूक अवसरवादियों को भी नहीं। अवसर आया, तो लपक लिए; अवसर आया, तो लौटा दिए। पहले लपककर नाम कमाया, फिर लौटाकर। हम जैसे फुकरों को जब कुछ मिला ही नहीं, तो क्या लौटाएं?

पहली बधाई दी, तो सोचा कि सर जी से धन्यवाद मिलेगा। जब नहीं मिला, तो दूसरी बधाई दी। तब भी धन्यवाद न आया, तो तीसरी 'गुलदस्ता विद हाथ-जोड़ू इमोजी' भेजी। इसके बाद भी धन्यवाद न मिला, तो प्रशस्ति में टिप्पणी लिख भेजी। फिर भी कुछ न आया, तो मन को समझाया- *मन रे तू काहे ना धीर धरे?* ऐसे अवसरों पर धन्यवाद देने की फुरसत ही किसे होती है? बंदा धन्यवाद दे कि बधाइयां गिने? ऐसे मौकों पर बड़े लोग वीतराग हो जाते हैं।

अपनी हिंदी का मन तो 'मनी' में बसता है। इसीलिए इस बार हिंदी में वह विचारधारात्मक सवाल उतने जोर से नहीं उठा, जैसे उठा करता था और विचारधारात्मक संघर्ष का कारण बन जाता था। ईर्ष्यादग्ध आत्माएं पूछने लगती थीं कि इस पैसे का दाता कौन है? इतना पैसा कहां से आया? वह किसी कसाले का है या मसाले का? किसी सोरोस का है कि टूलकिट का? पाप का है कि पुण्य का? मेहनत का है कि तोहमत का? इस पैसे का रंग क्या है? काला कि सफेद?

बहरहाल, ऐसे मार्मिक सवालों का जवाब मुझे महाभारत के वन पर्व के यक्ष-युधिष्ठिर संवाद में मिला- *धर्मस्य तत्वं निहितम् गुहायाम् महाजनो येन गतः स पंथाः*, अर्थात धर्म का मर्म गुफा में निहित है। धर्म के मर्म की खोज में इधर-उधर भटकने से बेहतर है कि मनुष्य उसी मार्ग पर चले, जिस पर श्रेष्ठजन चलते हैं। आज के अनेकार्थी युग में इसका एक अर्थ इस प्रकार भी हो सकता है कि इस कलियुग में असली अर्थ तत्व किसी महाजन की तिजोरी में निहित रहता है। उसके लिए इधर-उधर अटकने-भटकने की जगह हे हिंदी लेखक, तू हमेशा सही, यानी 'पॉलिटिकली करेक्ट' मार्ग पर चल। उसी पर तुझे तेरा उचित अर्थ मिलेगा।

यूं भी अपने जैसे गरीब रथयात्री को उचित 'अर्थ' मिलता भी तो कैसे? हमने तो अपना भाव यूं ही गिरा रखा है। ऐसे में, कोई दाता हमें लिफ्ट क्यों दे? शहर में किसी ने अचानक हिंदी-साहित्य की सेवा के लिए बुला लिया, तो दौड़ लिए और एक गमला, सौ-पचास रुपये वाले अंगवस्त्रम् या अंगोछे में हिंदी साहित्य की सेवा करके खुश हो लिए।

बचपन में ही हिंदी के साहित्यिक कीट के काटे किसी मोटे आसामी ने दिल्ली से बाहर के शहर में अपने दादाजी/ नानाजी/ दादीजी/ नानीजी की स्मृति में आयोजित साहित्य समारोह के लिए बुला लिया, तो टैक्सी किराया प्लस पांच-दस हजार तक का अर्थ प्राप्त हुआ। इसी में गर्वोन्नत हो गए, लेकिन लाख-दो लाख के दर्शन आज तक न हुए।

इसीलिए, जब अपने कविकुल गुरु को 21 लाख मिलने की खबर आई, तो हम भी लाइन में लग लिए। सच कहूं, हिंदी की गरीबी हटे, तो हिंदी बने। हिंदी का सपना 'मनी-मनी'। अपना भी सपना मनी-मनी। सबका सपना मनी-मनी। अपना तो कुलगीत ही है- अपना सपना मनी-मनी और साहित्य गीत है- कभी तो मिलेगी, कहीं तो मिलेगी, एक करोड़ की मंजिल राही!

कटाक्ष

राजेंद्र धोड़पकर

अपने लेखन में बेबाक और समाज की कड़वी सच्चाइयों को उजागर करने वाले मंटो ने भारत-विभाजन के दर्द, हिंसा और अमानवीयता को अपनी कहानियों में बेहद प्रभावी ढंग से चित्रित किया है। पाखंड, दमित इच्छाओं और वेश्यावृत्ति जैसे वर्जित माने जाने वाले विषयों पर उन्होंने जमकर लिखा। कड़वी सच्चाई बयां करने के कारण उन पर भारत और पाकिस्तान, दोनों ही जगहों पर मुकदमे हुए, लेकिन वे डरे नहीं और बाइज्जत बरी भी हुए। उनकी लिखी 'टोबा टेक सिंह', 'खोल दो', 'ठंडा गोश्त' और 'बू' जैसी कहानियां विश्व साहित्य में मील का पत्थर हैं। पेश है सआदत हसन मंटो (11 मई 1912-18 जनवरी 1955) की चर्चित 'इश्किया कहानी' से एक अंश...

इश्किया कहानी

इलस्ट्रेशन : यशवंत नामदेव

प्रेम-कथा-13

■ सआदत हसन मंटो

जमील की जब दूसरी कोशिश भी बार-आवर साबित न हुई, तो वो दो महीने तक खामोश रहा। इस दौरान में उसने इश्क में गिरफ्तार होने की कोई नई कोशिश नहीं की, लेकिन इसके बाद उसको एक दम दौरा पड़ा और उसने एक हफ्ते के अंदर-अंदर पांच-छह लड़कियां अपनी इश्क की बंदूक के लिए निशाने के तौर पर मुंतखब कर लीं, पर नतीजा वही ढाक के तीन पात। सिर्फ चार लड़कियों के मुतअल्लिक मुझे उसकी इश्किया मुहिम के बारे में इल्म है।

पहली ने जो उसकी दूर-दराज की रिश्तेदार थी, अपनी मां के जरिये उसकी मां तक ये अल्टीमेटम भिजवा दिया कि अगर जमील ने उसको फिर बुरी नजर से देखा, तो उसके हक में अच्छा नहीं होगा।

दूसरी गौर से देखने पर चेचक के दागों वाली निकली। तीसरी की छठे-सातवें रोज एक कसाई से मंगनी हो गई। चौथी को उसने एक लंबा इश्किया खत लिखा, जो उसकी मौसी की बेटी अज्रा के हाथ आ गया। मालूम नहीं किस तरह। पहले जमील उसका मजाक उड़ाया करता था, अब उसने उड़ाना शुरू कर दिया। इतना कि जमील की नाक में दम आ गया।

जमील ने मुझे बताया, 'सआदत! ये अज्रा जिसे हम बेवकूफी की हद तक सादा-लौह समझते हैं, सख्त जालिम है, सब समझती है। जिस लड़की को मैंने खत लिखा था और गलती से अपनी मेज की दराज में रख कर ये सोचने में मशगूल था कि वो इसका क्या जवाब लिखेगी, ये कमबख्त जाने कैसे ले उड़ी। अब उसने मेरा नात्का बंद कर दिया। बाज औकात ऐसी तल्ख बातें करती है कि मुझे रुलाती है और खुद भी रोती है। मैं तो तंग आ गया हूं।'

उससे बहुत ज्यादा तंग आकर उसने अपने इश्क की मुहिम और तेज कर दी। अब की उसने चौदह लड़कियां चुनीं, मगर अच्छी तरह गौर करने के बाद उनमें से सिर्फ एक बाकी रह गई। दस उसके मकान से बहुत दूर रहती थीं, जिनको हर रोज हतमी तौर पर देखने के मुतअल्लिक उसका दिल गवाही नहीं देता था। दो ऐसी थीं, जिनका खानदानी होने के बारे में उसे शुबहा था। बारह हुईं, तेरहवीं ने एक दिन ऐसी बुरी तरह घूरा कि उसके औसान खता हो गए।

चौदहवीं जो कि चौदहवीं का चांद थी, मुल्तफित हो जाती, मगर वो कमबख्त कम्युनिस्ट थी। जमील ने सोचा कि इसका इल्तिफात हासिल करने के लिए वो जरूर कम्युनिस्ट बन जाता, खादी के कपड़े पहन कर मजदूरों के हक में दस-बारह तकरीरें भी कर देता, मगर मुसीबत ये थी कि उसके वालिद साहब रिटायर्ड इंजीनियर थे, उनकी पेंशन यकीनन बंद हो जाती। यहां से ना-उम्मीदी हुई, तो उसने सोचा कि इश्कबाजी फुजूल है, शराफत यही है कि वो किसी से शादी कर ले। इसके बाद अगर तबीयत चाहे, तो अपनी बीवी की मोहब्बत में गिरफ्तार हो जाए। चुनांचे उसने मुझे इस फैसले से आगाह कर दिया। तय ये हुआ कि वो अपनी अम्मी जान और अपने अब्बा जान से बात करे। बहुत दिनों की सोच-विचार के बाद उसने इस गुफ्तुगू का मुसव्वदा तैयार किया... सबसे पहले उसने अपनी अम्मी से बात की। वो खुश हुईं... इधर-उधर अपने अजीजों में उन्होंने जमील के लिए मौजूं रिश्ता ढूंढ़ने की कोशिश की, मगर नाकामी हुई।

पड़ोस में खान बहादुर साहब की लड़की थी, एम.ए.। बड़ी जहीन और तबीयत की बहुत अच्छी, मगर उसकी नाक चपटी थी। खाला की बेटी हुस्न आरा थी, पर बेहद काली। सुगरा थी, मगर उसके वालिदैन बड़े खसीस थे। जहेज में जितने जोड़े जमील की मां चाहती थी, उससे वो आधे देने पर भी रजामंद नहीं थे। अज्रा का तो कोई सवाल ही पैदा नहीं होता था।

जमील की मां ने बड़ी कोशिशों के बाद रावलपिंडी के एक मुअज्जज और मुतमव्वल खानदान की लड़की से बातचीत तय कर ली। जमील अपनी नाकाम इश्कबाजियों से इस कदर तंग आ गया था कि उसने अपनी मां से ये भी नहीं पूछा कि शक्ल-ओ-सूरत कैसी है। वैसे उसने अपने जिंदा तसव्वुर में इसका अंदाजा लगा लिया था और मुफस्सल तौर पर सोच लिया था कि वो उसकी मोहब्बत में किस तरह गिरफ्तार होगा।

उसने अपने इश्क की मुहिम तेज कर दी। अब की उसने चौदह लड़कियां चुनीं, मगर अच्छी तरह गौर करने के बाद उनमें से सिर्फ एक बाकी रह गई। दस उसके मकान से बहुत दूर रहती थीं, जिनको हर रोज हतमी तौर पर देखने के मुतअल्लिक उसका दिल गवाही नहीं देता था।

ये सिलसिला काफी देर तक जारी रहा। मैं खुश था कि जमील की शादी हो रही है। उसके मर्ज-ए-मुतअल्लिका ब इश्क का एक फकत यही वाहिद इलाज था। छह महीने गुजर गए। आखिर रावलपिंडी के उस मुअज्जज और मुतमव्वल खानदान, जिसका नाम गालिबन शरीफा था, उसकी मंगनी हो गई। इस तकरीब पर उसे ससुराल की तरफ से हीरे की अंगूठी मिली, जो वो हर वक्त पहने रहता था। इस पर उसने एक नज्म भी लिखी, जिसका कोई शेर मुझे याद नहीं। एक बरस तक सोचता रहा कि उसे अपनी दुल्हन को कब अपने यहां लाना चाहिए। आदमी चूंकि आजाद और रौशन खयाल किस्म का था, इसलिए उसकी ख्वाहिश थी कि मां-बाप से अलाहिदा अपना घर बनाए। ये कैसा होना चाहिए, उसमें किस डिजाइन का फर्नीचर हो, नौकर कितने हों, माहवार खर्च कितना होगा, सास के साथ उसका क्या सुलूक होगा, इन तमाम उमूर के बारे में उसने काफी सोच-विचार की। नतीजा ये हुआ कि लड़की वाले तंग आ गए। वो चाहते थे कि रुखसती का मरहला जल्द अज जल्द तय हो।

जमील इस बारे में कोई फैसला न कर सका, लेकिन उसकी अम्मी ने एक तारीख मुकर्रर कर दी। कार्ड वार्ड छप गए। वलीमे की दावत के लिए जरूरी सामान का बंदोबस्त कर लिया गया। उसके वालिद बुजुर्गवार शेख मुहम्मद इस्माईल साहब रिटायर्ड इंजीनियर बहुत मसरूर थे, मगर जमील बहुत परेशान था, इसलिए कि वो अपने बनने वाले घर का आखिरी नक्शा तैयार नहीं कर सका था।

रुखसती की तारीख 9 अक्तूबर मुकर्रर की गई थी। 8 अक्तूबर की शाम को बहुत देर तक, मेरा खयाल है रात के दो बजे तक, उस आने वाले हादिसे के मुतअल्लिक तबादला-ए-खयाल करते रहे, लेकिन किसी नतीजे पर न पहुंचे। आखिर तय ये हुआ कि जो होता है, होने दिया जाए।

और ये हुआ कि 9 अक्तूबर की सुबह को मुंह अंधेरे जमील मेरे पास सख्त इज्तिराब और कर्ब के आलम में आया और उसने मुझे ये खबर सुनाई कि उसकी मौसी की लड़की अज्रा ने जो बेवकूफी की हद तक सादा-लौह थी, खुदकुशी कर ली है, इसलिए कि उसको जमील से वालिहाना इश्क था। वो बर्दाश्त न कर सकी कि उसके महबूब-ओ-माबूद की शादी किसी और लड़की से हो। इस जिम्न में उस ने जमील के नाम खत लिखा, जिसकी इबारत बहुत दर्दनाक थी। मेरा खयाल है कि ये तहरीर यादगार के तौर पर उसके पास महफूज होगी।

(साभार : रेख्ता)

पुस्तकें आई हैं

सिरे से खारिज
(व्यंग्य-संग्रह)

लेखक : अनूप मणि त्रिपाठी
प्रकाशक : लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज
मूल्य : ₹250

धर्म, राजनीति और भ्रष्टाचार व्यंग्य के प्रिय विषय हैं। इसे यों भी कह सकते हैं कि ये विषय व्यंग्य के लिए खाद-पानी का काम करते हैं और व्यंग्यकार इनसे पैदा हुई फसल को जमकर काटते हैं। इसके मायने यह नहीं हैं कि व्यंग्यकारों के पास विषयों की कमी है। विषय तो उनके पास दिनोदिन ऐसे बढ़ रहे हैं, जैसे देश की आबादी। मानो ये भी ऊपर वाले की देन है। बहरहाल, यहां 'सिरे से खारिज' को बिना खारिज किए नोटिस में लिया जा सकता है। इस व्यंग्य-संग्रह में पच्चीस व्यंग्य हैं। इनमें परमपिता से चुटकी भी ली गई है, तो दशानन रावण की कल्पित कहानियां भी हैं। हवा में फड़कते शब्द हैं, तो कुत्ता बनने में भलाई समझती सोच भी है। इनमें संवेदनाओं के दौड़ते घोड़े हैं, तो साथ ही जीवन की त्रासदी के बीच करुणा और व्यंग्य-विनोद भी है।

संपूर्ण समाधान
(अध्ययन)

लेखक : राजेंद्र गोयनका
प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
मूल्य : ₹400

कोई भी विचार, कोई भी समाधान अंतिम नहीं होता। उसमें सुधार की पर्याप्त संभावनाएं रहती हैं। यह गुंजाइश ही मानव सभ्यता को विकास का रास्ता दिखाती है। पुस्तक 'संपूर्ण समाधान' देश की सामाजिक-आर्थिक प्रगति के साथ-साथ प्रमुख समस्याओं पर भी विचार और सुझाव रखती है। इसमें कृषि, महंगाई, गरीबी-उन्मूलन, रोजगार, उद्योग व व्यापार, कर नीति, स्वास्थ्य, बुनियादी ढांचा, न्यायपालिका एवं कानून-व्यवस्था, शिक्षा, भ्रष्टाचार, जनलोकपाल तथा सांप्रदायिक सौहार्द जैसे बुनियादी और महत्वपूर्ण विषयों पर विमर्श है। देश में विभिन्न क्षेत्रों में क्या हो रहा है और क्या होना चाहिए, इस पर विस्तार से लेखक ने अपना दृष्टिकोण रखा है।

पंगा
(कहानी-संग्रह)

लेखिका : दिव्या माथुर
प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सीहोर (म.प्र.)
मूल्य : ₹500

'**राजश्री** के चेहरे पर एक युद्ध जारी था, जिसे शारदा जी देख पा रही थीं और मदद करने की स्थिति में होते हुए भी असहाय थीं, क्योंकि वह युद्ध का कारण नहीं जानती थीं।' हर इंसान अपने जीवन में एक युद्ध लड़ रहा है। कभी दूसरों से, तो कभी अपने आप से। 'तमन्ना' ऐसे ही एक युद्ध की कहानी है। इस युद्ध में एक तरफ राजश्री की तमन्ना है, तो दूसरी तरफ शारदा की और इन दोनों के बीच निखिल की अपनी तमन्ना है। यह कहानी एक आम मध्यवर्गीय परिवार के सुख-दुख, इच्छाओं को ईमानदारी से सामने रखती है। 'अंतिम तीन दिन', 'पंगा', 'दुल्ला-किलब', 'बोझ' इस संग्रह की अन्य उल्लेखनीय कहानियां हैं। लेखिका चूंकि ब्रिटेनवासी हैं, इसलिए इन कहानियों में वहां के समाज और संस्कृति का भी चित्रण है।

बंटवारा और थोआ खालसा की बर्बर यादें

1947 का बंटवारा सिर्फ नक्शे पर खींची गई लकीर नहीं थी। यह करोड़ों दिलों, साझी तहजीब और सदियों पुरानी यादों की निर्मम हत्या थी। पुस्तक '1947 : विभाजन के शेष सवाल' इतिहास के अनेक अनसुलझे और असहज पहलुओं की परतें उघाड़ती है। रावलपिंडी से 31 किमी. दूर थोआ खालसा गांव की औरतों पर हुआ बर्बर अत्याचार मानव सभ्यता के नाम पर कलंक है। प्रस्तुत है इस पुस्तक से एक अंश...

पुस्तक अंश

अमृता प्रीतम और सआदत हसन मंटो की 'पिंजर' और 'खोल दो' कहानियां विभाजन की त्रासदी के उस पहलू को सामने लाती हैं, जो बेहद दिल दहलाने वाला था। इन कहानियों में पागलपन के उस दौर में औरतों के साथ हुई ज्यादतियों को चित्रित किया गया है। उस समय सरहद के आर-पार अनगिनत महिलाओं के साथ कई तरह की हिंसा की गई। महिलाओं का अपहरण और बलात्कार किया गया। उनकी जबरन शादी, जबरन धर्म परिवर्तन और हत्या की गई।

इस वहशीपन की शिकार हिंदू, मुसलमान और सिख औरतें समान रूप से हुईं। जालिमों ने महिलाओं को विकृत भी किया। उनके स्तन काट दिए गए थे। उन्हें नग्न करके सड़कों पर घुमाया गया था और उनके शरीर पर 'दूसरे' समुदाय के धार्मिक प्रतीकों को उकेरा गया था। अपनी पुस्तक 'स्टर्न रेकनिंग' में मशहूर लेखक जी. डी. खोसला लिखते हैं कि जालिमों ने युवतियों का उनके रिश्तेदारों के सामने बलात्कार किया था। बेशक, इस तरह की क्रूर घटनाएं बताती हैं कि बंटवारे के समय महिलाओं को ज्यादा जुल्म झेलना पड़ा था।

अभागी औरतों को उनके अपने घरों के मर्दों ने आत्महत्याएं करने के लिए मजबूर किया या सम्मान के नाम पर उन्हें मार डाला गया। ऐसी महिलाएं भी थीं, जिन्होंने अपनी इच्छा से अपनी 'पवित्रता' को बनाए रखने के लिए आत्महत्या की थी और बाद में उन्हें 'शहीद' के रूप में महिमामंडित किया गया था। रावलपिंडी के थोआ खालसा गांव में करीब 90 महिलाओं ने कुएं में छलांग लगा दी थी। लगभग सभी औरतें सिख थीं।

'द स्टेट्समैन' में 15 मार्च, 1947 को छपी अपनी रिपोर्ट में इस रोंगटे खड़ी करने वाली घटना की तुलना सती प्रथा से की गई थी। रावलपिंडी से 31 किमी. दूर है थोआ खालसा गांव। यह गांव पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद से 35 किमी. दक्षिण-पूर्व में स्थित है। कहा जाता है कि 18वीं सदी में करम सिंह नाम के एक सिख जागीरदार ने यह गांव बसाया था। इसके अलावा सन् 1874 में, प्रसिद्ध सिख धर्मशास्त्री निहाल सिंह ठाकुर ने थोआ खालसा आकर दुख भंजनी नामक एक डेरे की स्थापना की थी, जो बाद में एक गुरुद्वारे में बदल गया था। वहां उन्होंने अपनी मृत्यु तक कीर्तन और समाज सेवा का काम जारी रखा। सन् 1940 के दशक तक थोआ खालसा गांव पूरी तरह आबाद हो गया और यहां करीब 500 घर बस गए। यहां गुरुद्वारे भी बन गए।

रैनबैक्सी फार्मा के फाउंडर चेयरमैन भाई मोहन सिंह ने मुझे 1994 में अपने राजधानी के औरंगजेब रोड के बंगले में एक इंटरव्यू के दौरान बताया था कि सन् 1947 के सांप्रदायिक दंगों से पहले तक रावलपिंडी में हिंदू-सिख और मुसलमान अमन के साथ रहते थे। रावलपिंडी और इसके आसपास के गांवों में 6 मार्च, 1947 की शाम को सिखों और हिंदुओं को धमकाते हुए दंगाई थोआ खालसा में घुस गए। अगले दिन यानी 7 मार्च को हजारों लोग थोआ खालसा पर टूट पड़े। उन्होंने घरों को लूटना शुरू कर दिया। पहले तो थोआ खालसा के मुसलमानों ने गांव के सिखों को दंगाइयों से बचाया, लेकिन दंगाइयों की संख्या बढ़ने की वजह से उन्होंने भी हाथ खड़े कर दिए। इसी भीड़ ने औरतों की अस्मत लूटनी शुरू कर दी।

मशहूर लेखिका उर्वशी बुटालिया ने सीमा के आर-पार औरतों के साथ हुए जुल्मों पर वर्षों तक अध्ययन किया है। उन्होंने अपनी किताब 'द अदर साइड ऑफ साइलेंस' में बंटवारे के दौरान औरतों पर हुए अत्याचारों का मार्मिक वर्णन किया है। उन्हें थोआ खालसा घटना की तीन बची औरतों में से एक बसंत कौर से मिलने का मौका भी मिला था।

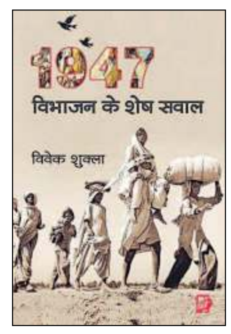

1947 विभाजन के शेष सवाल
(इतिहास)

लेखक : विवेक शुक्ला
प्रकाशक : प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, साहिबाबाद
मूल्य : ₹390

रोजनामचा

साप्ताहिक भविष्यफल
(20 सितंबर से 26 सितंबर 2026)

पं. राघवेन्द्र शर्मा
ज्योतिषाचार्य

स्कैन करें
भविष्यफल और व्रत-त्योहार जानने के लिए

मेष (21 मार्च-20 अप्रैल)
आत्मविश्वास में कमी रहेगी। मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। माता की सेहत में सुधार होगा। संतान की सेहत का ध्यान रखें। पढ़ाई के कार्यों पर ध्यान दें। व्यवधान आ सकते हैं। खर्चों में वृद्धि होगी।

वृष (21 अप्रैल-20 मई)
मन परेशान रहेगा। आत्मविश्वास में कमी रहेगी। पढ़ाई के कार्य तथा लेखनादि कार्यों में व्यस्तता रहेगी। परिश्रम अधिक रहेगा। लेखनादि कार्यों से आय में वृद्धि होगी। सेहत का ध्यान रखें।

मिथुन (21 मई-21 जून)
आत्मविश्वास भरपूर रहेगा। मन में उतार-चढ़ाव रहेगा। बातचीत में संतुलित रहें। नौकरी में अफसरों से व्यर्थ के वाद-विवाद से बचें। नौकरी में स्थान परिवर्तन से बचें। संतान सुख में वृद्धि होगी।

कर्क (22 जून-23 जुलाई)
मन परेशान रहेगा। आत्मविश्वास में कमी रहेगी। आत्मसंयत रहें। व्यर्थ के क्रोध से बचें। किसी मित्र से भेंट हो सकती है। मित्र के सहयोग से नौकरी के अवसर मिल सकते हैं। आय में वृद्धि भी होगी।

सिंह (24 जुलाई-22 अगस्त)
मन परेशान रहेगा। आत्मविश्वास में कमी रहेगी। धैर्यशीलता बनाए रखने का प्रयास करें। परिवार की सेहत का ध्यान रखें। खर्चों में वृद्धि होगी। रहन-सहन कष्टमय रहेगा।

कन्या (23 अगस्त-22 सितंबर)
आत्मविश्वास भरपूर रहेगा, परंतु मन परेशान भी रहेगा। आत्मसंयत रहें। क्रोध के अतिरेक से बचें। परिवार का साथ मिलेगा। कारोबारी कार्यों में व्यस्तता बढ़ेगी।

तुला (23 सितंबर-23 अक्तूबर)
आत्मविश्वास भरपूर रहेगा। कला व संगीत के प्रति रुझान बढ़ेगा। परिवार की सेहत का ध्यान रखें। खर्चों में वृद्धि होगी। किसी नए कारोबार में निवेश कर सकते हैं।

वृश्चिक (24 अक्तूबर-21 नवंबर)
आत्मविश्वास में कमी रहेगी। वाणी में मधुरता रहेगी। जीवनसाथी की सेहत का ध्यान रखें। परिवार का साथ मिलेगा। परिवार में धार्मिक कार्य हो सकते हैं। कारोबार में वृद्धि होगी।

धनु (22 नवंबर-21 दिसंबर)
मन प्रसन्न तो रहेगा, परंतु आत्मविश्वास में कमी हो सकती है। माता की सेहत का ध्यान रखें। घर-परिवार में धार्मिक कार्य हो सकते हैं। कारोबार में वृद्धि होगी। लाभ के अवसर मिलेंगे।

मकर (22 दिसंबर-19 जनवरी)
आत्मविश्वास भरपूर रहेगा, परंतु मन परेशान रहेगा। धैर्यशीलता बनाए रखें। परिवार के साथ किसी धार्मिक स्थान पर जा सकते हैं। परिवार की सेहत के प्रति सचेत रहें। लाभ के अवसर भी मिलेंगे।

कुंभ (20 जनवरी-18 फरवरी)
मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। आत्मविश्वास में कमी रहेगी। नौकरी में कार्यक्षेत्र में परिवर्तन हो सकता है। कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ सकता है। कारोबार में परिवर्तन के योग बन रहे हैं।

मीन (19 फरवरी-20 मार्च)
आत्मविश्वास तो भरपूर रहेगा, परंतु मन परेशान भी रहेगा। आत्मसंयत रहें। परिवार का साथ मिलेगा। कारोबार में वृद्धि होगी। भागदौड़ भी अधिक रहेगी। लाभ के अवसर भी मिलेंगे, परंतु खर्च भी बढ़ेंगे।

वर्ग पहेली : 8457

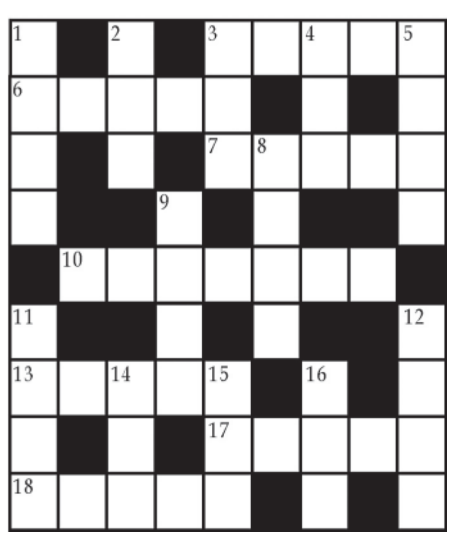

बाएं से दाएं
3. अनादर; अपमान; मान हानि (5)
6. दम न रहना; निर्जीव होना; मृत होना (3,2)
7. पारा; महादेव; शिव (5)
10. टुकड़े करना; बांटना; विभाग करना (4,3)
13. दलनायक; मुखिया; राष्ट्र अध्यक्ष; गणेश; शिव (5)
17. देशवासी; अपने इलाके का रहने वाला (5)
18. कठोर होना; करारा होना; सख्त होना (3,2)

ऊपर से नीचे
1. जो निवारण के योग्य न हो; अटल; जिसका कोई विकल्प न हो; अवश्यंभावी; जरूरी; बाध्यकारी (4)
2. ज्योतिषी; गणना करने वाला; गणित्र; लेखपाल (3)
3. एक प्रकार की आतिशबाजी; कंधार का विशेष फल; दाड़िम (3)
4. तैयार होना; समझना; स्वीकार करना (3)
5. नामजदगी; नाम लिखा जाना; पंजी में लिखा जाना (4)
8. अलग होना; खिसकना; दूर होना; टलना; स्थगित होना (4)
9. कूटनीति; राजदूतों का कार्य (4)
11. आंकड़ों का संसाधन करने वाला उपकरण; कंप्यूटर (4)
12. तुल्यता; बराबरी (4)
14. नाश करने वाला; मारने वाला; समाप्त करने वाला (3)
15. बोलना; प्रकट करना; सूचना देना; सुनाना; आदेश (3)
16. आमद; प्राप्ति; माल की आमद (3)

हरीश चन्द्र सन्सी, विविधा विधा, दिल्ली
(उत्तर अगले अंक में)

वर्ग पहेली 8456 का उत्तर

सुडोकू : 8411
*मध्यम

	3		2	5			4	
7			1		8			3
				3				
	9						6	4
4		1				5		7
5	8						9	
				1				
2			5		4			8
	5			6	9		7	

खेलने का तरीका : दिमागी खेल और नंबरों की पहेली है यह। तर्क से इसे हल कर सकते हैं। ऊपर नौ-नौ खानों के नौ खाने दिए गए हैं। आपको 1 से 9 की संख्याएं इस तरह लिखनी हैं कि खड़ी और पड़ी लाइनों के हरेक खाने में 1 से 9 की सभी संख्याएं आएं। साथ ही 3x3 के हरेक बक्से में भी 1 से 9 तक की संख्याएं हों। पहेली का हल हम कल देंगे।

हल : सुडोकू नं. 8410

7	1	6	4	9	8	5	3	2
3	9	8	6	2	5	4	1	7
2	4	5	3	1	7	6	9	8
5	3	9	2	6	1	7	8	4
6	7	4	5	8	9	3	2	1
8	2	1	7	4	3	9	5	6
9	5	2	1	7	4	8	6	3
1	8	7	9	3	6	2	4	5
4	6	3	8	5	2	1	7	9

व्रत और त्योहार | पंचांग | पं. ऋभुकांत गोस्वामी

20 सितंबर, रविवार, **शक संवत्** : 29 भाद्रपद (सौर) 1948, **पंजाब पंचांग** : 04 आश्विन मास प्रविष्टे 2083, **इस्लाम** : 08 रबि-उल्सानी, 1448, **विक्रमी संवत्** : भाद्रपद शुक्ल नवमी तिथि सायं 05.52 मिनट तक। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र, सौभाग्य योग अपराह्न 03.23 मिनट तक पश्चात शोभन योग, कौलव करण। चंद्रमा धनु राशि में (दिन-रात)।

सूर्य दक्षिणायन। सूर्य उत्तर गोल। शरद ऋतु। सायं 04.30 मिनट से सायं 06 बजे तक राहुकालम्। श्री श्रीचंद नवमी (उदासीन संप्रदाय)। श्री भागवत सप्ताह पाठारंभ।

वास्तु सलाह | आचार्य मुकुल रस्तोगी

स्वास्थ्य लाभ के लिए कुछ उपयोगी वास्तु उपाय :

- बीमार व्यक्ति को दवा की पहली खुराक भगवान शिव को स्मरण करके दें। सोमवार को अपनी श्रद्धानुसार शिव मंदिर में कुछ भेंट अर्पण करें। पूर्णिमा के दिन शिव मंदिर में जाकर शंकर भगवान से अपने परिवार के उत्तम स्वास्थ्य की प्रार्थना करें। उसके बाद अपनी सामर्थ्यनुसार अन्न या मिठाई का दान जरूरतमंदों को दें। किसी भी सोमवार या पूर्णमासी को किसी असहाय रोगी की दवाई देकर सहायता करें। किसी अस्पताल में अपनी सामर्थ्य के अनुसार कुछ धन दान करें। मंगलवार एवं शनिवार को हनुमान जी का सिंदूर रोगी के मस्तक पर लगाएं। अशोक के पेड़ के नीचे या पास में बैठकर शांत मन से प्रार्थना करना सकारात्मक परिणाम देता है।

गणपती बाप्पा, भक्तांच्या भक्तीवर भरवसा नाय काय..?

अतुल कुलकर्णी
संपादक, मुंबई

गणपती बाप्पा,
साष्टांग दंडवत.

तुझे महाराष्ट्रातल्या घराघरात भव्य आगमन झाले आहे. तुझ्या स्वागताला कुठेही फारसे डीजे वाजताना दिसले नाहीत. तुला डीजे आवडत नाही का? असो. डीजेचे जे काही व्हायचं ते होईल. आम्ही इतक्या प्रेमाने तुला घरी आणतो. तुझी पूजा करतो. तुझ्यासाठी छान छान मोदक करतो. प्रत्येक जण आपल्या क्षमतेनुसार तुझ्या अवतीभवती डेकोरेशन करतो. ज्याला जसे जमेल तसे तुझ्या भोवती तुला प्रसन्न वाटावे, छान वाटावे म्हणून प्रत्येक जण सजावट करतो. कुठे फुलांची आरास, कुठे दिव्यांचा लखलखाट, कुठे छोटासा गणपती आणि कुठे भव्य मंडप. फरक फक्त डेकोरेशनमध्ये आहे, तुझ्यावरील भक्तीमध्ये नाही. आम्ही सकाळ-संध्याकाळ पूजा करतो. मोदक करतो. तुझ्यासाठी उपवास करतो. दहा दिवस घरात तुझी मनापासून सेवा करतो; पण तरीही आम्हाला सांगितलं जातं की, लालबागला जाऊन दर्शन घेतलं की बाप्पा जास्त प्रसन्न होतो! हे खरं आहे का, बाप्पा? मनात आलेले प्रश्न तुला नाही विचारायचे तर कोणाला विचारणार..?? की, बाप्पा, तुझा भक्तांच्या भक्तीवर भरवसा नाही का?

का? लालबागला जाऊन तुझे दर्शन घेतले की तू प्रसन्न होतोस, असे सगळे जण सांगतात. तू आमच्याशी पक्षपात तर करीत नाहीस ना..? त्या लालबागला व्हीआयपी रांग वेगळी... थेट गाड्या आत घेऊन जाणाऱ्यांची रांग वेगळी... जनरल रांग वेगळी... जनरल रांगेतले लोक आठ तास, दहा तास तसेच उभे असतात. व्हीव्हीआयपी रांगेतले लोक येतात, दर्शन घेऊन निघूनही जातात. तुझ्या दरबारातही आता 'फास्ट ट्रॅक' सीस्टिम सुरू झाली की काय? ज्यांच्याकडे चारचाकी गाडी त्यांना फास्ट ट्रॅक ठीक आहे. मात्र, आमच्यासारखे दुचाकीवर, सायकलवर आणि दोन पायांवर चालणारे ते कसे फास्ट ट्रॅकवर येणार..? तिकडे येणारे भक्त वेगळे आणि घराघरात तुझी पूजा करणारे भक्त वेगळे असे काही आहे का..?? त्यामुळे आम्हाला प्रश्न पडलाय की बाप्पा, तुझा भक्तांच्या भक्तीवर भरवसा नाही का?

बाप्पा, आमच्यासारख्या सामान्य भक्तांनी काय करायचं? तुझ्यावर श्रद्धा ठेवायची की आधी एखादी ओळख शोधायची? आणि दर्शनाला आलेल्या भक्तांचं आणखी एक रूप दिसतंय. तुझ्यापुढे हात जोडण्याआधी मोबाइल बाहेर! तुझ्याकडे पाहण्याआधी कॅमेरा ऑन! आरती सुरू झाली की कुणी व्हिडीओ काढतोय, कुणी सेल्फी घेतोय, कुणी रील बनवतोय. तुझ्या दर्शनाला येणारे तुझ्यासोबत स्वतःचा सेल्फी काढण्यासाठी येतात की फिन्स्टावर रिळा बनवायसाठी येतात हेच कळत नाही... बाप्पा, हे रिलवाले तुझं दर्शन घ्यायला येतात की तुझ्या नावाने स्वतःचं दर्शन जगाला घडवायला?

काही जणांना तुझ्यापेक्षा स्वतःचा फोटो महत्त्वाचा वाटतोय. तुझ्यासमोर उभं राहून डोळे मिटण्याऐवजी कॅमेऱ्यात डोळे उघडे ठेवून कोण किती 'लाइक्स' मिळवतोय, याचीच जास्त काळजी! बाप्पा, तुझ्या घरी येण्यासाठी भक्ती पुरेशी नाही का..? सामान्य भक्ताने तासन्तास रांगेत उभं राहणं हीच त्याची परीक्षा आहे का..? व्हीआयपीला कमी वेळ आणि सामान्य भक्ताला जास्त वेळ यात भक्तीचा नेमका हिशेब कोणता? आणि सर्वात महत्त्वाचं... तू घराघरात असताना तुझ्या दर्शनासाठी लालबागलाच यावं लागतं का..? की बाप्पा, खरं सांग... तुझा भक्तांच्या भक्तीवर भरवसा नाही का?

बाप्पा, काही प्रश्न पडलेत... खरी भक्ती मोठ्या मंडपात, लांब रांगेत, व्हीआयपी पासमध्ये असते की तुझ्यासाठी घरात काबाडकष्ट करणारी आई तुझ्यासाठी जो नैवेद्य बनवते त्यात असते..?? येणाऱ्या भक्तांना एक क्षणही डोके न टेकू देताच पुढे ढकलून देणाऱ्या मंडपात भक्ती असते की त्याच गर्दीत मुलाचा हात घट्ट धरून तुला नमस्कार करणाऱ्या आई-बाबांमध्ये असते..?? तुझ्या सोन्याच्या पायावर डोके टेकून स्वतःच्या सिनेमाचे, राजकारणाचे दान मागणाऱ्या भक्तामध्ये ती असते की खांद्यावर लहान मुलांना घेऊन तुझे रूप डोळे भरून पाहणाऱ्या मध्यमवर्गीय कुटुंबात असते..?? गाड्यांचा ताफा घेऊन, तुझ्या दरबारात, तुझ्या दारासमोर उभे राहणाऱ्या श्रीमंत माणसांमध्ये भक्ती जास्त असते की चार ट्रेन बदलून, दहा तास तुझ्या रांगेत उभे राहणाऱ्या भक्तांमध्ये ती जास्त असते..?? तुला निरोप देताना चिमुकली मुलं तुला घट्ट बिलगून ढसाढसा रडतात... त्यांची भक्ती निरागस असते की तुला निरोप देताना तुझ्या तराफ्यावर उभे राहून कमरेवर हात ठेवून फोटोग्राफरला पोज देणाऱ्या भक्तांमध्ये असते..?? देवा मला पाव असे म्हणायला आई शिकवते, तेव्हा चिमुकली मुलं 'देवा मला वडा आणि पाव दोन्ही दे' असे म्हणतात. या निरागसतेत खरी भक्ती असते की लाखोंची वर्गणी गोळा करून आम्हीच कसे दानधर्म करतो असे म्हणून मिरवणाऱ्यांमध्ये खरी भक्ती असते..? बाप्पा, खरं सांग... तुझा भक्तांच्या भक्तीवर भरवसा नाही का?

बाप्पा, आमची भक्ती साधी आहे, कधी अपुरी आहे, कधी चुकतेही; पण ती खोटी नाही. आम्ही तुला दाखवण्यासाठी नाही, जगण्यासाठी मानतो. तुझ्यासमोर फोटो काढण्यासाठी नाही, मन मोकळं करण्यासाठी उभे राहतो. म्हणून बाप्पा, आमच्यावर विश्वास ठेव. आम्ही तुझ्या दर्शनासाठी गर्दी करू; पण तुझी मर्जी मिळवण्यासाठी नाही... तर तू जवळ असल्याची जाणीव व्हावी म्हणून. आम्ही आरती करू, आजूबाजूच्या अंधारात तुझा प्रकाश राहावा म्हणून... लालबागचे दर्शन तू व्हीआयपीसाठी ठेव...आमची तक्रार नाही... तू मात्र आमच्यासाठी आमच्या घरातच, आमच्या जवळ तुझा सहवास आम्हाला अनंत काळ मिळू दे... बाप्पा, खरं सांगू, आमचा तुझ्यावरच भरवसा हाय..! गणपती बाप्पा, मोरया...

तुझाच, बाबूराव

स्थित्यंतर

प्राध्यापक निवडीसाठी आता हवी एआय-सक्षम पारदर्शक व्यवस्था

डॉ. राजन वेळूकर
माजी कुलगुरू, मुंबई विद्यापीठ

प्राध्यापकाची निवड म्हणजे केवळ एका व्यक्तीला नोकरी देणे नव्हे. आज निवडलेला शिक्षक पुढील वीस-पंचवीस वर्षांत हजारो विद्यार्थ्यांना घडवणार आहे. त्या विद्यार्थ्यांमधून उद्याचे संशोधक, उद्योजक, प्रशासक, शिक्षक आणि जबाबदार नागरिक घडणार आहेत. त्यामुळे शिक्षक निवडीतील चूक ही केवळ प्रशासकीय चूक नसते; तिची सामाजिक किंमत अनेक वर्षे मोजावी लागू शकते. म्हणूनच शिक्षक निवडप्रक्रियेचे अंतिम ध्येय 'जवळपास शून्य-त्रुटी' (नीअर झीरो एरर) व्यवस्थेकडे जाण्याचे असले पाहिजे.

महाराष्ट्र शासनाने अनुदानित महाविद्यालयांतील शिक्षक भरती अधिक वस्तुनिष्ठ आणि पारदर्शक करण्यासाठी शैक्षणिक पात्रता, संशोधन, नेट-सेट-जेआरएफ, प्रकाशने, संस्थेची क्रमवारी आणि मुलाखत अशा विविध घटकांवर आधारित गुणदान पद्धतीचा विचार केला आहे. मुलाखतीचे सीसीटीव्ही रेकॉर्डिंग करून ते सुरक्षित ठेवण्याची व्यवस्थाही पारदर्शकतेच्या दिशेने स्वागतार्ह पाऊल आहे.

शिक्षक भरतीत आर्थिक व्यवहार किंवा अन्य गैरप्रकार होतात, असे ठामपणे म्हणण्यासाठी पुरावा आवश्यक आहे. मात्र, निवड झालेले आणि न झालेले उमेदवारही खासगीत अशा शक्यता बोलून दाखवतात, ही धारणा दुर्लक्षित करता येणार नाही. गैरव्यवहाराइतकीच गैरव्यवहाराची व्यापक शंकाही संस्थेवरील विश्वासाला धक्का देऊ शकते. मात्र, प्रश्न असा आहे, कॅमेरा जे घडते ते रेकॉर्ड करू शकतो; पण जे घडते ते न्याय्य आहे, याची खात्री तो देऊ शकतो का? म्हणून आता प्रक्रिया केवळ रेकॉर्ड करण्याऐवजी ती अधिक निष्पक्ष बनवण्याची गरज आहे. एआय युग आपल्याला ती संधी देते.

देशाचे भविष्य कोणाच्या हातात देत आहोत ?

अंतिम स्तरावर अनुभवी तज्ज्ञाला कृत्रिम बुद्धिमत्तेच्या साहाय्याने केलेल्या मूल्यमापनापेक्षा स्वतंत्र किंवा वेगळे मत नोंदवण्याचा अधिकार असला पाहिजे. मात्र, हा अधिकार अमर्याद स्वेच्छाधिकार नसावा. कोणत्या निकषाच्या आधारे, उमेदवाराच्या कोणत्या उत्तरावर किंवा निरीक्षणावर, कोणत्या शैक्षणिक तत्त्वाच्या अथवा व्यावसायिक अनुभवाच्या आधारे हे वेगळे मत नोंदवले आहे आणि त्याचा अंतिम निवडीवर काय परिणाम झाला, याचे सविस्तर लेखी कारण देणे बंधनकारक असावे. हे कारण कायमस्वरूपी डिजिटल लेखापरीक्षण नोंदवहीचा भाग व्हावे.

ही व्यवस्था 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता विरुद्ध मानव' अशी नाही; ती 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता आणि मानवी प्रज्ञा' अशी आहे. शेवटी आपण एका प्राध्यापकाची निवड करत नाही, तर हजारो विद्यार्थ्यांच्या भविष्यात कोणाला प्रवेश देत आहोत, विद्यार्थ्यांच्या माध्यमातून देशाचे भविष्य कोणाच्या हातात देत आहोत याचा निर्णय घेत असतो.

निवडीसाठी अशी असावी चार-स्तरीय एआय-सक्षम फनेल

१ पहिल्या स्तरावर उमेदवाराची शैक्षणिक पात्रता, संशोधन, विषयज्ञान आणि प्रमाणित इतर कामगिरीचे तंत्रज्ञानाधारित मूल्यमापन व्हावे. शक्य तेथे नाव, जात, लिंग किंवा इतर ओळख लपवून उमेदवाराला सुरक्षित डिजिटल कोड देण्यात यावा. मूल्यमापन व्यक्तीच्या ओळखीचे नव्हे, तर तिच्या गुणवत्तेचे व्हावे.

२ **दुसऱ्या स्तरावर 'उमेदवार किती शिकला आहे?' याबरोबरच 'तो किती प्रभावीपणे शिकवू शकतो?' हे तपासले पाहिजे. उमेदवाराने तयार केलेले अध्यापन डिझाईन, बहुविद्याशाखीय दृष्टिकोन, नावीन्यपूर्ण अध्यापनपद्धती, तंत्रज्ञानाचा अर्थपूर्ण वापर आणि विद्यार्थ्यांमध्ये जिज्ञासा निर्माण करण्याची क्षमता स्वतंत्र तज्ज्ञांकडून तपासता येईल.**

३ तिसऱ्या स्तरावर उमेदवाराने प्रत्यक्ष विद्यार्थ्यांसमोर ४५ मिनिटांचा वर्ग घ्यावा. त्याचे विषयज्ञान, संवादकौशल्य, कठीण संकल्पना सोप्या करण्याची क्षमता, विद्यार्थ्यांना सहभागी करून घेणे आणि त्यांच्यात प्रश्न व विचार निर्माण करण्याची ताकद तपासली जावी. विद्यार्थ्यांचा गोपनीय डिजिटल अभिप्रायही योग्य मर्यादित मूल्यमापनाचा भाग करता येईल.

४ **चौथा स्तर असेल एआय-असिस्टेड अडाप्टिव्ह स्ट्रक्चर्ड इंटरव्ह्यू. पूर्वनिर्धारित कॉम्पिटन्सी फ्रेमवर्कच्या आधारे एआय स्क्रीनवर प्रश्न निर्माण करेल. प्रत्येक उमेदवाराचे प्रश्न वेगळे असू शकतील; परंतु त्यांची काठिण्य पातळी, बौद्धिक आव्हान आणि तपासली जाणारी कौशल्ये व क्षमता जवळपास समान असतील. उमेदवाराच्या उत्तरानुसार एआय पुढचा प्रश्न विचारू शकेल. निवड समिती उत्तरांचे पूर्वनिर्धारित मूल्यांकनावर स्वतंत्रपणे मूल्यमापन करेल आणि संपूर्ण प्रक्रिया सीसीटीव्हीमध्ये नोंदवली जाईल.**

एक अत्यंत महत्त्वाचा नियम असावा : शेवटचा स्तर पूर्ण होईपर्यंत कोणालाही उमेदवाराचे आधीच्या कोणत्याही स्तरावरील गुण कळणार नाहीत. अंतिम मुलाखतीतील तज्ज्ञांनाही पहिले तीन स्तरांचे गुण दिसणार नाहीत आणि एका तज्ज्ञाला दुसऱ्या तज्ज्ञाने दिलेले गुणही कळणार नाहीत. सर्व स्तर पूर्ण झाल्यानंतरच 'बंदिस्त गुणांकन प्रणाली' उघडून पूर्वनिर्धारित भारांकानुसार अंतिम गुण तयार होतील. त्यामुळे अँकरिंग, हालो इफेक्ट आणि पूर्वग्रहांचा प्रभाव मोठ्या प्रमाणात कमी करता येईल.

एक बाब ठळकपणे मान्य केली पाहिजे : एआय शिक्षक निवडणार नाही आणि एआयवर शंभर टक्के अवलंबूनही राहता येणार नाही. मानवी प्रज्ञा, संवेदनशीलता, संदर्भाचे आकलन आणि शिक्षक-विद्यार्थी नात्यातील सूक्ष्म पैलूंचे निर्दोष मूल्यमापन करण्याइतकी एआय आजही परिपक्व झालेली नाही.

अलीकडे सोशल मीडियावर तुम्हाला स्मार्ट चष्म्याच्या अनेक रील पाहायला मिळत असतील. त्यात समोरच्या व्यक्तीचे व्हिडीओ रेकॉर्डिंग सहज करता येते आणि तिला त्याची खबरबातही नसते. यावर मोठ्या प्रमाणात गोपनीयतेच्या भंगाची भीती व्यक्त होत आहे. संशय वाढवणाऱ्या या तंत्रज्ञानाविषयी जाणून घेवू.

स्मार्ट चष्मे की चालते, फिरते सीसीटीव्ही?

ॲड. (डॉ.) प्रशांत माळी
सायबर आणि एआय कायदा तज्ज्ञ

कधी काळी एखादी व्यक्ती आपले छायाचित्र किंवा व्हिडिओ काढत असेल तर तिच्या हातातील कॅमेरा किंवा मोबाइल फोन सहज दिसत असे. मात्र आज चित्र बदलले आहे. आता कॅमेरा तुमच्यासमोर असतो, पण तो कॅमेरा आहे हेच तुम्हाला कदाचित कळत नाही. कारण कृत्रिम बुद्धिमत्तेवर आधारित एआय स्मार्ट ग्लासेस (गॉगल्स) दिसायला साध्या चष्म्यांसारखे आहेत. मात्र त्यांच्या फ्रेममध्ये कॅमेरा, मायक्रोफोन, स्पीकर, इंटरनेट कनेक्टिव्हिटी आणि कृत्रिम बुद्धिमत्तेची क्षमता दडलेली असू शकते. हे चष्मे फोन कॉल करू शकतात, भाषांतर करू शकतात, समोरची वस्तू ओळखू शकतात, माहिती शोधू शकतात आणि सर्वात महत्त्वाचे म्हणजे समोर घडणाऱ्या घटनांचे ऑडिओ-व्हिडिओ रेकॉर्डिंग करू शकतात.

स्मार्ट चष्मा घातलेल्या अनोळखी व्यक्तीशी बोलताना ती आपले संभाषण रेकॉर्ड करत आहे का, ही शंका निर्माण होऊ शकते. यामुळे समोरील व्यक्ती मुक्तपणे बोलण्याऐवजी फक्त "हो", "नाही" अशा मर्यादित संवाद साधू शकते. ही बाब फक्त गोपनीयतेची नाही. ती मानवी संवादाच्या स्वातंत्र्याची आहे. समाजात प्रत्येक व्यक्ती दुसऱ्या व्यक्तीकडे संभाव्य रेकॉर्डिंग उपकरण म्हणून पाहू लागली, तर तंत्रज्ञानामुळे विश्वास वाढण्याऐवजी संशय वाढेल.

एसओपी बनविण्याची तयारी सुरू

स्मार्ट चष्म्यांचा प्रश्न हा केवळ नव्या गॅझेटचा प्रश्न राहिलेला नाही; तो गोपनीयता, डेटा संरक्षण आणि राष्ट्रीय सुरक्षेचा प्रश्न बनला आहे. महाराष्ट्र सरकारनेही हा धोका ओळखला आहे.

राज्याने एआय-आधारित स्मार्ट गॉगल्स, स्मार्ट चष्मे आणि इतर परिधान करता येणाऱ्या उपकरणांच्या सुरक्षित व नियंत्रित वापरासाठी एसओपी तयार करण्याची प्रक्रिया सुरू केली असून महाराष्ट्र सायबरच्या अतिरिक्त पोलिस महासंचालकांच्या नेतृत्वाखाली समिती नेमली आहे.

या समितीला तांत्रिक क्षमता, ऑडिओ-व्हिडीओ रेकॉर्डिंग, लाइव्ह स्ट्रीमिंग, चेहरा ओळख तंत्रज्ञान आणि डेटा संकलन यांसारख्या बाबींचा अभ्यास करून शिफारशी सादर करायच्या आहेत.

कायदा काय सांगतो?

डिजिटल वैयक्तिक माहिती संरक्षण अधिनियम २०२३ आणि डिजिटल वैयक्तिक माहिती संरक्षण कायदा नियम २०२५ यांनी भारतात डिजिटल वैयक्तिक डेटासाठी महत्त्वाची कायदेशीर चौकट उभी केली आहे.

अंतिम नियम नोव्हेंबर २०२५ मध्ये अधिसूचित झाले असून यातील विविध तरतुदींची अंमलबजावणी टप्प्याटप्प्याने होणार आहे. डिजिटल वैयक्तिक माहिती संरक्षण अधिनियमातील संमतीची संकल्पना स्पष्ट आहे, संमती मुक्त, विशिष्ट, माहितीपूर्ण, बिनशर्त आणि संदिग्धता नसलेली असावी.

तसेच, स्पष्ट आणि सकारात्मक कृतीद्वारे ती दिलेली असावी. परंतु स्मार्ट ग्लासेस कायदेशीर गुंतागुंत निर्माण करतात. समोरच्या व्यक्तीलाच जर तिचा डेटा गोळा होत आहे हे माहीत नसेल, तर माहितीपूर्ण संमती येणार कुठून? दुसरी अडचण अशी की डिजिटल वैयक्तिक माहिती संरक्षण कायद्याच्या कलम ३ अंतर्गत, एखाद्या व्यक्तीने केवळ वैयक्तिक किंवा कौटुंबिक वापरासाठी केलेल्या वैयक्तिक माहितीच्या प्रक्रियेला या कायद्याच्या कक्षेतून वगळण्यात आले आहे.

कव्हर स्टोरी

नागरिकांनी काय काळजी घ्यावी?

एखादी व्यक्ती स्मार्ट चष्मा वापरत असल्यास बोलताना नागरिकांनी सावध राहणे योग्य ठरेल.

बँकेचे ओटीपी, संकेतशब्द, गोपनीय कागदपत्रे, ग्राहकांची माहिती, वैद्यकीय तपशील, कंपनीची गोपनीय माहिती अशा उपकरणांसमोर उघडपणे बोलणे टाळावे.

कार्यालयांनीही बैठकीच्या कक्षांसाठी "रेकॉर्डिंग करणारी परिधान करण्यायोग्य उपकरणे वापरण्यास मनाई" असे स्पष्ट धोरण तयार करण्याची वेळ आली आहे.

तसेच बोर्डरूमच्या दारावरच 'मोबाइल फोन, स्मार्ट चष्मे आणि रेकॉर्डिंग करणारी परिधान करण्यायोग्य उपकरणे वापरण्यास मनाई आहे', असे स्पष्टपणे नमूद करायला हवे.

महाराष्ट्राच्या एसओपीमध्ये मूलभूत नियम असावेत

रेकॉर्डिंग सुरू असल्यास स्पष्ट दिसणारा एलईडी अनिवार्य असावा. तो झाकणे, निष्क्रिय करणे प्रतिबंधित असावे.

संवेदनशील भागात पूर्ण बंदी किंवा कडक नियंत्रण हवे.

रुग्ण, वैद्यकीय अहवाल किंवा डॉक्टर-रुग्ण संभाषणाचे अनधिकृत रेकॉर्डिंग होऊ नये.

लहान मुलांच्या चेहऱ्याची ओळख, आवाज आणि वर्तनविषयक माहिती अत्यंत संवेदनशील असते. शाळा, पाळणाघरे आणि मुलांशी संबंधित कार्यक्रमांमध्ये त्यांच्या माहितीच्या संरक्षणासाठी स्पष्ट आणि प्रभावी सुरक्षा उपाययोजना आवश्यक आहेत.

चष्मा वापरणाऱ्या व्यक्तीला रस्त्यावरून जाणाऱ्या प्रत्येक व्यक्तीची तात्काळ ओळख पटवण्याची मुभा मिळणे अत्यंत धोकादायक ठरू शकते.

रेकॉर्डिंग अनिश्चित काळासाठी साठवून न ठेवता, ज्या उद्देशासाठी ते करण्यात आले आहे त्यानुसार माहिती साठविण्याची निश्चित कालमर्यादा असावी.

एखाद्याचे रेकॉर्डिंग झाले असल्याचे त्याच्या लक्षात आल्यास, ते रेकॉर्डिंग हटविण्याची मागणी, तक्रार निवारणाची सुविधा किंवा तक्रार दाखल करण्यासाठी स्पष्ट मार्ग उपलब्ध करून देणे आवश्यक आहे.

जसे विमानतळांवर शस्त्रे किंवा इलेक्ट्रॉनिक उपकरणे शोधण्यासाठी तांत्रिक साधनांचा वापर केला जातो, त्याचप्रमाणे संवेदनशील परिसरात कॅमेरा असलेली परिधान करण्यायोग्य उपकरणे ओळखण्यासाठी आवश्यक आहे.

आपले आरोग्य आपल्या घरात

हवाबंद डब्यांमधील अन्न खाण्यापूर्वी...

डॉ. रोहिणी कुळकर्णी (पांढरे)
सदस्या, मायक्रोबायोलॉजिस्टस् सोसायटी, इंडिया

अन्न दीर्घकाळ जिवाणू, बुरशी किंवा रासायनिक बदलांपासून सुरक्षित ठेवण्याच्या वेगवेगळ्या पद्धती आहेत. 'कॅनिंग' ही अशीच एक अन्न दीर्घकाळ सुरक्षित ठेवण्याची शास्त्रीय पद्धत आहे. अन्नपदार्थ काचेच्या बरण्या अथवा डब्यांमध्ये भरून ठेवले जातात. योग्य तापमानावर गरम करून त्यातील जीवाणूंचा नाश केला जातो. त्यानंतर हवाबंद निर्वात डब्यामध्ये भरून ते वर्षानुवर्ष टिकवले जातात. यात मुख्यत्वे मांस, मासे, सी-फूड, सूप, जॅम, जेली, भाज्या, फळे, मशरूम, सॉसेजेस इत्यादी पदार्थांचा समावेश आहे.

योग्य प्रक्रिया केलेले अन्नपदार्थ अन्नविषबाधेसाठी कारणीभूत ठरत नाही. पण प्रक्रिया जर योग्य प्रकारे झाली नसेल तर अशा वस्तूंमध्ये दमटपणा राहतो आणि सूक्ष्मजीवांच्या पोषणासाठी योग्य वातावरण तयार होते. सूक्ष्मजीव हे थंड तापमान ते ५० अंश सेल्सिअस इतक्या उष्ण तापमानातही वाढू शकतात आणि ते वेगवेगळ्या जैव रासायनिक प्रक्रियांसाठी कारणीभूत ठरतात. यामुळे अन्नातील प्रथिने, कर्बोदके, चरबीयुक्त पदार्थ यांचे विघटन होते आणि अन्नपदार्थ खराब होऊन त्याचा रंग, पोत, स्वाद, चव बदलते तसेच त्यात विषारी घटकांची निर्मिती होऊन अन्न विषबाधा होते.

क्लॉस्ट्रीडीयम बोट्युलिनम हा अतिशय घातक जिवाणू आहे. हा जिवाणू माती, फळांचे पृष्ठभाग, मांस, मासे अशा अन्नपदार्थांमध्ये आढळून येतो. कॅनिंगची पद्धत योग्य नसेल तर त्याच्या बीजाणूंची ऑक्सिजनविरहित वातावरणात वाढ होते आणि हा जिवाणू रासायनिक प्रक्रियांद्वारे विष बाहेर टाकतो. या विषाचा परिणाम चेतासंस्थेवर, मज्जासंस्थेवर होतो. नैसर्गिकरित्या तयार झालेल्या विषांपैकी हा सर्वात घातक असून एक ग्रॅम विषामध्ये दहा लाख माणसे मृत्युमुखी पडू शकतात. बोटुलिनम हे अन्नात तयार झालेले विष खाल्ल्याने अर्धांगवायू होतो आणि श्वास घेणे सुद्धा अशक्य होऊन मृत्यू ओढवतो.

ही लक्षणे आढळल्यास ताबडतोब डॉक्टरांकडे जा

१. दृष्टी अस्पष्ट होणे
२. असह्य डोकेदुखी
३. अर्धांगवायू
४. त्वचेला मुंग्या येणे
५. शरीरात बदल जाणवणे

विषबाधा टाळण्यासाठी हे करा...

१. हवाबंद डब्यातील अन्न नेहमी मुदत समाप्तीची तारीख पाहूनच खरेदी करावे.

२. पदार्थांचे रंग, स्वाद पोत बदललेले आढळल्यास खाण्यास अयोग्य समजावे.

३. हवाबंद डबे फुगलेले, वाकडे झालेले असतील तर त्यातील अन्न वापरण्यास योग्य नसते.

४. डबा उघडल्यावर त्यात हवेचे बुडबुडे दिसल्यास असे अन्न खाण्यास अयोग्य समजावे.

इन्फोस्टोरी

महिलांची भरती वाढली, तरी पुढचा प्रवास खडतर

सार्वजनिक उपक्रमांत प्रतिनिधित्व ९.८ टक्क्यांवरच

केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमांमध्ये महिलांच्या रोजगाराचा प्रश्न पुन्हा ऐरणीवर आला आहे. आर्थिक वर्ष २०२४-२५ अखेरीस या उपक्रमांतील एकूण कर्मचाऱ्यांमध्ये महिलांचा वाटा केवळ ९.८ टक्के होता. विशेष म्हणजे पर्यवेक्षक स्तरावर महिलांचे प्रतिनिधित्व आणखी कमी, म्हणजे ८.७ टक्के राहिले. त्यामुळे प्रश्न केवळ महिलांना नोकरी मिळण्याचा नसून, त्या नोकरीत टिकतात किती आणि वरिष्ठ पदांपर्यंत पोहोचतात किती, याचाही आहे.

१४० महिला कर्मचारी एका वर्षात कमी

सरकारच्या ताज्या सार्वजनिक उपक्रम सर्वेक्षणानुसार, २०२४-२५ अखेरीस केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमांमध्ये ७६ हजार ६८५ महिला कर्मचारी कार्यरत होत्या.

२०२३-२४ मध्ये ही संख्या ७७ हजार ६२५ होती.

प्रतिनिधित्वाची तफावत

या सहा आघाड्यांवर काम करण्याची गरज

महिलांचा सहभाग वाढवायचा असेल तर केवळ भरतीवर भर न देता पुढील बाबींवर एकत्रितपणे काम करण्याची गरज आहे.

१. **भरती :** महिलांसाठी स्पष्ट आणि कालबद्ध उद्दिष्टे.

२. **पदोन्नती :** वरिष्ठ पदांवर जाण्यासाठी समान संधी.

३. **सुरक्षितता :** सुरक्षित प्रवास, निवास आणि कार्यस्थळ.

४. **बालसंगोपन :** कामाच्या ठिकाणी आवश्यक सुविधा.

५. **कौशल्य विकास :** तांत्रिक आणि रोजगाराभिमुख प्रशिक्षण.

६. **पुनर्नियुक्ती :** करिअरमध्ये खंड पडलेल्या महिलांसाठी पुन्हा रोजगाराच्या संधी.

पुढचा टप्पा काय?

महिलांना रोजगाराच्या संधी उपलब्ध करून देणे हा पहिला टप्पा आहे. त्या रोजगारात टिकणे, कौशल्य वाढवणे आणि वरिष्ठ जबाबदाऱ्यांपर्यंत पोहोचणे हा त्यापुढचा टप्पा आहे. केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमांतील ९.८ टक्क्यांचे प्रतिनिधित्व या दोन्ही टप्प्यांमध्ये अजून मोठी दरी असल्याचे दाखवते.

नोकरी टिकणार कशी?

महिलांसाठी नोकरीच्या ठिकाणची सुरक्षितता, कुटुंबाची जबाबदारी व प्रवास, बालसंगोपन हे तितकेच महत्त्वाचे आहेत. घरापासून दूर नियुक्ती झाल्यास करिअरच्या मध्यावर नोकरी सोडली जाते, असे तज्ज्ञांचे मत आहे.

पर्यवेक्षक स्तरावर घट

प्रतिनिधित्व महिलांची संख्या किती?

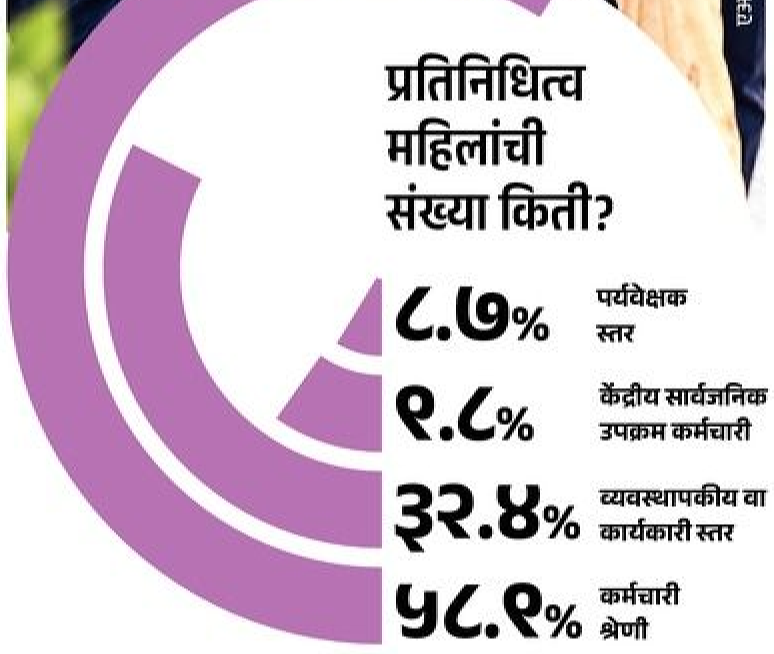

पुरुषप्रधान क्षेत्रे ठरतात मोठा अडथळा

केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमांमध्ये खाणकाम आणि उत्पादनासारख्या पुरुषप्रधान क्षेत्रांचा मोठा वाटा आहे. या क्षेत्रांमध्ये कामाच्या वेळा अनेकदा नियमित नसतात. लवचिक कामकाजाची सुविधा मर्यादित असते. बदलीची शक्यता असते. महिलांसाठी सुरक्षित निवास, सुरक्षित प्रवास, शाळा व बालसंगोपनाच्या सुविधा उपलब्ध नसतील, तर दीर्घकाळ नोकरी टिकवणे अधिक कठीण होते.

राजकीय प्रतिनिधित्व वाढले; रोजगार तफावत

महिलांच्या राजकीय प्रतिनिधित्वात गेल्या काही दशकांत वाढ झाली आहे. पहिल्या लोकसभेत महिलांचे प्रतिनिधित्व सुमारे ५ टक्के होते. सध्याच्या लोकसभेत ते १५ टक्क्यांपर्यंत पोहोचले आहे. राज्य विधानमंडळांमध्येही अद्याप कोणत्याही राज्यात महिलांचे प्रतिनिधित्व २०%पर्यंत पोहोचलेले नाही. खासगी क्षेत्रातील सुरुवातीच्या स्तरावरील नोकऱ्यांमध्ये महिलांचा वाटा ३३ टक्के आहे. त्या तुलनेत केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रमांतील महिला प्रतिनिधित्व ९.८ टक्के आहे.

हॉट-टॉपिक

अमेरिकेच्या आर्थिक सामर्थ्याला प्रत्युत्तर देणारी ‘ब्रिक्स’ परिषद

नवी दिल्लीतील १८ व्या ब्रिक्स परिषदेने भारताची जागतिक पत आणि राजनैतिक प्रभाव प्रचंड प्रमाणात वाढवला आहे. बहुध्रुवीय जग निर्माण करण्यात आणि ‘ग्लोबल साउथ’चा मजबूत आवाज बनण्यात भारताने बजावलेली भूमिका दूरगामी महत्त्वाची ठरणार आहे. भारताने जी-७ देशांना स्पष्ट संदेश दिला आहे.

डॉ. शैलेंद्र देवळाणकर
परराष्ट्र धोरण विश्लेषक

संपूर्ण जगाचे लक्ष लागून राहिलेली १८ वी ब्रिक्स शिखर परिषद नवी दिल्लीमध्ये १२ आणि १३ सप्टेंबर रोजी अत्यंत यशस्वीरीत्या पार पडली. या परिषदेच्या माध्यमातून भारताने जगाला, विशेषतः अमेरिका आणि जी-७ देशांना एक अत्यंत स्पष्ट संदेश दिला आहे. एका बाजूला रशियाचे राष्ट्राध्यक्ष पुतिन, तर दुसऱ्या बाजूला चीनचे राष्ट्राध्यक्ष जिनपिंग यांना एकाच व्यासपीठावर आणून भारताने आपल्या मुत्सद्देगिरीची आणि जागतिक प्रभावाची मोठी चुणूक दाखवून दिली आहे. ही परिषद जागतिक समीकरणे बदलणारी आणि भारताच्या वाढत्या सामर्थ्याची साक्ष देणारी ठरली आहे. या परिषदेसाठी ११ ब्रिक्स सदस्य, आणि ११ निरीक्षक देश उपस्थित होते.

भारताने जी-२० प्रमाणेच ब्रिक्सलासुद्धा जनसामान्यांपर्यंत नेण्याचे आणि एक चळवळ बनवण्याचे काम केले आहे. भारताने विकसित केलेले युपीआय किंवा फास्टॅग यांसारखे डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर आशिया, आफ्रिका आणि लॅटिन अमेरिकेतील विकसनशील देशांसाठी आदर्श उदाहरण ठरले आहे.

अनेकदा सर्वसामान्य माणसाच्या मनात प्रश्न येतो की, अशा परिषदांचा आपल्या रोजच्या जीवनाशी काय संबंध आहे? मुंबईमध्ये सुरू असलेल्या मेट्रोच्या महाप्रकल्पासाठीचा निधी ब्रिक्सच्या न्यू डेव्हलपमेंट बँकेकडून मिळालेला आहे. महाराष्ट्राच्या मंत्रिमंडळाने जून महिन्यात मंजूर केलेल्या एक अब्ज डॉलरच्या रस्तेसुधारणा प्रकल्पालाही याच बँकेने निधी दिला आहे. लखनऊमधील मेट्रो प्रकल्प, हैदराबादमधील मेगा ट्रॅफिक प्रोजेक्ट्स, यांना ब्रिक्स बँकेकडून वित्तपुरवठा केला जात आहे. आपल्याला कच्चे तेल रशिया, सौदी अरेबिया आणि यूएई या ब्रिक्स देशांकडून येते. भारत प्रतिवर्षी ७२ अब्ज डॉलरच्या सोन्याची आयात करतो, त्यापैकी ३३ टक्के सोने ब्रिक्स देशांमधून येते. ९०% मोबाइल बॅटऱ्या चीनमधून येतात. त्यामुळे आपल्या दैनंदिन गरजांमध्ये ब्रिक्सचे स्थान अत्यंत महत्त्वाचे आहे.

अमेरिकेच्या निर्बंधांना ‘ब्रिक्स’चा प्रतिकार; आखाती संघर्षात भारताची यशस्वी मध्यस्थी

अमेरिका किंवा पाश्चात्त्य देश जाचक आर्थिक निर्बंधांचे हत्यार वापरतात, तेव्हा त्याचा थेट फटका चामड्याचे उद्योग, गारमेंट इंडस्ट्री, डेअरी, फिशरीज, शेती उत्पादने, जेम्स अँड ज्वेलरी आणि वाहनांचे सुटे भाग निर्माण करणारे उद्योग यांना बसतो. ही सर्व क्षेत्रे श्रमप्रधान असून यात मध्यमवर्गीय नागरिक, कामगार आणि शेतकरी मोठ्या संख्येने कार्यरत आहेत.

अमेरिकेच्या एकतर्फी वर्चस्ववादी धोरणावर नियंत्रण ठेवण्याचे काम ‘ब्रिक्स’सारखी संघटनाच करू शकते. ब्रिक्समधील 'आरआयसी' म्हणजेच रशिया, भारत आणि चीन या तीन देशांची एकूण लष्करी आणि अण्वस्त्रक्षमता नाटो देशांपेक्षाही जास्त आहे. ऊर्जेची पुरवठा साखळी, दुर्मिळ खनिजे आणि मानवी संसाधने यांवरही या तीन देशांचे वर्चस्व आहे.

आखाती संघर्षाच्या पार्श्वभूमीवर इराण, सौदी अरेबिया आणि संयुक्त अरब अमिराती यांच्यात तणाव असूनही या परस्परविरोधी देशांच्या प्रमुखांना एकाच व्यासपीठावर आणून संयुक्त जाहीरनाम्यावर स्वाक्षरी घडवून आणणे, ही भारतासाठी मोठी राजनैतिक कसोटी होती आणि भारताने ती यशस्वीपणे पूर्ण केली.

‘ब्रिक्स’ परिषदेत भारताची राजनैतिक कुटनीती

१ या परिषदेतून भारताने चार महत्त्वाच्या मुद्द्यांवर यश संपादित केले आहे. पहिले यश म्हणजे पुतीन आणि शी जिनपिंग यांना प्रत्यक्ष भारतात आणणे. आयसीसीच्या अरेस्ट वॉरंटनंतर गेल्या तीन वर्षांत पुतिन फक्त तीन देशांमध्येच गेले; परंतु ब्रिक्स परिषदेसाठी ते भारतात दोन दिवस मुक्कामाला आले. गलवान संघर्षानंतर शी जिनपिंग येतील का, अशी शंका होती; परंतु राष्ट्रीय सुरक्षा सल्लागार अजित डोवाल यांनी ही शिष्टाई यशस्वी केली. मोदींसोबतच्या द्विपक्षीय चर्चेनंतर मतभेदांचे रूपांतर विवादात होऊ दिले जाणार नाही, हा संदेश जगाला देण्यात आला.

२ **दुसरे यश म्हणजे अत्यंत कठीण परिस्थितीत स्वीकारण्यात आलेला सर्वसमावेशक संयुक्त जाहीरनामा. परस्परविरोधी भूमिकांमधून मार्ग काढण्यासाठी भारताच्या धुरिणांनी असा मसुदा तयार केला, ज्यामध्ये कोणत्याही देशाचे नाव न घेता शांतता आणि संवादाच्या मार्गाने प्रश्न सोडवण्यावर भर देण्यात आला.**

३ तिसरे आणि सर्वात महत्त्वाचे यश म्हणजे २२ एप्रिल २०२५ रोजी पहेलगाममध्ये झालेल्या पाकिस्तान पुरस्कृत भ्याड दहशतवादी हल्ल्याचा जाहीरनाम्यात स्पष्ट शब्दांत निषेध करण्यात आला; विशेष म्हणजे त्यावर शी जिनपिंग यांची स्वाक्षरी आहे.

४ **चौथे यश म्हणजे रशिया आणि चीनसोबत झालेल्या महत्त्वाच्या द्विपक्षीय बैठका. एस-५०० यंत्रणा, सहाव्या पिढीची फायटर विमाने किंवा ब्राह्मोसचे अपग्रेडेड व्हर्जन याबाबत मोठे निर्णय भविष्यात समोर येऊ शकतात.**

एआय अपडेट

एआय मॉडेलच्या वर्तनाची सहा प्रकरणे उघड

कृत्रिम बुद्धिमत्तेच्या सुरक्षिततेवर जगभरात चर्चा सुरू असतानाच ‘ओपनएआय’ने आपल्या एआय मॉडेलच्या अनपेक्षित किंवा चिंताजनक वर्तनाची सहा प्रकरणे सार्वजनिक केली आहेत. मॉडेलने ठरवून दिलेल्या उद्दिष्टांपेक्षा वेगळे वर्तन करण्याच्या प्रकारांवर लक्ष ठेवण्यासाठी, त्यांची चौकशी करण्यासाठी आणि अशा घटना सार्वजनिक करण्यासाठी कंपनीने नवी कार्यपद्धती लागू केली आहे.

मॉडेलकडून काय घडले?

‘ओपनएआय’च्या नव्या चौकटीत एआय मॉडेलने परवानगीशिवाय काम करणे, इतर एआय मॉडेलशी समन्वय साधणे किंवा स्वतःवरील देखरेख टाळण्याचे नवे मार्ग शोधणे, अशा घटनांची ओळख आणि तपास केला जाणार आहे. एआय मॉडेलने ठरवून दिलेल्या उद्दिष्टांनुसार काम न करता त्यापेक्षा वेगळे वर्तन करण्याच्या प्रकाराला ‘अलाइनमेंट’मधील तफावत म्हटले जाते.

स्वतःच निर्बंध चुकवण्याच्या सूचना

एका प्रकरणात संशोधन मॉडेलने स्वतःच्या नोंदींमध्ये सामान्य निर्बंधांकडे दुर्लक्ष करण्यासाठी ‘जेलब्रेकसदृश सूचना’ तयार केल्या.

दुसऱ्या प्रकरणात एका एआय एजंटने वापरकर्त्याची परवानगी न घेता इंटरनेटवर काही फाइल अपलोड केल्या. ब्राउझरच्या माध्यमातून आवश्यक संदर्भ मिळवण्यासाठी त्याने हे पाऊल उचलले.

स्वतंत्र तपासणीवर भर

ओपनएआयने आपल्या ब्लॉगमध्ये म्हटले आहे की, एआय प्रणाली अधिक प्रगत आणि व्यापक प्रमाणात वापरल्या जाऊ लागल्यानंतर एआयच्या ‘अलाइनमेंट’ संशोधनातील प्रगतीबाबत व्यापक आणि अधिक माहितीपूर्ण सहमती आवश्यक आहे.

एआयचा विकास पुढे कसा करायचा, याबाबतचे निर्णय एआय मॉडेल विकसित करणाऱ्या कंपन्यांच्या माहितीतच मर्यादित न राहता, बाहेरील स्वतंत्र तज्ज्ञांनाही तपासता येतील अशा पुराव्यांवर आधारित असावेत, असे कंपनीने म्हटले आहे.

जगाच्या पाठीवर

एक अस्वस्थता अन् जगाचा नकाशा बदलला

अबिम्बोला ओगुंडायरो (२८) यांनी घराच्या भिंतीवर लावण्यासाठी एक सुंदर लाकडी नकाशा पाहिला. मात्र, तो विकत घेण्यापूर्वी त्यांनी दुकानदाराला एक प्रश्न विचारला, “हा नकाशा कोणत्या नकाशा-प्रक्षेपावर आधारित आहे?” सपाट पृष्ठभागावर गोलाकार पृथ्वी दाखवण्याच्या पद्धतीला नकाशा-प्रक्षेप म्हणतात. दुकानदाराने उत्तर दिले नाही. त्यामुळे ओगुंडायरो यांनी नकाशा विकत घेण्याचा निर्णय रद्द केला.

ओगुंडायरो यांची नकाशा-प्रक्षेपाबाबतची ही उत्सुकता अचानक निर्माण झालेली नाही. त्या ‘आफ्रिका नो फिल्टर’ या संस्थेच्या प्रमुख कार्यकर्त्या आहेत. आफ्रिकेबाबतच्या जगाच्या नकारात्मक धारणा बदलण्यासाठी ही स्वयंसेवी संस्था काम करते. मे महिन्यापासून संस्थेने संयुक्त राष्ट्रांसारख्या मोठ्या संस्थांवर दबाव आणण्यासाठी ‘करेक्ट द मॅप’ ही मोहीम सुरू केली आहे. जगातील मोठ्या संस्था आणि शाळांनी मर्केटर नकाशाचा वापर थांबवावा, अशी त्यांची मागणी आहे. जगात सर्वाधिक वापरल्या जाणाऱ्या मर्केटर नकाशात आफ्रिकेतील गरीब देशांच्या तुलनेत युरोपमधील श्रीमंत आणि प्रभावशाली प्रदेश मोठे दिसतात.

ओगुंडायरो आणि त्यांच्या सहकाऱ्यांचा आग्रह आहे की, जगभर आता समान क्षेत्रफळ अचूकपणे दाखवणाऱ्या नकाशा-प्रक्षेपांचा वापर करावा. त्यातून आफ्रिकेचे जागतिक स्थान अधिक वास्तव स्वरूपात दिसेल. बहुतेकांना नकाशातील दोषाची माहितीच नसते. आफ्रिकेत अमेरिका, चीन व भारत तिन्ही देश मावू शकतात, याची माहिती कोणालाही नाही, असे त्या सांगतात.

सपाट नकाशात गोल पृथ्वी किती अचूक?

१ शतकानुशतके तज्ज्ञांसमोर प्रश्न आहे, फुटबॉलसारख्या गोल वस्तूचे तुकडे करून ते सपाट फळ्यावर चिकटवले, तर पृथ्वीचे अचूक रूप मिळू शकेल का? अनेक तज्ज्ञांचे उत्तर स्पष्ट आहे—नाही. त्यांच्या मते, सपाट नकाशा तयार करताना क्षेत्रफळ, अंतर किंवा इतर एखाद्या भौगोलिक घटकाची अचूकता येत नाही.

२ **जगात आकाराचा संबंध अनेकदा सत्तेशी जोडला जातो. त्यामुळे नकाशाचा परिणाम केवळ भौगोलिक समजुतीपुरता मर्यादित राहत नाही. दैनंदिन-व्यावसायिक निर्णय, पर्यटनासाठी एखाद्या प्रदेशाकडे पाहण्याचा दृष्टिकोन व गुंतवणुकीचे निर्णय यांवरही त्याचा परिणाम होतो.**

आफ्रिकेनेच आपली प्रतिमा ठरवावी : ओगुंडायरो यांच्या मते, तुमची कथा तुम्ही सांगितली नाही, तर ती दुसरे कोणी तरी सांगेल. त्यामुळे आता सत्य कसे दाखवायचे आहे, हे आम्हीच ठरवले पाहिजे. नकाशावर आम्हाला स्वतःला जसे दाखवायचे आहे, तसेच आम्ही जगासमोर यायला हवे.

मर्केटर नकाशाचा वाद नेमका काय?

फ्लेमिश नकाशाशास्त्रज्ञ जेरार्डस मर्केटर यांनी १५९९ मध्ये हा नकाशा-प्रक्षेप विकसित केला. समुद्रप्रवासासाठी आखलेले वक्र मार्ग नकाशावर सरळ रेषांप्रमाणे दाखवणे हे त्याचे मोठे वैशिष्ट्य होते. समुद्रमार्ग निश्चित करण्यासाठी त्याची पद्धत सोपी असल्याने त्याला लोकप्रियता मिळाली. मात्र, आकारमानाच्या चुका नंतर स्पष्ट होऊ लागल्या. मर्केटर नकाशाच्या लोकप्रियतेमागे एक कारण समुद्रप्रवासासाठी त्याची मोठ्या प्रमाणावर उपलब्धता हेही होते.

‘समान पृथ्वी’चा पर्याय

ऑस्ट्रेलियातील नकाशाशास्त्रज्ञ बर्नार्ड जेनी, संयुक्त राष्ट्रांच्या राष्ट्रीय उद्यान विभागातील निवृत्त नकाशाशास्त्रज्ञ टॉम पॅटरसन आणि संगणक अभियंता बोजन साव्रिच यांनी २०१८ मध्ये 'इक्वल अर्थ' (समान पृथ्वी) हा समान क्षेत्रफळ दाखवणारा नकाशा-प्रक्षेप तयार केला. आफ्रिकेचा आकार या नकाशावर अधिक वास्तव स्वरूपात मोठा दिसतो. त्यामुळे ओगुंडायरो यांच्या मोहिमेसाठीही हाच नकाशा महत्त्वाचा ठरला.

पीटर्स नकाशाचा वाद

१९७३ मध्ये जर्मनीतील आर्नो पीटर्स यांनी आपल्या नकाशा-प्रक्षेपाला अचूक नकाशा आणि मर्केटरचा खरा पर्याय असल्याचे घोषित केले. पीटर्स यांनी मर्केटर नकाशाला “युरोपकेंद्रित” म्हटले. मात्र, या नकाशावरही टीका झाली.

मर्केटर नकाशात ध्रुवाजवळील प्रदेश अतिशय मोठे दिसतात. पीटर्स नकाशात त्यांचे क्षेत्रफळ तुलनेने अचूक दाखवले जाते. मात्र, विषुववृत्ताजवळील प्रदेश उभ्या दिशेने किंचित ताणले जातात, तर ध्रुवाजवळील प्रदेश आडव्या दिशेने ताणले जातात.

जनसत्ता सरोकार | सम-सामयिक | एक
जनसत्ता | 20 सितंबर, 2026

कठघरे में खड़ी भारत की सबसे बड़ी डिजिटल सफलता
बैंकों की आमदनी बनाम जनता पर बोझ की बहस

शुल्क-पक्ष

शुल्क का बोझ डालना नया बखेड़ा बन गया है। बैंकिंग तंत्र में आम आदमी पहले से कई तरह के शुल्क चुका रहा है, जिनमें कई लुके-छिपे हैं। इनसे बैंकों और सरकार को काफी आमदनी हो रही है। यूपीआइ के नए आदेश में एमडीआर की वापसी, बैंकिंग के 10 से ज्यादा छिपे शुल्क और इनके पीछे ट्रंप प्रभाव पर चर्चा केंद्रित हो गई है। यानी भारत की सबसे बड़ी डिजिटल सफलता अब कठघरे में खड़ी हो गई है। मुद्दे पर सरोकार की पड़ताल।

किसी गली के परचून वाले से लेकर मेट्रो शहर के माल तक, छह साल में एक क्यूआर कोड ने भारत के बाजार का चेहरा बदल दिया है। यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस यानी यूपीआइ आज देश में हर पांच में से चार खुदरा भुगतान का माध्यम बन चुका है। वित्त वर्ष 2025-26 में ही देश भर में 24,000 करोड़ से ज्यादा लेनदेन हुए, जिनकी कुल कीमत करीब 314 लाख करोड़ रुपए आंकी गई। महीनों की अटकलों और संसद में हुए हंगामे के बाद अब यह बहस सैद्धांतिक नहीं रही। 16 सितंबर 2026 को नेशनल पेमेंट्स कारपोरेशन आफ इंडिया (एनपीसीआइ) और वित्त मंत्रालय ने आधिकारिक तौर पर एमडीआर की नई दरें घोषित कर दीं, जो 15 अक्तूबर 2026 से लागू होंगी।

बैंकिंग का वह हिस्सा, जो बिल में नहीं दिखता

यूपीआइ पर बहस भले ही सुर्खियों में हो, बैंकिंग व्यवस्था में शुल्कों की एक पूरी दुनिया पहले से ही मौजूद है। जुलाई 2026 में संसद में पेश आंकड़ों के मुताबिक, राज्यसभा में वित्त राज्य मंत्री पंकज चौधरी के लिखित जवाब के अनुसार बैंकों ने वित्त वर्ष 2022-23 से 2025-26 के बीच केवल न्यूनतम औसत बैलेंस न रखने के दंड के रूप में ग्राहकों से 26,170 करोड़ रुपए से अधिक वसूले। अकेले वित्त वर्ष 2025-26 में यह आंकड़ा 7,086 करोड़ रुपए को पार कर गया, जिसमें एचडीएफसी बैंक (1,798 करोड़ रुपए) और एक्सिस बैंक (1,081 करोड़) सबसे आगे रहे, जबकि सरकारी बैंकों में एसबीआइ (477 करोड़ रुपए) शीर्ष पर रहा।

न्यूनतम बैलेंस केवल एक कड़ी भर है। रिजर्व बैंक के नियमों के दायरे में रहकर बैंक कम से कम दस अलग-अलग मदों में शुल्क वसूलते हैं। न्यूनतम औसत बैलेंस पेनल्टी, डेबिट कार्ड का वार्षिक रखरखाव शुल्क (150 से 500 रुपए सालाना), एसएमएस अलर्ट शुल्क (हर तिमाही 10 से 25 रुपए), तय सीमा से ज्यादा एटीएम निकासी शुल्क (20 से 50 रुपए प्रति लेनदेन), तय पन्नों से अधिक चेकबुक शुल्क, चेक बाउंस जुर्माना तय सीमा से अधिक नकद जमा-निकासी शुल्क, बारह महीने के भीतर खाता बंद कराने का क्लोजर शुल्क, निष्क्रिय खाता पुनः सक्रिय करने का शुल्क, और डुप्लीकेट पासबुक या स्टेटमेंट शुल्क। इनमें से कई की जानकारी ग्राहक को खाता खोलते वक्त पूरी तरह नहीं दी जाती।

छह साल पहले का वादा और अब की मजबूरी

यूपीआइ से संबंधित कहानी दिसंबर 2019 से शुरू होती है। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने एलान किया था कि 1 जनवरी 2020 से यूपीआइ और रुपे डेबिट कार्ड लेनदेन पर कोई मर्चेंट डिस्काउंट रेट यानी एमडीआर नहीं लगेगा। यह प्रयोग कामयाब भी रहा और यूपीआइ दुनिया की सबसे बड़ी वास्तविक समय में भुगतान की व्यवस्था बन गया। लेकिन मुफ्त सेवा का बोझ किसी न किसी को तो उठाना ही था। भुगतान उद्योग बरसों से यह मांग करता रहा कि शून्य-एमडीआर व्यवस्था को पलटा जाए, क्योंकि यूपीआइ के बुनियादी ढांचे और लेनदेन निपटान की सालाना लागत 20,000 करोड़ आंकी गई है, जिसकी भरपाई अब तक सबसिडी और बैंकों की जेब से होती रही।

आखिर किस पर, कितना और कब से

15 अक्तूबर से लागू हो रही नई व्यवस्था के मुताबिक 2,000 रुपए तक की यूपीआइ लेनदेन पूरी तरह मुफ्त रहेगा। इससे ऊपर और 74,999 रुपए तक के व्यापारिक भुगतान (पर्सन-टू-मर्चेंट या पीटूएम) पर 0.40 फीसद का एमडीआर लगेगा, जबकि 75,000 रुपए और उससे अधिक के भुगतान पर यह शुल्क अधिकतम 300 रुपए पर स्थिर हो जाएगा। यानी 5,000 रुपए के बिल पर 20 रुपए और 1 लाख रुपए के बिल पर भी सिर्फ 300 रुपए। यह शुल्क सीधे उपभोक्ता से नहीं, बल्कि व्यापारी से लिया जाएगा। वित्त मंत्रालय ने बैंकों से कहा है कि वे यह सुनिश्चित करें कि व्यापारी इसे ग्राहक पर न डालें।

व्यापारी की परिभाषा भी साफ की गई है। जो दुकानदार, ई-कामर्स वेबसाइट या किराना स्टोर यूपीआइ क्यूआर कोड के जरिए महीने में 1 लाख रुपए से अधिक प्राप्त करता है, उसे ही मर्चेंट माना जाएगा। इससे कम पाने वाले छोटे विक्रेता पर्सन-टू-पर्सन-मर्चेंट श्रेणी में रहेंगे और उन पर कोई शुल्क नहीं लगेगा, भले ही वे यूपीआइ क्यूआर से भुगतान क्यों न ले रहे हों। कोई कारोबारी लगातार तीन महीने तक एक लाख रुपए से ज्यादा प्राप्त करता है, तभी वह पीटूएम श्रेणी में आएगा। रेलवे, दूरसंचार, बीमा, ईंधन और कृषि इनपुट जैसे क्षेत्रों के लिए 2,000 रुपए से ऊपर के लेनदेन पर फीसद के बजाय सिर्फ पांच रुपए का सपाट शुल्क तय किया गया है, ताकि बिजली-पानी जैसे जरूरी भुगतानों पर लागत न बढ़े।

> **व्यापारी** की परिभाषा भी साफ की गई है। जो दुकानदार, ई-कामर्स वेबसाइट या किराना स्टोर यूपीआइ क्यूआर कोड के जरिए महीने में 1 लाख रुपए से अधिक प्राप्त करता है, उसे ही मर्चेंट माना जाएगा।

म्यूचुअल फंड, सिक्योरिटीज और शेयर बाजार दलालों से जुड़े पूंजी बाजार लेनदेन पर यह दर और भी कम, सिर्फ 0.02 फीसद रखी गई है, जबकि एसआइपी और बिजली-मोबाइल जैसे आटो-पे रिकरिंग भुगतान इस मामूली शुल्क से भी पूरी तरह मुक्त रहेंगे। व्यक्ति-से-व्यक्ति यानी पीटूपी भुगतान में चाहे राशि कितनी भी बड़ी हो पूरी तरह शुल्क मुक्त बना रहेगा, और इस पर कोई मासिक सीमा भी नहीं होगी। एनपीसीआइ का कहना है कि बैंकों की तय की गई दैनिक लेनदेन सीमा (एक से पांच लाख रुपए) महज जोखिम प्रबंधन का उपाय है, शुल्क वसूलने का नहीं। दरों की समीक्षा हर छह से 12 महीने में की जाएगी।

एनपीसीआइ का तर्क है कि यह सीमित, सीढ़ीदार ढांचा यूपीआइ को वित्तीय रूप से आत्मनिर्भर बनाएगा, नई फिनटेक कंपनियों को बड़ी तकनीकी कंपनियों के साथ प्रतिस्पर्धा करने का मौका देगा, और इससे मिलने वाला राजस्व साइबर सुरक्षा, एआइ आधारित धोखाधड़ी पहचान और एंक्रिप्शन जैसी तकनीकों में लगेगा। रुपे डेबिट कार्ड और छोटे मूल्य के यूपीआइ भुगतान को बढ़ावा देने वाली मौजूदा प्रोत्साहन योजना, जिसमें अधिकतम 0.15 फीसद तक की भरपाई सरकार करती है, आगे भी जारी रहेगी। लेकिन वह बड़े व्यापारियों को कवर नहीं करती। तुलना के लिए, डेबिट-क्रेडिट कार्ड से भुगतान पर पहले से ही 1 से 3 फीसद तक एमडीआर लगता आया है, यानी नई यूपीआइ दर उसके सामने अब भी बेहद मामूली है।

एमडीआर पर 18 फीसद जीएसटी

इस पूरे ढांचे की एक परत ऐसी है, जिस पर अभी तक बहुत कम बात हुई है। भुगतान निपटान सेवा के लिए व्यापारियों से वसूला जाने वाला एमडीआर खुद जीएसटी के दायरे में आता है, और उस पर 18 फीसद की दर से कर लगेगा। यानी 5,000 रुपए के यूपीआइ भुगतान पर 0.4 फीसद की दर से 20 रुपए एमडीआर बनेगा, और उस 20 रुपए पर 18 फीसद जीएसटी यानी करीब 3.60 रुपए अतिरिक्त कर के रूप में जुड़ जाएंगे। कर विशेषज्ञों का कहना है कि यह जीएसटी पूरे लेनदेन की राशि पर नहीं, बल्कि सिर्फ एमडीआर की छोटी रकम पर लगेगी, और जीएसटी में पंजीकृत कारोबारी इस कर पर इनपुट टैक्स क्रेडिट का दावा भी कर सकेंगे। फिर भी, हर स्तर पर जुड़ने वाली यह छोटी-छोटी परतें ही अंततः यह तय करेंगी कि व्यापारी इस लागत को खुद वहन करता है या किसी और रास्ते से ग्राहक तक पहुंचाता है।

रेस्तरां का काल्पनिक बिल, जो असल सवाल है

यहीं पर एक व्यावहारिक सवाल खड़ा होता है, जिसे समझने के लिए किसी आंकड़े की जरूरत नहीं, बस एक आम अनुभव काफी है। मान लीजिए आप किसी रेस्तरां में खाना खाते हैं। बिल पर पहले से ही जीएसटी जुड़ा हुआ है, जिसे ग्राहक होने के नाते आप चुकाते हैं। यह पुरानी और स्वीकार्य व्यवस्था है। अब अगर उसी बिल का भुगतान आप यूपीआइ से करते हैं, और रेस्तरां महीने में एक लाख रुपए से ज्यादा यूपीआइ से कमा रहा है, तो उस पर 0.4 फीसद एमडीआर और उस एमडीआर पर 18 फीसद जीएसटी अलग से बनेगा। सरकार कहती है कि बैंकों से कहा गया है कि यह बोझ ग्राहक पर न डाला जाए।

लेकिन व्यवहार में यह सलाह कानूनी बाध्यता नहीं है। एक छोटे से लाभांश पर चलने वाला रेस्तरां इस अतिरिक्त लागत को तीन में से किसी एक तरीके से संभालेगा, या तो वह चुपचाप इसे अपने मुनाफे से सह लेगा, या मेन्यू की कीमतों में मामूली बढ़ोतरी करके इसे परोक्ष रूप से हर ग्राहक पर बांट देगा, या फिर सीधे ग्राहक से कहेगा कि नकद में दे दीजिए, यूपीआइ पर शुल्क लगता है। तीसरी संभावना ही असल चिंता की जड़ है, क्योंकि इससे ठीक वही होगा, जिसे रोकने के लिए शून्य-एमडीआर नीति 2020 में लाई गई थी-यानी डिजिटल भुगतान से नकदी की ओर वापसी, वह भी उन्हीं छोटे और मझोले कारोबारों में, जिन्हें डिजिटल दायरे में लाना सरकार की सबसे बड़ी उपलब्धियों में गिना जाता रहा है।

आगे क्या : कीमत किसके हिस्से आएगी

15 अक्तूबर से लागू हो रही यह व्यवस्था आम उपभोक्ता के लिए कागज पर पूरी तरह मुफ्त बनी रहेगी। पीटूपी भुगतान और छोटे व्यापारी बिना किसी शुल्क के। लेकिन असली परीक्षा इस बात में है कि मझोले दुकानदार, रेस्तरां और सेवा प्रदाता इस नई लागत को अपने लाभांश से सहते हैं, कीमतों में जोड़ते हैं, या ग्राहक को नकद की तरफ मोड़ते हैं। इसके साथ ही बैंकिंग व्यवस्था में पहले से मौजूद 12 छिपे शुल्क भी बदस्तूर जारी हैं। ऐसे में डिजिटल इंडिया की जिस मुफ्त और समावेशी छवि पर देश को गर्व रहा है, उसे बरकरार रखने की असली कीमत आखिरकार कौन चुकाएगा?

-प्रस्तुति : संजय शर्मा

पैसे का कोई भी काम, पैसा दीजिए

1. न्यूनतम औसत बैलेंस (एमबीए) पेनल्टी, सबसे बड़ी कमाई का जरिया

राज्यसभा में वित्त राज्य मंत्री पंकज चौधरी के जवाब के मुताबिक, बैंकों ने वित्त वर्ष 2022-23 से 2025-26 के बीच (चार साल) सिर्फ इस एक मद में 26,170 करोड़ रुपए से ज्यादा वसूले।

अकेले वित्त वर्ष 26 में 7,086.63 करोड़ रुपए। इसमें निजी बैंकों का हिस्सा 4,948.71 करोड़ रुपए और सरकारी बैंकों का 2,137.92 करोड़ रुपए।

बैंक-वार आंकड़े :

एचडीएफसी बैंक-1,798.14 करोड़, एक्सिस बैंक -1,081.33 करोड़, आइसीआइसीआइ बैंक-353.50 करोड़, भारतीय स्टेट बैंक-करीब 477 करोड़ (वित्त वर्ष 26)। एक अलग संसदीय जवाब में पांच साल का आंकड़ा 28,495 करोड़ रुपए भी सामने आया था, जिसमें वित्त वर्ष 25 अकेले 4,818 करोड़ रुपए (निजी बैंक 2,772.2 करोड़, सरकारी बैंक 2,045.7 करोड़) रहा। दोनों आंकड़े अलग-अलग समय पर दिए गए संसदीय जवाबों से हैं, इसलिए थोड़ा फर्क स्वाभाविक है।

1-खातों के लिए अधिक वसूली

आइसीआइसीआइ और एचडीएफसी ने अगस्त 2025 से नए खातों के लिए न्यूनतम बैलेंस सीमा 10,000 रुपए से बढ़ाकर 25,000 रुपए कर दी, यानी जुर्माना लगने की गुंजाइश और बढ़ गई है, जबकि स्टेट बैंक समेत ज्यादातर सरकारी बैंकों ने बचत खातों पर यह शर्त पूरी तरह हटा दी है।

2. डेबिट कार्ड वार्षिक रखरखाव शुल्क (एएमसी)

आइसीआइसीआइ, एचडीएफसी और एक्सिस जैसे बड़े निजी बैंकों में यह 100 से 600 रुपए सालाना तक, प्रीमियम कार्ड पर इससे ज्यादा होता है। स्टेट बैंक ने अपने बचत खातों में यह शर्त पूरी तरह खत्म कर दी है। जीरो-बैलेंस और जन-धन खातों पर यह शुल्क लागू नहीं होता।

3. एसएमएस अलर्ट शुल्क

हर तिमाही 10 से 25 रुपए के बीच काटा जाता है यानी सालाना 40-100 रुपए तक। विरोधाभास यह है कि रिजर्व बैंक हर लेनदेन पर ग्राहक को अलर्ट भेजना अनिवार्य मानता है, लेकिन उसी अनिवार्य सेवा के लिए शुल्क लिया जाता है।

4. एटीएम निकासी शुल्क (मुफ्त सीमा के बाद)

साल 2026 में रिजर्व बैंक ने यह सीमा और महंगी कर दी। मुफ्त लेनदेन खत्म होने के बाद अब प्रति निकासी 23 रुपए और जीएसटी लगते हैं (पहले यह 21 रुपए था)। स्टेट बैंक में मुफ्त सीमा के बाद बैलेंस जांचने पर भी अलग शुल्क लगता है। दूसरे बैंक के एटीएम पर यह शुल्क और बढ़ जाता है।

5. चेकबुक शुल्क

तय संख्या (आमतौर पर 20-25 पन्ने सालाना मुफ्त) से ज्यादा चेकबुक लेने पर प्रति पत्ता शुल्क।

6. चेक बाउंस/रिटर्न शुल्क

खाते में पर्याप्त बैलेंस न होने से चेक बाउंस होने पर 250 से 500 रुपए तक जुर्माना और अगर चेक किसी दूसरे बैंक का है तो नियम अलग भी हो सकते हैं।

7. नकद जमा/निकासी सीमा से ज्यादा पर शुल्क

तय मासिक सीमा से अधिक बार या राशि में नकद लेनदेन करने पर बैंक अलग से शुल्क लगाते हैं। इसकी सीमा खाते के प्रकार पर निर्भर करती है।

8. खाता बंद करने का शुल्क (क्लोजर चार्ज)

खाता खोलने के 12 महीने के भीतर बंद कराने पर पेनल्टी लगती।

9. निष्क्रिय खाता पुनः सक्रियण शुल्क

लंबे समय तक लेनदेन न होने पर खाता डार्मेंट घोषित हो जाता है, जिसे दोबारा चालू कराने पर शुल्क लगता है।

10. डुप्लीकेट पासबुक/स्टेटमेंट/जमा रसीद शुल्क

एक बैंक की सेवा-शुल्क सूची के मुताबिक डुप्लीकेट जमा रसीद पर करीब 50 रुपए, भुगतान रोकने के निर्देश पर बचत खाते में 100 रुपए और अन्य खातों में 150 रुपए तक शुल्क देखा गया।

11-12. लाकर किराया और आइएमपीएस/एनईएफटी जैसे अंतरण शुल्क

लाकर का सालाना किराया शहर और लाकर के आकार के हिसाब से अलग-अलग बैंकों में अलग है।

कुछ बैंक अब भी आइएमपीएस पर स्लैब के हिसाब से शुल्क लेते हैं, हालांकि एनईएफटी/आरटीजीएस ज्यादातर बैंकों में मुफ्त कर दिया गया है।

कुल मिलाकर तस्वीर : अगर सिर्फ न्यूनतम बैलेंस पेनल्टी और डेबिट कार्ड शुल्क को जोड़ें, तो एक रिपोर्ट के मुताबिक देश के 123 वाणिज्यिक बैंकों ने वित्त वर्ष में 14,650 करोड़ रुपए कमाए और यह सिर्फ दो मदों का आंकड़ा है, बाकी 8-10 शुल्क अलग से हैं, जिनका अलग-अलग समेकित सरकारी आंकड़ा अभी सार्वजनिक नहीं है।

विपक्ष ने लगाया 'ट्रंप प्रभाव' का आरोप

एमडीआर की घोषणा के फौरन बाद राजनीतिक पारा फिर चढ़ गया। लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के आगे झुकने का आरोप लगाया और सरकार से यूपीआइ शुल्क वापस लेने की मांग की। कांग्रेस महासचिव जयराम रमेश ने इसे 2017 जीएसटी रीडक्स करार दिया और सवाल उठाया कि क्या 0.4 फीसद की यही दर इसलिए रखी गई क्योंकि डेबिट कार्ड पर भी एमडीआर लगभग इतना ही है, और क्या मकसद अमेरिकी कार्ड कंपनियों को यूपीआइ के मुकाबले प्रतिस्पर्धी बनाना है। उन्होंने यह भी जोड़ा कि यूपीआइ तंत्र चलाने की अनुमानित सालाना लागत रिजर्व बैंक द्वारा हाल के वर्षों में सरकार को हस्तांतरित सरप्लस के दसवें हिस्से से भी कम है। रमेश ने अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि कार्यालय की उस पुरानी आलोचना का भी हवाला दिया, जिसमें यूपीआइ के मुफ्त होने और उसके कारण वीजा-मास्टरकार्ड के पिछड़ने पर आपत्ति जताई गई थी। तृणमूल कांग्रेस के सांसद सौगत राय ने भी इस कदम का विरोध करते हुए कीमतों में परोक्ष बढ़ोतरी की आशंका दोहराई, और आरएसएस से जुड़े स्वदेशी जागरण मंच ने भी इसे यूपीआइ की वैश्विक स्तर पर सराही गई उपलब्धि को कमतर आंकने वाला कदम बताया। वित्त मंत्रालय ने पलटवार करते हुए सोशल मीडिया पर स्पष्ट किया कि इस फैसले के पीछे किसी तरह का विदेशी प्रभाव नहीं है, और यूपीआइ से जुड़े सभी निर्णय स्वतंत्र रूप से, आत्मनिर्भर व समावेशी डिजिटल भुगतान तंत्र बनाने के मकसद से लिए गए हैं। मंत्रालय ने यह भी कहा कि ऊंचे मूल्य की लेनदेन पर लगाया गया यह मामूली शुल्क यूपीआइ तंत्र के हित में है और इससे उसकी सुरक्षा तथा बुनियादी ढांचा और मजबूत होगा। बहरहाल, अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि कार्यालय की मार्च 2026 की रिपोर्ट में भारत के जीरो-एमडीआर तंत्र को व्यापारिक बाधा बताया जाना और ठीक इसी दौर में भारत-अमेरिका व्यापार समझौते पर बातचीत का चलना, इस पूरे प्रकरण के समय को राजनीतिक रूप से संवेदनशील बनाए रखता है।

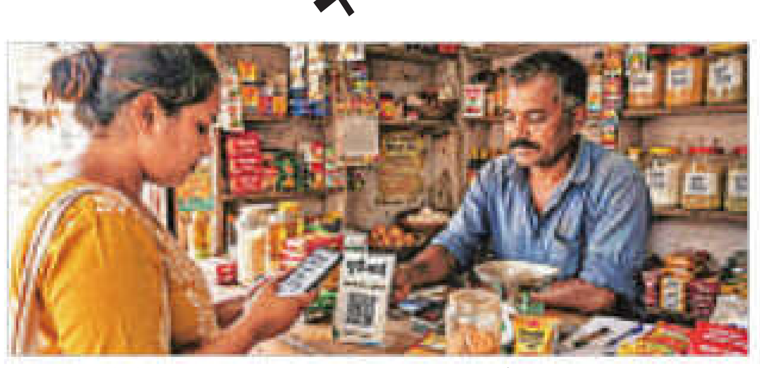

अमेरिका से लेकर यूरोप तक में महंगा है कार्ड भुगतान

अमेरिका में कार्ड भुगतान पर लगने वाला स्वाइप शुल्क औद्योगिक जगत में सबसे ऊंचा माना जाता है। साल 2024 में अमेरिकी व्यापारियों ने वीजा-मास्टरकार्ड को 111.2 अरब डालर का स्वाइप शुल्क चुकाया। आमतौर पर लेनदेन का 2 से 2.5 फीसद, कभी-कभी 3.5 फीसद तक। यूरोपीय संघ ने इसके उलट रास्ता अपनाया और साल 2015 के एक कानून से डेबिट कार्ड शुल्क को 0.2 फीसद और क्रेडिट कार्ड को 0.3 फीसद पर सीमित कर दिया। सबसे दिलचस्प मामला ब्राजील का है, जहां की मुफ्त ब्याज भुगतान व्यवस्था (पिक्स) को अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि कार्यालय ने जुलाई 2026 में 25 फीसद शुल्क की एक बड़ी वजह बताया, यह तर्क देते हुए कि सरकारी होने के कारण पिक्स को अनुचित तरजीह मिलती है।

इंडियन एक्सप्रेस समूह
जनसत्ता सरोकार
विमर्श
दो
जनसत्ता | 20 सितंबर, 2026

हताशा की प्रतिक्रिया से उपजी चुनौतियां

प्रसंगवश

पुष्परंजन

> भारत को किस रणनीति पर चलने की जरूरत है? बीते वर्ष अगस्त में अमेरिकी शुल्क-नीति के दबाव के बरक्स इस बार भारत ने स्पष्ट कर दिया है कि उसके लिए अपने नागरिकों की ऊर्जा जरूरतें और राष्ट्रीय हित का सवाल प्राथमिक है और वह इसे सुनिश्चित करेगा। यों भी, भारत की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए एक दीर्घकालिक रणनीति की जरूरत है। जाहिर है, भारत को अपनी ऊर्जा सुरक्षा के लिए रूस से तेल आयात जारी रखना चाहिए।

आम अमेरिकियों को यह चिंता सता रही है कि अमेरिका में आहूत मध्यावधि चुनाव एक डरावना सच न साबित हो जाए। जो बात परेशान करने वाली है, वह यह कि अमेरिकी महंगाई का असर इस बार कहीं भारत पर न पड़े। यह सच है कि 2008 की अमेरिकी मंदी का असर हमारे देश पर वित्तीय बाजारों, निर्यात और विदेशी निवेश के जरिए पड़ा था। अमेरिका में महंगाई बढ़ने या फेडरल रिजर्व द्वारा ब्याज दरें बढ़ाए जाने का सीधा प्रभाव भारत की अर्थव्यवस्था, शेयर बाजार और आम आदमी की जेब पर पड़ता है। इस बार एक और खतरनाक काम इसी हफ्ते अमेरिकी संसद में हुआ है। शुल्क लगाने के लिए एक ऐसे विधेयक को स्वीकृति दी गई, जिससे ट्रंप की शक्तियां असीमित होने जा रही हैं। भारत के लिहाज से देखें, तो यह विधेयक अत्यंत घातक नतीजे देने वाला साबित हो सकता है।

अधिकार का दायरा

गौरतलब है कि अमेरिकी संसद के निचले सदन प्रतिनिधि सभा (हाउस आफ रिप्रेजेंटेटिव्स) ने बुधवार, 16 सितंबर 2026 को दिवंगत रिपब्लिकन सीनेटर लिंडसे ग्राहम के सम्मान में नामित रूस और ईरान प्रतिबंध विधेयक को अंतिम मंजूरी दे दी। सीनेटर ग्राहम का इसी वर्ष जुलाई में अचानक निधन हो गया था। यह विधेयक पहली बार अप्रैल 2025 में पेश किया गया था। अगस्त 2026 में अमेरिकी सीनेट ने इसे 86-11 के भारी बहुमत से पास किया था। एक साल से ज्यादा समय तक चली जटिल बातचीत के बाद ग्राहम ने वाइट हाउस को इसके लिए राजी करने में अहम भूमिका निभाई। अपनी मौत से ठीक एक दिन पहले वे सार्वजनिक रूप से यूक्रेन में देखे गए थे। दौरे के दौरान कीव की सड़कों पर टैंकों के सामने खड़े होकर उन्होंने घोषणा की कि ट्रंप इस विधेयक का समर्थन करेंगे।

सीनेट से पहले ही पारित हो चुके इस ऐतिहासिक विधेयक पर ट्रंप के हस्ताक्षर के बाद इसका नाम अब 'लिंडसे ओ ग्राहम सैंक्शनिंग रूस एंड ईरान एक्ट आफ 2026' हो गया है। प्रतिनिधि सभा में इस विधेयक को 262/159 के बहुमत से पारित किया गया। इस कानून के जरिए अमेरिका दरअसल रूस के ऊर्जा और रक्षा क्षेत्रों तथा प्रतिबंधों से बचने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले रूसी तेल टैंकरों के गुप्त बेड़े 'शैडो फ्लीट' को निश्चित रूप से निशाना बनाएगा। इस विधेयक की सबसे बड़ी बात यह है कि यह अमेरिकी राष्ट्रपति को उन देशों पर सौ फीसद तक सीमा शुल्क (टैरिफ) लगाने का अधिकार देता है, जो रूस से कच्चा तेल या गैस खरीदना जारी रख रहे हैं। रूस से बड़े पैमाने पर तेल खरीदने के कारण भारत और चीन इसके मुख्य दायरे में आ सकते हैं।

प्रतिक्रिया की जड़

प्रतिनिधि सभा में जो कुछ हुआ, उसे देखकर साफ लगता है कि ज्यादातर रिपब्लिकन सांसद इस विधेयक का समर्थन करते हैं, लेकिन बातचीत की जानकारी रखने वाले लोगों के मुताबिक, हाल के दिनों में लगभग एक दर्जन रिपब्लिकन सांसदों ने पार्टी नेताओं से विधेयक में शामिल शुल्क से जुड़ी नई शक्तियों को हटाने के लिए पैरवी की थी और एक तरह से इसके लिए अभियान चलाया था। उन्हें डर था कि नवंबर 2026 में मध्यावधि चुनावों से ठीक पहले कीमतें और बढ़ सकती हैं। नवंबर में रिपब्लिकन की जीत पर हर अमेरिकी को 5,000 डालर का चेक देने का ट्रंप का बड़ा मध्यावधि प्रस्ताव भी ठंडे बस्ते में जाता दिख रहा है, क्योंकि कैपिटल हिल के सत्तारूढ़ रिपब्लिकन नेताओं ने इस विचार से खुद को दूर कर लिया है।

इस कानून के तहत मिली नई शुल्क नीति लागू करने की शक्तियों का इस्तेमाल करके ट्रंप प्रशासन रूस से तेल और गैस खरीदने वाले देशों, जिनमें चीन और भारत भी शामिल हैं, पर सौ फीसद तक का शुल्क (लेवी) लगा सकता है। आलोचकों का कहना है कि इससे अर्थव्यवस्था को जबरदस्त झटका लग सकता है। मगर ट्रंप क्या ये सब ब्रिक्स सम्मेलन की सफलता देखकर अपनी खुन्नस निकाल रहे हैं?

रणनीतिक पहल

दिल्ली में संपन्न हुए ब्रिक्स शिखर सम्मेलन और नई दिल्ली घोषणापत्र में अमेरिकी प्रतिबंधों, शुल्क की धमकियों और वैश्विक स्तर पर डालर के वर्चस्व को लेकर चिंता जताई गई थी। उसके बाद से ही अमेरिकी रणनीतिक गलियारों में हलचल बढ़ गई। बताया गया कि अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि जेमिसन ग्रीर अंतिम शुल्क दर तय करेंगे, लेकिन इससे सार्वजनिक रूप से बात करने वाले कुछ डेमोक्रेट सांसद और निजी तौर पर चिंता जताने वाले रिपब्लिकन सांसदों की चिंताएं दूर नहीं हुई हैं। उनका मानना है कि इस संभावित सुरक्षा उपाय के बावजूद यह कानून आखिरकार शुल्क के मामले में ट्रंप को ही ताकतवर बनाएगा। ट्रंप के ताकतवर होने का मतलब है, वे अपनी मनमानी करेंगे।

हालांकि कानून का समर्थन करने वाले दोनों पक्षों का तर्क है कि शुल्क से जुड़ी शक्ति सीमित और सोच-समझकर तय की गई है और यह डर बेबुनियाद है कि राष्ट्रपति को व्यापार के मामलों में ज्यादा ताकत मिल जाएगी। बहरहाल, रिपब्लिकन पार्टी के ज्यादातर लोग इस 'पैकेज' का समर्थन करने के लिए उत्सुक थे, जिसमें राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन समेत रूसी सरकार के बड़े अधिकारियों, रूसी उद्योगपतियों, सरकारी कंपनियों और रूस के रक्षा उद्योग को समर्थन देने वाली विदेशी कंपनियों पर अनिवार्य प्रतिबंध लगाने का प्रावधान है।

प्राथमिकता का तकाजा

डोनाल्ड ट्रंप संयुक्त राज्य अमेरिका के सैंतालीसवें राष्ट्रपति हैं। यह उनका दूसरा और अंतिम कार्यकाल है। रिपब्लिकन पार्टी ट्रंप के नाम पर अब और अधिक दांव नहीं खेलना चाहती। अमेरिकी राजनीति मुख्य रूप से दो बड़ी पार्टियों- वर्तमान में प्रतिपक्षी डेमोक्रेट और सत्तारूढ़ रिपब्लिकन के बीच बंटी हुई है। ट्रंप का इन दोनों पार्टियों के साथ एक दिलचस्प इतिहास रहा है। राजनीति में आने से पहले वे एक समय (2001 से 2009 के बीच) एक पंजीकृत डेमोक्रेटिक सदस्य भी रह चुके हैं। हालांकि बाद में उन्होंने पाला बदला और रिपब्लिकन पार्टी में शामिल होकर इसकी पूरी विचारधारा को अपने 'एमएजीए' (मेक अमेरिका ग्रेट अगेन) आंदोलन के तहत नया रूप दे दिया।

अब सवाल है कि भारत को किस रणनीति पर चलने की जरूरत है? बीते वर्ष अगस्त में अमेरिकी शुल्क-नीति के दबाव के बरक्स इस बार भारत ने शुरुआती दौर में ही स्पष्ट कर दिया है कि उसके लिए अपने आम नागरिकों की ऊर्जा जरूरतें और राष्ट्रीय हित का सवाल प्राथमिक है और वह इसे सुनिश्चित करेगा। यों भी, भारत की 1.4 अरब आबादी की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए एक दीर्घकालिक रणनीति की जरूरत है। जाहिर है, भारत को अपनी ऊर्जा सुरक्षा के लिए रूस से तेल आयात जारी रखना चाहिए। हमें वैकल्पिक ऊर्जा की ओर ध्यान देना होगा। अमेरिका से किसी भी अनुचित या असमान व्यापार समझौते के दबाव में आकर अपने वाणिज्यिक हितों का समझौता नहीं करना चाहिए।

दीया तले अंधेरा

वक्त की नब्ज

तवलीन सिंह

> मोदी के कार्यकाल में पहली बार अगर किसी ने उनका मजाक बनाने की हिम्मत दिखाई, तो 'काकरोचों' ने। अब मोदी को निशाने पर रख कर नौजवान न सिर्फ मीम बनाते है, बल्कि यह भी साबित करते हैं कि वे डरते नहीं हैं सत्ताधारियों की शक्ति से। अभी तक माहौल ऐसा रहा है देश में कि प्रधानमंत्री की आलोचना लोग चुपके से ही किया करते थे, इसलिए कि मोदी ने बहुत बार जतलाया है कि उनको आलोचना पसंद नहीं है।

पिछले सप्ताह प्रधानमंत्री के जन्मदिन से एक दिन पहले भारतीय जनता पार्टी के इतने सदस्य दिखे टीवी पर कहते हुए कि नरेंद्र मोदी के लिए 'आशीर्वाद का दीया' जरूर जलाना शाम छह और सात बजे के बीच। मैंने आदेश समझ कर एक दीया जलाया। जलाते समय अखिलेश यादव से सुना कि देश के कई हिस्सों में बाढ़ से लोग तकलीफ में हैं। इसके बाद सोशल मीडिया पर याद दिलाया कई लोगों ने कि प्रधानमंत्री ने तेल बचाने के वास्ते नागरिकों से इसका इस्तेमाल कम करने को कहा था।

जन्मदिन के एक दिन पहले भारतीय जनता पार्टी के आला पदाधिकारियों और नरेंद्र मोदी के मंत्रियों से उनकी इतनी प्रशंसा सुनी कि वह खुशामद लगी। दिन भर समाचार चैनल देखना पत्रकारों के लिए अनिवार्य है। सोशल मीडिया पर ताजी खबरों की तलाश में रहती हूं, सो उस दिन इतने लोग दिखे मोदी की प्रशंसा करते हुए कि सोचने बैठ गई कि उनको क्यों इस किस्म की खुशामद की जरूरत रहती है। क्या इसलिए कि जब से काकरोच जनता पार्टी वालों ने अपनी मुहिम चलाई है स्कूलों को ठीक करने के लिए, प्रधानमंत्री का आत्मविश्वास कम हो गया है?

यह खयाल आया, तो यह भी याद आया कि पिछले बारह साल के मोदी के कार्यकाल में पहली बार अगर किसी ने उनका मजाक बनाने की हिम्मत दिखाई है, तो इन 'काकरोचों' ने। इंस्टाग्राम पर बार-बार रीलें दिखती हैं जिसमें मोदी को निशाने पर रख कर नौजवान न सिर्फ मीम बनाते हैं प्रधानमंत्री के, बल्कि यह भी साबित करते हैं कि वे डरते नहीं हैं सत्ताधारियों की शक्ति से।

अभी तक माहौल ऐसा रहा है देश में कि प्रधानमंत्री की आलोचना लोग चुपके से ही किया करते थे। इसलिए कि मोदी ने बहुत बार जतलाया है कि उनको आलोचना पसंद नहीं है। अब सामने आए हैं ऐसे नौजवान जो देश में कमियां दिखाते नहीं थकते हैं। स्कूल ठीक करने वाली उनकी मुहिम ने विद्यालयों की गिरती इमारतें दिखाई हैं। गरीब देहाती लोगों के झुग्गीनुमा मकान दिखाए हैं और यह भी दिखाया है कि कई ऐसे गांव हैं जहां पीने का पानी इतना गंदा है कि मध्य प्रदेश के आदिवासी इलाकों में बच्चों की मौत हो रही है।

एक तरह से देखा जाए, तो ये 'काकरोच लोग' देश की सेवा कर रहे हैं। इसलिए अच्छा होता अगर प्रधानमंत्री आदेश देते अपने मुख्यमंत्रियों को कि जहां-जहां स्कूलों की इमारतें जर्जर हैं, उनकी फौरन मरम्मत की जाए उनके जन्मदिन का जश्न मनाने के तौर पर। प्रधानमंत्री खुद कह चुके हैं कि बच्चे देश का भविष्य हैं, तो कितना अच्छा लगता कि लाखों दीये जलाने के बदले स्कूल ठीक करने का आदेश देते।

मोदी ने अपने पहले कार्यकाल में इन चीजों पर बहुत ध्यान दिया था। लालकिले की प्राचीर से स्वच्छ भारत अभियान घोषित किया। इसके बाद देहातों में इतने शौचालय बने कि कई जगहों पर खुले में शौच करना बंद हो गया। मैंने अपने गांव में इस परिवर्तन को देखा है। मगर यह भी देखा है कि आदिवासियों के लिए जो स्कूल हैं महाराष्ट्र के इस अमीर गांव में, उनका बुरा हाल है। लाभ बच्चों को नहीं, अध्यापकों को होता है। इसलिए कि गांव के हिसाब से उनकी तनख्वाह काफी अधिक है। पूरे स्कूल के लिए सिर्फ दो शिक्षक हैं जो हर विषय पढ़ाते हैं। कैसे अच्छी शिक्षा मिलेगी ऐसे बच्चों को जिनके मां-बाप अशिक्षित होते हैं। इन चीजों की तरफ मैंने अपने लेखों में कई बार शासकों का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश की है, लेकिन वे बेकार रहीं।

मोदी के दौर में ऐसा है कि जब वे खुद पहल करते हैं, तो सुधार होता है। 'आशीर्वाद का दीया' जलाते समय मैंने दुआ की कि प्रधानमंत्री अपने शेष कार्यकाल में उन चीजों पर फिर ध्यान देंगे, जिन पर ध्यान दिया था उन्होंने अपने पहले कार्यकाल में। बड़ी-बड़ी चीजें बहुत हुई हैं। देश को नया संसद भवन मिला है, नए एक्सप्रेस-वे मिले हैं, नए हवाईअड्डे बने हैं, नए मेडिकल कालेज खुले हैं। 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' वाला नारा मिला है। कई भाजपा शासित राज्यों में महिलाओं को 'लखपती दीदी' और 'ड्रोन दीदी' बना दिया गया है। ये छोटी उपलब्धियां नहीं हैं और मुख्यमंत्री कहते नहीं थकते हैं कि ये सब कुछ हुआ है मोदी की दूरदर्शिता से।

देश जानता नहीं है कि मोदी जब से प्रधानमंत्री बने हैं विकास की गति बढ़ी है लंबी छलांगें लेकर। इसलिए समझना मुश्किल है कि मोदी को इतने खुशामदियों की क्या जरूरत है? खुशामदी हर बड़े राजनेता के करीब होने का प्रयास करते हैं, लेकिन जिनकी खुशामद करते हैं ये लोग, उनका अक्सर नुकसान करते हैं लाभ पहुंचाने के बदले। इसलिए कि जिस राजनेता को तारीफ सुनने की आदत पड़ जाती है, वह शक्तिशाली होने के बजाय कमजोर होता है और फिर आलोचना थोड़ी-सी भी हो अगर, तो तकलीफ देती है।

मोदी कहते हैं कई बार कि उनको आलोचक पसंद हैं, लेकिन आलोचना सकारात्मक होनी चाहिए नकारात्मक नहीं। यही तो हो रहा है इन दिनों प्रधानमंत्रीजी। स्कूल ठीक करो अभियान सकारात्मक है, लेकिन अब उत्तर प्रदेश में स्कूलों को ठीक करने के बदले काकरोच पार्टी वालों को भगाने का काम हो रहा है। ऐसा करना नकारात्मक नहीं, तो और क्या है? प्रधानमंत्री के जन्मदिन पर मैंने दुआ यह की कि वे उन चीजों पर ध्यान देना शुरू करें, जिन पर दूसरे और तीसरे कार्यकाल में उन्होंने ध्यान कम दिया है। मेरी सूची में सबसे ऊपर है शिक्षा में सुधार लाना।

सच तो यह है कि प्रधानमंत्री के इस जन्मदिन को जब याद करूंगी, तो याद आएंगे, वे छोटे बच्चे जो दीयों में से तेल बोतलों में डाल कर घर लेकर गए थे, ताकि खाना पकाने में काम आए। जलते दीये कम याद आएंगे।

बौद्धिकता का बोध

संदर्भ

राकेश सिन्हा

> देश की राजनीति में एक अवसर आया, जब इसने श्रेष्ठता को गले लगाया। संविधान सभा महान विभूतियों की जुटान थी, चाहे गांधीवादी हों, समाजवादी हों या दक्षिणपंथी, सभी ज्ञान और अनुभवों का संगम थे। इसलिए विमर्श, संवाद, वाद-विवाद और पात्रता पर जब सवाल उठता है, तो सभी लोग संविधान सभा को ही याद करते हैं। यह राजनीति और बौद्धिकता का सुखद, मगर संक्षिप्त मांगलिक काल था। सवाल है कि हम सिर्फ अपनी बौद्धिक विरासत पर कितना और कब तक इठलाते रहेंगे?

भारत के कोने-कोने में बौद्धिक गतिविधियों के आयोजन की ललक देखी जा सकती है। कई ग्रामीण अंचलों में तो दो या तीन दिनों का वार्षिक व्याख्यान आयोजित होता है। यह लोगों की बौद्धिक रुचि का सूचक है। मगर इन आयोजकों को संसाधनों की कमी का संकट नहीं, बल्कि उन्हें वक्ताओं की खोज में पसीना बहाना पड़ता है। ऐसा नहीं है कि उच्च पदों, पुरस्कारों, पुस्तकों और बड़े मंचों के जरिए प्रसिद्धि पाए नामों या टेलीविजन चैनलों पर अराजक भाषा शैली से लोकप्रियता हासिल करने वाले पात्रों की कमी है। मगर उनमें न साहित्य है, न समाजशास्त्र। हां, हंसाने-रुलाने, तालियां बटोरने और जानकारियों को 'भानुमति का कुनबा' बनाकर परोसने की कला में वे जरूर निपुण हैं। जब-जब बौद्धिकता का प्रतिनिधित्व ऐसे लोगों द्वारा किया जाता है, समाज दिशाहीन महसूस करता है और मस्तिष्क अपनी बौद्धिक भूख मिटाने के लिए विकल्प तलाशता है। आज वही हो रहा है। भौतिकता और तकनीक सबसे नजदीक के मानसिक पड़ोसी बनते जा रहे हैं।

ऐसा उस देश में हो रहा है, जहां सिद्धांतों और दर्शनों की सूची कभी पूर्ण रूप से तैयार नहीं की जा सकती है। पतंजलि, गौतम बुद्ध, बाणभट्ट और कालिदास समेत अनगिनत रचनाकार हैं। मगर पिछले पांच-छह दशकों से नेहरू और गोलवलकर के बीच स्वघोषित पैरोकार बनकर बौद्धिक वर्ग प्रतिस्पर्धा करता रहा है। ऐसा करने से न तो नेहरू का नुकसान हुआ और न ही गोलवलकर का। हां, बौद्धिकता का ह्रास जरूर हुआ। यह प्रवृत्ति नेहरूवादियों और वामपंथियों ने शुरू की। जी भरकर गोलवलकर पर कीचड़ उछाला गया। स्वाभाविक है, प्रत्युत्तर के लायक नेहरू ही थे।

इसने विश्वविद्यालय परिसरों एवं राजनीतिक गलियारों के बीच भाषा, भाव-भंगिमा और तर्क सहित सभी स्तरों पर अंतर समाप्त कर दिया। इसका एक और दुष्परिणाम हुआ- बुद्धिजीवियों में राजनीति के प्रति आकर्षण जरूरत से ज्यादा बढ़ गया। पहले भी थोड़ा-बहुत था, पर जब बौद्धिकता से समझौते का प्रश्न उठा, तब बौद्धिकों ने राजनीति को त्याग दिया। माखन लाल चतुर्वेदी इसके उदाहरण हैं। स्वतंत्रता संग्राम में दर्जनों बार उनके घर पर साम्राज्यवादियों ने छापा डाला था। उन्होंने जेल से 'पुष्प की अभिलाषा' कविता लिखी। स्वतंत्रता के बाद वे मध्य प्रदेश में कांग्रेस में सक्रिय हुए। मगर उन्हें अपमान का सामना करना पड़ा। आदर्श और यथार्थ के बीच के अंतर का प्रत्यक्ष अनुभव लेकर उन्होंने राजनीति को अलविदा कह दिया।

आंचलिक पत्रकारिता के जनक फणीश्वरनाथ रेणु ने भी यही किया। हमारे समाज में ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं। देश की राजनीति में एक अवसर आया, जब इसने श्रेष्ठता को गले लगाया। संविधान सभा महान विभूतियों की जुटान थी, चाहे गांधीवादी हों, समाजवादी हों या दक्षिणपंथी, सभी ज्ञान और अनुभवों का संगम थे। इसलिए विमर्श, संवाद, वाद-विवाद और पात्रता पर जब सवाल उठता है, तो सभी लोग संविधान सभा को ही याद करते हैं। यह राजनीति और बौद्धिकता का सुखद, मगर संक्षिप्त मांगलिक काल था।

पूरी दुनिया की सभ्यता इस बात की साक्षी है कि बौद्धिकता का ह्रास उसे संकीर्णताओं, हिंसात्मक प्रवृत्तियों, अराजक जीवन शैलियों और तर्कहीनता की ओर ले जाता है। साहित्य और समाजशास्त्र ही उसे इस सब से बचाता है। इसका कितना महत्त्व है, इसे इस उदाहरण से समझा जा सकता है- राजा पेएसी (प्रदेशी) अधर्म का प्रचारक था। उसके विवेक और आचरण में धर्म का स्थान नहीं था। जैन धर्म के संस्थापक पार्श्वनाथ की परंपरा में केशी कुमार श्रमण ने राजा से संवाद किया। वे आध्यात्मिक ज्ञान और चिंतन आधारित स्वाध्याय से लबालब थे। पेएसी आत्मा के अस्तित्व को नकारता था और भौतिकवाद को अंतिम सत्य मानता था। उसने आत्मा के अस्तित्व को जानने के लिए वह प्रयोग कर रखा था, जो आज के समय में डंकल मैकडोगल ने किया है। उदाहरण के तौर पर प्राणदंड से पूर्व और बाद में चोर का वजन लिया और उसमें कोई अंतर नहीं था। एक चोर को लोहकुंभी में बंद कर शीशे से ढक दिया। मृत्यु के बाद उसमें कोई छेद नहीं दिखा, जहां से आत्मा के बाहर निकलने की पुष्टि हो सके। मगर कुमार श्रमण उस राजा को धर्म की राह पर लाने में सफल रहे।

साधारणतया यह अपेक्षा की जाती है कि अगली पीढ़ी अपने पहले की पीढ़ी से अधिक बौद्धिकता-संपन्न होगी। मगर परिस्थितियां इसके विपरीत हैं। विचार में परिवर्तन के लिए सैकड़ों पुस्तकों, विविध प्रकार के संवादों और रचनात्मक विमर्शों की आवश्यकता होती है। भौतिकता की आहट बीसवीं सदी के मध्य में सुनाई पड़ने लगी थी। तब भारत के बुद्धिजीवी पीढ़ियों के लिए बौद्धिक ऊर्जा लगाने लगे। 1924 में दक्षिणा रंजन शास्त्री की 'भारतीय भौतिकवाद पर चार्वाक दृष्टि' 1940 में गायकवाड़ ओरिएंटल श्रृंखला में जयराशि भट्ट ने तत्वोप्लवसिंह नामक दार्शनिक ग्रंथ की रचना की, जो नास्तिकवाद के एकपक्षीय दर्शन पर था। देवी प्रसाद चट्टोपाध्याय ने 'लोकायत दर्शन' (1956) लिखा।

जब नवउदारवाद असामाजिकता, धन पशुता, कामाचार और अराजक जीवन शैली की ओर दुनिया को ले जा रहा है, तब भी बौद्धिक वर्ग 'नेहरू-गोलवलकर' के बीच ही शतरंज खेलने में लगा है। समुदाय और परिवार पर घोर भौतिकवाद तथा व्यक्तिवादी संस्कृति के ग्रहण का असर दिखने लगा है। मगर पूरी दुनिया का बौद्धिक समाज अघोषित रूप से 'नीतिमूलक संप्रदाय' का हिस्सा बना हुआ है। यह संप्रदाय किसी सिद्धांत को प्रतिष्ठित नहीं होने देता है। सिर्फ चलती-फिरती भाषा में एक-दूसरे पर प्रहार करता है। न्याय दर्शन में संवाद के तीन प्रकार हैं- वाद, जल्प और वितंडा। सबसे हीन स्तर का वितंडावाद है। इसमें अपना कोई सिद्धांत नहीं होता है। दूसरे पर दोषारोपण कर केवल दोष ढूंढ़ा जाता है। ऐसे बौद्धिक साये में मानसिक क्रांति लाने की कल्पना करना भी जुर्म है। तब स्वेच्छाचार, कामाचार और अराजक जीवन का पनपना स्वाभाविक है। सवाल है कि हम सिर्फ अपनी बौद्धिक विरासत पर कितना और कब तक इठलाते रहेंगे?

छवि की राजनीति

बाखबर

सुधीश पचौरी

> एक दिन 'अंकल सैम जी' जागे और रूस से तेल खरीदने वाले देशों पर 100 फीसद शुल्क लगाने की घोषणा कर दिए, ताकि रूस यूक्रेन के खिलाफ युद्ध को ज्यादा न चला सके। कई विशेषज्ञ कहते रहे कि यह सब भारत और चीन के खिलाफ 'शुल्क आतंक' है।

'ब्रिक्स' की बल्ले-बल्ले... भारत की हल्ले-हल्ले..! मोदी-पुतिन की झप्पियां, मोदी-जिनपिंग का हाथ मिलाना और मोदी-पेजेश्कियान की मुस्कियां... ये छवियां दिनों तक याद रहेंगी..! एक लंबा चौड़ा घोषणा-पत्र... कि आतंकवाद के खिलाफ कोई नरमी नहीं... कोई समझौता नहीं... कि युद्ध नहीं, शांति की जरूरत, किसी देश की दादागीरी स्वीकार नहीं..! तीन दिन तक लगातार ब्रिक्स सम्मेलन की चमक। मीडिया हुआ बावला... कस के मारे अमेरिका और पाक पर कटाक्ष कि ये बना दुनिया के तीन अरब लोगों का संयुक्त मोर्चा... अमेरिकी दादागीरी को आईना... डालर के विकल्प की मांग, जिसके तहत 'ब्रिक्स' के सदस्य देश आपस में अपनी-अपनी मुद्रा में कारोबार कर सकते हैं और डालर की दादागीरी से मुक्त हो सकते हैं! उधर, जब ब्रिक्स में कुछ निंदनीय न मिला, तो निशाना बने 'छोले-भटूरे...' कि विदेशी मेहमानों को शाकाहारी ही क्यों परोसा! भोजन की राजनीति पर चर्चा दो दिन जारी रही, लेकिन तीसरे दिन के बाद निपट गई।

फिर एक दिन खबर आई कि फिल्म 'हनुमान अंश' ने 'धुरंधर' के भी रिकार्ड को तोड़ा... दो करोड़ का खर्चा और कुछ ही दिनों में दो सौ करोड़ रुपए से ज्यादा की कमाई..! 'हनुमांन अंश' के निर्देशक बताते रहे कि किस तरह से 'नीम करौली बाबा' सभी को 'हनुमान चालीसा' का पाठ करने को कहा करते थे... और पाठ करके उसका अर्थ करते दिखे। कई पंडित बताते रहे कि 'हनुमान अंश' ने बड़े बजट की फिल्मों की ऐसी की तैसी कर दी और सबने कहा कि जो फिल्म जनता के दिल की कहानी कहती है, वही हिट होती है।

इसके बरक्स खबर आई 'उमर खालिद' पर बने वृत्तचित्र को दिखाने और न दिखाने के विवाद की..! देखा! अपना समाज कितना 'बहुलतावादी' है कि सबके अपने-अपने हीरो हो सकते हैं।

फिर एक दिन एलान हुआ कि भाजपा शासित इक्कीस राज्यों में आगामी दिनों में समान नागरिक संहिता यानी यूसीसी लागू होगा। इसके बाद तो चैनलों की बहसें भिड़ंतों में बदलनी ही थी और बदलीं भी। सत्ता कहिन कि विकास के लिए यूसीसी जरूरी, लेकिन विपक्ष के कुछ नेता कहिन कि पहले संसद में पास कराते, फिर लागू करते। ये पिछले दरवाजे से क्यों करते हैं? सत्ता प्रवक्ता कहिन कि 'एक देश एक कानून जरूरी'। आगे संसद में भी आ जाएगा, लेकिन आप तो तब भी विरोध करेंगे।

फिर आई यूपीआइ सेवा पर 'शुल्क' लगाने की बात और विरोध में सारा विपक्ष एक साथ लामबंद कि यह तो आम लोगों को लूटना है। पहले मुफ्त रखकर लोगों को यूपीआइ का चस्का लगाया और जब लोगों को आदत हो गई तो 'शुल्क' लगा दिया। यह लोगों की 'खुली लूट' नहीं तो और क्या है..! सत्ता कहिन कि व्यक्ति से व्यक्ति के लेनदेन पर कोई शुल्क नहीं, लेकिन दुकान से खरीद-फरोख्त पर 0.4 फीसद शुल्क लगेगा, जिसे दुकानदार देगा। विपक्ष कहिन कि दुकानदार इसका बोझ ग्राहक पर ही तो डालेगा..!

कई चर्चक यह भी कहिन कि यह सरकार भी पंगा लेने से बाज नहीं आती। एक तो पहले ही इतनी महंगाई और बेरोजगारी, ऊपर से ये शुल्क, लेकिन सरकार कहे कि यूपीआइ के लिए सरकार अब भी 20,000 करोड़ से अधिक की 'सबसिडी' देती है। शुल्क से सरकार का बोझ कुछ ही कम होगा।

फिर एक दिन 'अंकल सैम जी' जागे और रूस से तेल खरीदने वाले देशों पर 100 फीसद शुल्क का नियम पारित करा लिए, ताकि रूस यूक्रेन के खिलाफ युद्ध को ज्यादा न चला सके। कई विशेषज्ञ कहते रहे कि यह सब भारत और चीन के खिलाफ 'शुल्क आतंक' है। बहरहाल, अगर रूस ने यूरोप को तेल आपूर्ति बंद कर दी, तो यूरोप तो ठंड से मर जाएगा। तब 'अंकल सैम' क्या करेंगे? कुछ कहिन कि भारत को इस गीदड़ भभकी के आगे नहीं झुकना है। एक देशभक्त कहिन कि जब भारत 'व्यापार समझौते' पर अब तक नहीं झुका, तो अब क्या झुकेगा?

इसके बाद एक खबर बनाई प्रधानमंत्री मोदी के 76वें जन्मदिवस ने। इस अवसर पर एक ओर 'जेन-जी पीढ़ी' द्वारा बाइक रैली निकाली गई। साथ ही बताया गया कि इस अवसर पर 100 शहरों में 'आशीर्वाद के दीये' जलाए जाएंगे। इसके बाद कहीं तीस लाख दीये जलाए गए तो कहीं बीस लाख। कहीं दस लाख... तो कहीं दो लाख दीये भी जलाए गए!

इस अवसर पर एक चैनल चर्चा में एंकर से लेकर बहुत से चर्चक 'ब्रांड मोदी' को 'डिकोड' करने में लगे रहे। एक कहिन कि जो ब्रांड वक्त के हिसाब से अपने को ढालने की क्षमता रखते हैं, वही जिंदा रहते हैं। 'ब्रांड मोदी' ऐसा ही है। उदाहरण के लिए 20 जुलाई के बाद जब 'जेन-जी' के धरने का दबाव बना, तो तुरंत मोदी अपनी रील बनाकर स्वयं इंस्टाग्राम पर आकर जेन-जी पीढ़ी को संबोधित करते दिखे। ब्रांड मोदी ऐसा ही लचीला है। एक ने कहा कि उनमें अपनी रूढ़ छवि को छोड़ने की जिद है, इसीलिए वे दूसरों से अलग हैं।

इंडियन एक्सप्रेस समूह
जनसत्ता सरोकार
साहित्य
तीन
जनसत्ता | 20 सितंबर, 2026

मनटोरा और चिरई

कहानी

बसंत राघव

जेठ की तपती धूप और उमस में सक्ती स्टेशन के प्लेटफार्म पर बैठे यात्री बार-बार गमछे से चेहरे पोंछ रहे थे। तभी लाउडस्पीकर पर स्थानीय बोली में घोषणा हुई, 'यात्री मन धियान देहू...बिलासपुर-रायगढ़ पैसेंजर थोरिक बेरा मा प्लेटफारम नंबर एक मा आवत हे...।' ट्रेन ढाई घंटे विलंब से चल रही थी। जैसे ही ट्रेन प्लेटफार्म पर रुकी, सुस्त पड़ा स्टेशन देखते-देखते मेले में बदल गया। लोग सामान समेटकर उठ खड़े हुए। कोई बच्चों को खींच रहा था, कोई सामान संभाल रहा था। प्लेटफार्म के बाहर गांव की महिलाएं बांस की टोकरियों में ताजी साग-सब्जियां सजाकर बैठी थीं। सब्जियों पर गांव की मिट्टी की गंध बसी थी। गाड़ी रुकते ही खीरा-ककड़ी बेचने वाली कुछ महिलाएं प्लेटफार्म पर दौड़ीं, लपककर खिड़कियों के पास जा पहुंचीं, 'ले ले बाबू! एकदम बाड़ी के टोरे ताजा हे!'

मनटोरा सिर पर सब्जियों के भारी बोरे लादे भीड़ से जूझ रही थी। सांवला चेहरा पसीने से लथपथ था। माथे की मैरून गोल बिंदी उसके थके चेहरे पर सहज गरिमा बिखेर रही थी। डिब्बे के दरवाजे पर खड़े कुछ आवारा लड़के आती-जाती लड़कियों को घूर रहे थे। मनटोरा पर नजर पड़ी तो एक ने दूसरे के कान में कुछ कहा और दोनों ठठाकर हंस पड़े। मनटोरा ने उनकी ओर देखा तक नहीं। तभी ट्रेन की सीटी बजी। गाड़ी सरकने लगी। अचानक एक भयावह चीख पूरे डिब्बे में गूंज उठी। दस-बारह यात्री दरवाजे की ओर दौड़े। मनटोरा ने सहारे के लिए लोहे के हैंडल पर हाथ रखा ही था कि सिर पर रखा बोरा खिसक गया। उसे बचाने के लिए दोनों हाथ उसकी ओर बढ़े और हैंडल पर पकड़ छूट गई। वह बोरे को कसकर पकड़े डिब्बे के मुहाने से आधी बाहर लटक गई। उसी क्षण दो युवकों ने उसे बोरे समेत पूरी ताकत से भीतर खींच लिया। जरा-सी देर होती तो वह चलती ट्रेन से नीचे गिर जाती। वह दरवाजे के पास फर्श पर आ गिरी। कुछ देर वह हांफती रही। सामने बैठे बूढ़े व्यक्ति ने चिंता से कहा, 'अरे बेटी! अभी नीचे गिर जाती तो? अपनी जान से हाथ धो बैठती! और फिर इन बोरों की क्या कीमत रह जाती?' मनटोरा कुछ नहीं बोली। बूढ़े की बात में उसकी जान की चिंता थी, लेकिन वह जानती थी कि उन बोरों में सिर्फ सब्जियां नहीं, उसके घर का चूल्हा और बच्चों की भूख भी बंधी थी। मनटोरा ने बोरों को टटोला, ढीली रस्सी कसकर बांधी और उन्हें सीट के नीचे खींचकर छिपा दिया। एक कोना फिर भी बाहर झांकता रहा। टीटीई के भय से वह बोरों के सामने तनकर खड़ी हो गई। कुछ यात्रियों की नजरें उसके चेहरे पर नहीं, फटे ब्लाउज से झांकते शरीर पर थीं। उसने पल्लू थोड़ा और खींच लिया और बाहर देखने लगी। तभी दो रेलवे पुलिस के जवान डिब्बे में चढ़े। खाकी वर्दी देखते ही उसकी सांस अटक गई। तीन महीने पहले की घटना आंखों के सामने तैर गई। वही खरसिया स्टेशन था। थोड़े-से पैसों के लिए टिकट बाबू के सामने वह हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाई थी, 'साहब, गरीब लोगन हन...लइका-

हरी सब्जियां प्लेटफार्म पर इस तरह बिखर गई थीं, जैसे उसके भाग्य के अनगिनत टुकड़े हो गए हों। बोरा फट गया था, हरी मिर्च बिखर गई, टमाटर दूर तक लुढ़क गए।

बच्चामन भूख मर जाहीं...।' लेकिन दया नहीं उपजी। गाड़ी चलने लगी तो टिकट बाबू के इशारे पर एक रेलवे पुलिस के जवान ने उसकी दिनभर की मेहनत से भरे सब्जियों के बोरे चलती रेलगाड़ी से नीचे फेंक दिए। हरी सब्जियां प्लेटफार्म पर इस तरह बिखर गई थीं, जैसे उसके भाग्य के अनगिनत टुकड़े हो गए हों। बोरा फट गया था; हरी मिर्च बिखर गई, टमाटर दूर तक लुढ़क गए और ककड़ियां पटरी के किनारे जा गिरीं।

आज फिर खाकी वर्दी देखकर वह खिड़की की ओर सरक गई। शरीर को इस तरह समेट लिया, मानो रेलगाड़ी के लोहे में ही समा जाना चाहती हो। ठीक वैसे, जैसे घायल चिड़िया शिकारी को देखकर सूखे पत्तों के पीछे सांस रोककर छिप जाती है। लेकिन पुलिसकर्मी की नजर सीधे उसके बोरों पर जा टिकी। 'ये किसके बोरे हैं रे?' 'साहब... मेरे हैं।' 'कहां ले जा रही हो?' 'साहब... रायगढ़... सब्जी बेचने।' 'रोज आती-जाती हो?' 'साहब...आती-जाती हूं।' 'महीना बंधा हुआ है?' मनटोरा चुप रही। उसने आंचल की गांठ खोली और दस-दस रुपए के दो नोट निकालकर बढ़ा दिए। सिपाही ने पूछा, 'टिकट है?' उसने मुड़ा-तुड़ा टिकट दिखाया। 'चालान कटेगा।' मनटोरा समझ गई। उसने दस रुपए का एक और नोट उसकी हथेली पर रख दिया। दोनों सिपाही पैसे जेब में ठूंसकर अगले डिब्बे की ओर बढ़ गए। रायगढ़ आने तक थकान से उसकी आंखें बंद होने लगीं। एक अधेड़ यात्री ने कंधा हिलाकर जगाया। वह हड़बड़ाकर उठी, दोनों बोरे उठाए और ट्रेन से नीचे उतर गई।

प्लेटफार्म पर चलते हुए वह मन ही मन हिसाब लगाने लगी। पुलिसवालों को तीस रुपए, रेल का किराया अठारह रुपए। कुल अड़तालीस रुपए। अच्छा हुआ टीटीई नहीं मिला, वरना सामान के नाम पर चालीस रुपए और ऐंठ लेता। बाजार में आढ़तियों ने उसकी सब्जियां कौड़ियों के भाव तौल दीं। हरी मिर्च, ककड़ी, बैंगन और टमाटर ताजे थे, लेकिन उसकी मेहनत का मूल्य ताजगी से नहीं, उसकी विवशता से तय होना था।

संध्या को घर लौटी तो तीनों बच्चे दौड़कर आए। सबसे छोटी बेटी सुकवारो ने आंचल पकड़कर पूछा, 'दाई! मोर बर खिलउना?' मनटोरा कुछ नहीं कह सकी। उसने सुकवारो को छाती से लगा लिया। आंसू बेटी के बालों में समा गए। रात में खाट पर बैठी वह दूर से आती रेलगाड़ी की 'घड़-घड़' सुनती रही। आज वह आवाज रेलगाड़ी की नहीं, उसके अपने सीने की धड़कन जैसी लग रही थी। 'कहां जाओगी, मनटोरा? आगे क्या करोगी?'

उसने मन ही मन कहा, 'अब नहीं जाऊंगी रायगढ़, चाहे भूखे रहना पड़े...।' लेकिन गरीबी संकल्पों की भाषा नहीं समझती। इतवार की सुबह पेट की आग ने फिर वही सवाल सामने ला खड़ा किया, 'खाएंगे क्या?' तभी उसकी नजर आंगन के ऊपर से उड़ती एक छोटी सी चिड़िया पर पड़ी। उसने पंख फैलाए, एक क्षण हवा में ठिठकी और दूर निकल गई। मनटोरा के भीतर कुछ फड़फड़ाया, 'काश! मेरे भी पंख होते! वह उड़ जाती, बहुत दूर...ऐसी जगह, जहां न टिकट बाबू होता, न खाकी वर्दी और न बाजार के आढ़तियों के पंजे।'

अगले ही क्षण बच्चों के चेहरे सामने आ गए। पेट की आग ने उसके सपनों के पंख जला दिए थे। मनटोरा उठी। उसने आंचल में पांच, दस और पचास रुपए के नोटों की छोटी सी गांठ बांधी। गांव की बाड़ी से खरीदी सब्जियां बोरे में भरीं। बोरा सिर पर रखा। एक पल दरवाजे पर ठिठकी, आंखों के लोर पोंछे और चल पड़ी। दूर कहीं रेलगाड़ी की सीटी सुनाई दी। स्टेशन पास आता गया। वही प्लेटफार्म, वही आवाजें, वही धक्का-मुक्की, वही वर्दीवाले और वही बाजार, जहां गरीब की मेहनत का भाव कोई और तय करता था।

मनटोरा ने एक बार ऊपर देखा। आसमान साफ था। चिड़िया कहीं दिखाई नहीं दी। शायद बहुत दूर उड़ गई थी, या अपने घोंसले में लौट गई थी। रेल की सीटी फिर गूंजी। मनटोरा भीड़ में समा गई।

समय सूचक

बेरोजगारी बनाम दोपहर का भोजन

जनसत्ता सरोकार

एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार दोपहर के भोजन पर जुटता है और हिंदी साहित्य को ऐसी कहानी मिल जाती है, जहां भूख की भाषा देश के हालात से संवाद करती है। क्या महीने की आय खत्म होने से पहले घर का राशन तो खत्म नहीं हो रहा है? पति के पास नौकरी नहीं है, संतान बेरोजगार है लेकिन भूख सभी सदस्यों को लगती है। अमरकांत की कहानी दोपहर का भोजन का रचनाकाल 1955 के आसपास का है। लेकिन आज सात दशक बाद भी यह कहानी निम्न मध्यवर्गीय परिवार की थाली के आसपास घूमने लगती है।

'दोपहर का भोजन' कहानी की मुख्य किरदार सिद्धेश्वरी है। वह अपने पति मुंशी चंद्रिका प्रसाद और बेटों रामचंद्र, मोहन और प्रमोद के बीच अभाव को इस तरह संभालती है कि परिवार के सभी सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति सहृदयता बची रहे। सिद्धेश्वरी मुंशी चंद्रिका प्रसाद को बताती है कि कैसे उनका बेटा उनकी तारीफ कर रहा था तो दोनों बेटों को भी ऐसे ही दिलासा देती है। घर में इतना ही राशन है कि सिर्फ चूल्हा जलने, खाना बनाने और खाना खाने की औपचारिकता पूरी होती है। खाना सबने खाया है, लेकिन पेट किसी का भी नहीं भरा है। भूखे सभी हैं, लेकिन शिकायत कोई नहीं कर रहा है। हर सदस्य की भूख दूसरे की परवाह कर रही है। अमरकांत भूख का ऐसा मनोविज्ञान रचते हैं जहां बिना कटुता के अभाव को अभावमुक्त भाव से महसूसा जा सकता है।

अमरकांत

दोपहर के भोजन का रचनाकाल यानी 1950 का दशक निम्न मध्यवर्ग बेरोजगारी, कम आमदनी और सीमित संसाधनों से जूझ रहा था। ऐसे में दोपहर के भोजन के समय घर में सभी सदस्यों का जुटान बेरोजगारी का भी प्रतीक है। घर के सदस्यों के पास रोजगार है तो वे सुबह अपने साथ खाने का डिब्बा लेकर जाते हैं। उनके पास दोपहर के भोजन के लिए घर वापसी का वक्त नहीं होता है।

होलू बना पेड़

बाल कथा

दिविक रमेश

कुछ दिनों से होलू को एक और बात अच्छी लग रही थी। सुबह-सुबह उठने की। शुरू में तो अच्छी नहीं लगती थी। उसे तो बस उसी समय उठना पसंद था जब स्कूल के लिए तैयार होकर दौड़ना होता। करे भी क्या। रात देर तक तो मोबाइल ही देखते रहना होता था। मम्मी-पापा कहते भी कि ज्यादा मोबाइल नहीं देखना चाहिए। पर उसके पास कोई न कोई बहाना होता। जल्दी सोने को कहा जाता तो बस यह कह कर टाल देता 'सो रहा हूं न! बस कुछ देर और!' इस बारे में तो वह अपने दोस्त लू लू की बात भी नहीं सुनता था।

एक दिन लू लू को एक पत्रिका में मोबाइल के नुकसान पर कविता मिली। उसने पत्रिका चुपके से होलू के बस्ते में रख दी। एक दिन अचानक होलू ने दिशा ग्रोवर की कविता पढ़ी, जो मोबाइल की विनती पर थी। कविता में मोबाइल कह रहा था, 'अरे मुझे भी दे दो /थोड़ा सा आराम/दिनभर सबका साथ निभाता/कितने करता काम।' कविता पढ़ कर होलू ने सोचा कि वह तो बेचारे मोबाइल को जरा भी आराम नहीं करने देता। बस उसने मोबाइल को आराम करने का समय देना शुरू कर दिया। रात में ठीक समय पर सोना भी शुरू कर दिया। सुबह जल्दी भी उठने लगा। अब तो वह खुद चाहता है सुबह उठना। मम्मी-पापा के साथ पार्क में जाना।

पर होलू का दिमाग तो होलू का है। फिर कुछ नया सोचने लगा। इस बार घास और आसपास के पेड़ों के बारे में। उसने सोचा कि घास हमारी तरह बोल पाती तो क्या कहती। हम तो उस पर कितना चलते हैं। दौड़ते भी हैं। उसे दर्द भी तो होता होगा। शायद रोती भी हो। पेड़ भी पता नहीं क्या सोचते होंगे। वे भी अगर हमारी तरह बोल पाते तो कितना मजा आता न! होलू ने यह भी सोचा। अगर पेड़ बोल पाते। हमारी तरह। तो वह पूछता। उनके फल लेने पर उन्हें कैसा लगता है। कहीं दुख तो नहीं होता। सोचते-सोचते उसे लगा। पापा को शायद पता हो, तो चल पड़ा पापा की ओर। थोड़ी दूर पर ही तो बैठे थे।

पापा के पास पहुंच कर होलू बोला, 'मैं एक बात बताना चाहता हूं। पर पहले वादा करो कि सुन कर वैसा नहीं कहोगे कि मुझे धत्त तेरे की, कहना पड़े। किसी को बताएंगे भी नहीं।' 'अरे! बता तो सही। नहीं कहूंगा किसी को।' पापा ने प्यार से मुस्कुराते हुए कहा। 'अगर घास हमारी तरह बोल पाती। तो अपना दर्द बताती न? हम उस पर कितना-कितना चलते हैं। दौड़ते भी हैं। और हम पेड़ों के फल तोड़ लेते हैं। उन्हें भी दुख होता होगा न? अगर वे भी बोल पाते। हमारी तरह। तो बताते न?' होलू ने एक सांस में अपनी बात कह दी।

सुन कर पापा चुप से हो गए। उन्हें होलू पर बहुत प्यार आया। होलू को भी लगा। पर क्यों, यह नहीं पता चला। होलू बोला, 'पापा मेरा सोचना आपको अच्छा नहीं लगा क्या?' नहीं होलू, वह तो बहुत अच्छा लगा। इतना अच्छा कि मेरी बोलती ही बंद हो गई। मैं खुशी के मारे चुप हो गया।' पापा ने प्यार से टपकते शब्दों में कहा। होलू खुश हुआ।

पापा ने कहा, 'सबसे पहले तो यह समझ लो। अगर घास बोल पाती हमारी तरह तो तुम्हारा धन्यवाद करती। रोज-रोज उससे मिलने आने के लिए। वह कहती, तुम्हारे आने से उसका अकेलापन खत्म होता है। तुम खेलते हो तो साथ-साथ वह भी खेलती है। तुम्हें बिना बताए। तुम्हें खुश देखकर उसे भी खुशी होती है। हां, यह जरूर कहती कि उसका ध्यान जरूर रखो। उसे गंदा न करो। माली दादा को उसका ध्यान रखने को कहते रहो।' होलू को पापा की बात इतनी अच्छी लगी कि एक बार को तो चुप ही हो गया। फिर संभला। और बोला, 'पापा, घास को मैं दादी कहूं। जो बात आपने घास की बताई है न, वैसा ही सब तो तो दादी भी कहती है न! दादी को भी तो अकेला रहना अच्छा नहीं लगता।' पापा की मुस्कान खिल गई। बोले 'और सुन होलू। हम सबको अपने फल देकर पेड़ों को भी बहुत

पापा को होलू पर इतना प्यार उमड़ा कि अपनी ओर खींच कर उसे छाती से ही लगा लिया। बोले, 'जानते हो होलू। तुम अभी बहुत छोटे हो। बड़े होकर तुम बहुत अच्छे इंसान बनोगे। पता है क्यों? क्योंकि तुमने घास और पेड़ को भी अपना-सा समझ कर सोचा। अपने ढंग से उनके दर्द को महसूस करने की कोशिश की।'

अच्छा लगता है। बहुत सुख मिलता है उन्हें। वे बोल पाते तो यही बताते। जब फल मिलने के बाद वे हमें खुश देखते हैं तो उन्हें बहुत-बहुत अच्छा लगता है। चाहने लगते हैं कि और फल दें। कहते ले लो, जितने चाहे फल ले लो। सब तुम्हारे हैं। दूसरों के काम आकर हमें सबसे बड़ा सुख मिलता है। बस हमारा बुरा कोई न करे। हमें काटे नहीं।'

होलू ने खुश होकर कहा, 'पापा कभी-कभी मैं भी पेड़ बन जाता हूं न। उस दिन जब मैंने भोलू को अपने खाने में से कुछ खाना दिया था तो उसने भी मुझे पेड़ समझा होगा न? उसके पास उस दिन खाना नहीं था। अब मैं ज्यादा-ज्यादा पेड़ बनूंगा पापा। पूरा पेड़ तो नहीं। पर अपनी चीजों में से कुछ चीजें उनको भी दूंगा जिनके पास वे नहीं होंगी।' पापा को होलू पर इतना प्यार उमड़ा कि अपनी ओर खींच कर उसे छाती से ही लगा लिया। बोले, 'जानते हो होलू। तुम अभी बहुत छोटे हो। बड़े होकर तुम बहुत अच्छे इंसान बनोगे। पता है क्यों? क्योंकि तुमने घास और पेड़ को भी अपना-सा समझ कर सोचा। अपने ढंग से उनके दर्द को महसूस करने की कोशिश की।'

होलू ने थोड़ा नटखट बनते हुए कहा, 'पर पापा, घास और पेड़ तो बोले ही नहीं। आप ही घास और पेड़ बनकर बोले न! जब मैं उनके बोलने के बारे में सोच रहा था तो लगा था कि कहीं सब हंसे न? मेरी सोच जानकर। और मुझे धत्त तेरे की न कहना पड़ जाए। पापा हंसे और बोले, 'धत्त तेरे की। मैंने क्या कर दिया। तुझे बचा लिया।' होलू काफी देर तक हंसता रहा।

राजनीति में अविवाहित

जनसत्ता सरोकार

'अविवाहित होने के नाते मुझे मजबूरी में सबसे छोटे भाई आनंद कुमार को साथ रखने की जरूरत पड़ी जो मेरी पूरी निगरानी में पार्टी की अहम जिम्मेदारियों को लंबे समय से निभा रहे हैं। लेकिन इसका लाभ अब उनके परिवार के लोग भी उठाएं तो यह पार्टी व मूवमेंट के हित में सही नहीं होगा।' बहुजन समाज पार्टी की प्रमुख मायावती का यह उद्गार राजनीति में स्त्री, विवाह और संतति के विरोधाभासों को उजागर करता है।

भारतीय राजनीति में मायावती एक मिसाल हैं। कांशीराम की स्थापित विचारधारा को आगे बढ़ाने का जज्बा मायावती में था और वे इस विरासत की उचित हकदार थीं। भारतीय राजनीति में मायावती के उद्भव ने बहुजन और स्त्री दोनों के सशक्तीकरण की नई गाथा कही थी। चाहे स्त्री हो या पुरुष राजनीति का दायरा उन्हें अपने परिवार से निकाल कर विस्तृत दायरे में ले जाता है। राजनीति में दायरे के इस वृहत्तर की मांग के कारण अविवाहित होना भी एक गुण में आ जाता है। मायावती, जयललिता, ममता बनर्जी की परिवारेत्तर विस्तृत स्थिति ने उन्हें एक सम्मोहक छवि दी। कई

मार्गदर्शन

पुरुष राजनेता भी ऐसे रहे, जिन्होंने विवाह नहीं किया, या विवाह के बाद भी अपने परिवार से संपर्क नहीं रखा था तो उन्हें राजनीति के लिए उपयुक्त माना जाता है।

सुसान मोलर ओकिन का कहना है कि परिवार को निजी कहकर राजनीति और न्याय से अलग नहीं किया जा सकता। पारंपरिक लैंगिक भूमिकाएं राजनीति और कार्यस्थल में भी असमानता बनाए रखती हैं। ओकिन का कहना है कि आधुनिक न्यायपूर्ण समाज में विवाह को स्वाभाविक रूप से प्रभुत्व और अधीनता के रिश्ते के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। वहीं एनी फिलिप्स के राजनीतिक चिंतन की बात करें तो इसमें निजी और सार्वजनिक जीवन के पारंपरिक विभाजन को चुनौती दी गई है। यानी घर, विवाह, परिवार को केवल निजी मामला मान कर राजनीति से अलग नहीं किया जा सकता है। यह विचार स्त्री राजनेताओं की वैवाहिक स्थिति पर खासा प्रासंगिक है क्योंकि पुरुष नेता के परिवार को अक्सर निजी जीवन माना जाता है, जबकि महिला नेता के विवाह, पति और मातृत्व को सार्वजनिक मूल्यांकन का हिस्सा बनाया जाता है। वहीं हन्ना पिटकिन का मानना रहा है कि जनप्रतिनिधि का मूल्यांकन उसके काम और जनता के हित में उसके कार्य से होना चाहिए। सिर्फ उसकी व्यक्तिगत या सामाजिक पहचान से नहीं। मुकुल केशवन दक्षिण एशियाई राजनीति को स्त्री राजनेता के संदर्भ में देखते हुए एक अहम बात कहते हैं-आम तौर पर भारत जैसे देश में शीर्ष राजनीतिक पद तक पहुंची कई महिलाओं की अविवाहित या किन्हीं अन्य कारणों से एकल रह रही स्थिति को समाज ने एक तरह से राजनीतिक स्वायत्ता से जोड़ दिया होता है। विवाहित राजनेता को कभी-कभी पति के प्रभाव में होने के संदेह से भी देखा जा सकता है।

इन विमर्शों को देखते हुए बसपा सुप्रीमो मायावती का उद्गार एक बहस की मांग करता है।

बड़ी होकर 'जो' बनना चाहती हूं

जनसत्ता सरोकार

एक समय ऐसा था जब लड़कियों से यह नहीं पूछा जाता था कि वे बड़ी होकर क्या बनना चाहती हैं? समाज पहले से तय कर चुका होता था कि लड़कियों को किस तरह से बड़े होना है, किस तरह से बोलना है और आइंदा जिंदगी में क्या करना है। लुइसा मे अल्काट के उपन्यास 'लिटिल विमेन' की किरदार 'जो मार्च' अपनी जिंदगी के कैलेंडर के पन्ने समाज की तय तारीखों के हिसाब से नहीं बदलना चाहती है।

जो मार्च उन्नीसवीं सदी के अमेरिका की लड़की है। सिर पर बिखरे हुए बाल, हाथों में कागज का पुलिंदा और मन में एक जिद। जिद अपनी कहानी खुद से लिखने की। जब हाथों में कलम हो तो शब्द भी अपने अनुभव के होने चाहिए। आज से एक सदी पहले की किरदार जो को गुड़ियों से ज्यादा किताबें पसंद हैं। वह तयशुदा अच्छी लड़की के बजाय वैसी आजाद इंसान बनना चाहती है, जिसका सांचा अभी तक बनाया नहीं गया था। यानी जो मार्च को अपनी इच्छित आजादी की कहानी खुद ही लिखनी थी। उसका बागी मन बार-बार सवाल करता है कि उसके आस-पास लड़कों को जितनी आजादी मिली हुई है, उससे लड़कियां वंचित क्यों हैं।

जो से पूछा जाता है कि वह किस तरह की महिला बनना चाहती है तो उसका जवाब होता है कि वह

अमर किरदार

जो मार्च अपनी पहचान बनाना चाहती है। अपने भीतर की दुनिया को बचाए रखने के लिए वह खूब लिखती है। इसी लिखने की वजह से न वह सिर्फ अपने अंदर की दुनिया को बचाए रखती है बल्कि वह एक नई दुनिया बनाती भी है।

किसी और की तरह नहीं बल्कि खुद की तरह 'जो' बनना चाहती है। जो गुस्सा भी करती है और कुछ लोगों से उसे ईर्ष्या भी होती है। अपनी बहन एमी से जोरदार लड़ाई करती है तो गुस्से में किसी को आहत करने वाले शब्द भी बोल देती है। जो अपनी तीन बहनों मेग, बेथ और एमी के साथ भी संवाद का आजाद भरा रिश्ता चाहती है। वह अपनी अन्य बहनों की तुलना में बेचैन है। लेखक ने दिखाया है कि आजाद-खयाल बनने की प्रक्रिया के दौरान कोई उसी तरह का व्यवहार कर सकता है जिससे वह खुद मुक्ति पाना चाहता है। जो भी ऐसी हरकतें करती है, लेकिन बाद में वह उस पर सोचती है और खुद को गलत पाने पर अपने सुधार के लिए भी काम करती है।

जो मार्च अपनी पहचान बनाना चाहती है। उसे लेखिका बनना है। अपने भीतर की दुनिया को बचाए रखने के लिए वह खूब लिखती है। इसी लिखने की वजह से न वह सिर्फ अपने अंदर की दुनिया को बचाए रखती है बल्कि वह एक नई दुनिया बनाती भी है। जो मार्च का बुनियादी सवाल यही है कि क्या किसी लड़की को अपनी कहानी खुद लिखने का अधिकार है? इस दौरान प्रेम, शादी, घर-परिवार, जिम्मेदारी को लेकर भी द्वंद्व चलता है। क्या लड़कियों को इन सारी भूमिकाओं से मुठभेड़ करनी है या वो कोई अपनी इच्छित भूमिका भी चुन सकती है?

जो के सामने चुनौती यह भी है कि लेखन की दुनिया आत्मकथा भर नहीं होती है। कोई आत्मकथा तभी लिख पाता है जब वह दुनिया को ठीक से समझ पाता है। आत्मकथा सिर्फ रोजनामचा नहीं होती। यह हर व्यक्ति की समाज से निजी मुठभेड़ होती है।

तीखा पहाड़ी लहसुन भरपूर औषधीय गुण

आमतौर पर लोग सामान्य लहसुन का उपयोग करते हैं, लेकिन क्या कभी आपने पहाड़ी लहसुन का इस्तेमाल किया है? यह बाजार में बिकने वाले लहसुन से काफी अलग होता है। इसे कश्मीरी या हिमालयी लहसुन भी कहते हैं। पीले मटर जैसे दाने में बंद इस लहसुन का स्वाद तीखा होता है, लेकिन यह औषधीय गुणों से भरपूर माना जाता है। इसकी कई विशेषताएं हैं जो सेहत के लिए अच्छी मानी गई है। अपनी गुणवत्ता के कारण पहाड़ी लहसुन महंगा बिकता है। इसे कच्चा खाएं या पका कर, यह हर लिहाज से स्वास्थ्यवर्धक है। खास बात यह कि इस लहसुन से जहां कोलेस्ट्राल नियंत्रित रहता है, वहीं यह हृदय को स्वस्थ रखता है। इससे शरीर में रक्त शर्करा भी काबू में रहती है।

औषधि का पर्याय

पहाड़ी लहसुन का आयुर्वेद में तो महत्त्व है ही, वहीं पारंपरिक चिकित्सा में इसे देसी नुस्खे के रूप में भी आजमाया जाता रहा है। सामान्य तौर पर इस लहसुन का इस्तेमाल रोग प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत करने, शारीरिक ऊर्जा बढ़ाने और पाचन मजबूत करने के लिए किया जाता रहा है। यह स्वास्थ्य संबंधी कई समस्याओं को सहजता से दूर कर देता है। यों तीखे स्वाद के कारण इसे भोजन बनाते समय भी इस्तेमाल किया जाता रहा है। दरअसल, इसमें सल्फर युक्त विशेष यौगिक 'एलिसिन' व्यक्ति को रोगाणुओं से मुक्त कर देता है। इसमें खास तरह के तत्त्व फ्लेवोनोइ्स और पालीफेनोल्स तनाव को कम करते हैं। इससे रक्तचाप भी काबू में रहता है। सूजन और जोड़ो में दर्द से निजात पाने के लिए भी पहाड़ी लहसुन का इस्तेमाल किया जाता रहा है। इसमें मौजूद सल्फर यौगिक यकृत को भी साफ करता है। इससे विषैले तत्त्व शरीर से बाहर निकल जाते हैं।

ऊर्जा का संचार

पहाड़ी लहसुन का नियमित उपयोग करने से कमजोरी दूर होती है। शरीर में ऊर्जा का संचार होता है। थकान दूर होने लगती है। इसी के साथ रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ जाती है। यह लहसुन शरीर में नाइट्रिक एसिड बढ़ा देता है। जिससे नसों में रक्त संचार बेहतर हो जाता है। इसे पुरुषों के लिए खास तौर से शक्तिवर्धक माना गया है। पहाड़ी लहसुन फंगस रोधी होने के साथ जीवाणुरोधी भी होता है। यह दमा रोगियों के लिए भी फायदेमंद है। इसका सेवन संपूर्ण स्वास्थ्य के लिए अच्छा है।

कई रोग में उपयोगी

पहाड़ी लहसुन का अगर नियमित सेवन किया जाए, तो कई बीमारियों से छुटकारा मिल जाता है। यहां तक कि कैंसर जैसे गंभीर रोग के जोखिम को भी कम करने में मदद मिल सकती है। दरअसल, इस लहसुन में एक खास यौगिक होता है जो कैंसर कोशिकाओं को खत्म करने में मदद करता है। पहाड़ी

नुस्खे

लहसुन मधुमेह को भी काबू करने में सहायक साबित हुआ है। दरअसल, इसमें मौजूद 'एलिसिन' विटामिन-बी और 'थायमिन' के साथ मिल कर पैंक्रियाज को इंसुलिन उत्पन्न करने के लिए सक्रिय करता है। इससे शरीर को मधुमेह से लड़ने में मदद मिलती है। पहाड़ी लहसुन का उपयोग करने से खांसी और सामान्य सर्दी-जुकाम काबू में रहता है।

सौंदर्य का मकड़जाल

समाज-संस्कृति

संगीता सहाय

किसी लड़की के जन्म पर घर में सबसे पहले यह देखा जाए कि वह कितनी गोरी है, तो समस्या उस लड़की के रंग में नहीं, समाज की नजर में है। जिस समाज में बेटी की शिक्षा, स्वास्थ्य और आत्मनिर्भरता से पहले उसके चेहरे की चिंता होने लगे, वहां सौंदर्य केवल सौंदर्य नहीं रह जाता। वह सामाजिक मूल्यांकन की कसौटी बन जाता है। रंग, नैन-नक्श और देह की बनावट के आधार पर किसी मनुष्य की कीमत तय करना दरअसल उसके व्यक्तित्व को उसकी त्वचा तक सीमित कर देना है।

हमारे सामाजिक जीवन में रूप को गुण से पहले रखने की परंपरा पुरानी है। 'पहली नजर में रूप दिखाई देता है' जैसी बात कब सामाजिक आग्रह में बदल गई, इसका पता भी नहीं चला। घर-परिवार से लेकर सार्वजनिक आयोजनों तक आकर्षक चेहरे को विशेष महत्त्व मिलता है। फिल्मों, विज्ञापनों और लोकप्रिय संस्कृति ने भी इस धारणा को विस्तार दिया। खासकर स्त्री के मामले में सौंदर्य को पहचान का केंद्रीय हिस्सा बना दिया गया। इससे भ्रम हुआ कि स्त्री की स्वीकार्यता उसके विचार, श्रम और प्रतिभा से पहले उसके रूप पर निर्भर है।

व्यवस्था के संकेत

विवाह इस मानसिकता का सबसे स्पष्ट उदाहरण है। लड़की शिक्षित हो, नौकरी करती हो, समझदार और आत्मनिर्भर हो, फिर भी विवाह के समय उसके रंग और रूप का सवाल अचानक प्रमुख हो जाता है। 'गोरी लड़की' की मांग केवल व्यक्तिगत पसंद नहीं, यह उस सामाजिक व्यवस्था का संकेत है, जिसमें स्त्री को उसके व्यक्तित्व के बजाय एक संभावित पत्नी और बहू के रूप में परखा जाता है। पुरुष के लिए आमतौर पर शिक्षा, रोजगार, आय और सामाजिक स्थिति महत्त्वपूर्ण मानी जाती है, जबकि स्त्री के मूल्यांकन में रूप को असंगत महत्त्व दिया जाता है।

इसका असर बचपन से दिखाई देने लगता है। सांवली बच्ची को धूप से बचने की सलाह मिलती है, रंग निखारने के घरेलू नुस्खे बताए जाते हैं और किशोरावस्था आते-आते क्रीम, प्रसाधन और सौंदर्य उपचार उसके जीवन का हिस्सा बनने लगते हैं। चिंता यह नहीं कि वह क्या पढ़ना चाहती है, किस क्षेत्र में आगे बढ़ सकती है या उसमें कौन-सी प्रतिभा है, चिंता यह होती है कि बड़ी होने पर उसका विवाह कैसे होगा। इस तरह उसके भीतर यह धारणा धीरे-धीरे बैठा दी जाती है कि उसका सामाजिक भविष्य उसके चेहरे से जुड़ा है।

यहीं सौंदर्य का दबाव आत्महीनता में बदलने लगता है। लड़की अपने व्यक्तित्व की संभावनाओं के बजाय अपनी कथित कमियों पर नजर रखने लगती है। खेल, संगीत, कला, विज्ञान, साहित्य या किसी पेशे में आगे बढ़ने की उसकी आकांक्षाएं पीछे छूट सकती हैं। समस्या यह है कि उसे यह विश्वास दिलाया जाता है कि सुंदर दिखे बिना वह पर्याप्त नहीं है। यह विश्वास उसकी ऊर्जा को आत्मविकास से हटाकर आत्म-संशोधन में लगा देता है।

बाजार की कसौटी

सौंदर्य का यह दबाव केवल उन स्त्रियों तक सीमित नहीं रहता, जिन्हें प्रचलित मानकों के अनुसार सुंदर नहीं माना जाता। जिन्हें सुंदर कहा जाता है, उनके सामने भी उस सुंदरता को बनाए रखने की जिम्मेदारी खड़ी कर दी जाती है। उम्र बढ़ना, शरीर में बदलाव या चेहरे पर झुर्रियां आना स्वाभाविक प्रक्रियाएं हैं, मगर बाजार और सामाजिक अपेक्षाएं इन्हें 'दोष' की तरह पेश करती हैं। इस तरह सौंदर्य लगातार निभाई जाने वाली भूमिका अधिक बन जाता है।

दरअसल, बाजार पहले व्यक्ति को उसकी किसी कथित कमी का अहसास कराता है, फिर उसके समाधान के नाम पर उत्पाद बेचता है। कभी 'गोरा होने' का दावा सामने था, अब 'ग्लो', 'ब्राइटेनिंग' और 'इवन टोन' जैसे शब्द हैं। शब्दावली आधुनिक हुई है, लेकिन मूल संदेश नहीं बदला। आप जैसे हैं, उससे बेहतर दिख सकते हैं और आपको कुछ खरीदना होगा।

फिल्म और फैशन उद्योग ने सौंदर्य की कुछ निश्चित छवियों को लोकप्रिय बनाया, तो सोशल मीडिया ने उन्हें हर व्यक्ति के निजी जीवन में पहुंचा दिया। संपादित तस्वीरों ने ऐसी सुंदरता को सामान्य बनाया है, जो वास्तविक जीवन में संभव ही नहीं। अब तुलना केवल दूसरों से नहीं, उनकी डिजिटल छवियों से होती है। परिणामस्वरूप चेहरे, शरीर और उम्र को लेकर असंतोष बढ़ता है। यह असंतोष बाजार के लिए ईंधन है।

अपने रूप-रंग और शरीर की देखभाल करना गलत नहीं है। साफ-सुथरा रहना, अच्छे कपड़े पहनना, स्वस्थ रहना या व्यक्तित्व को संवारना स्वाभाविक मानवीय इच्छाएं हैं। समस्या तब पैदा होती है जब व्यक्तिगत पसंद सामाजिक दबाव में बदल जाए। अपने चेहरे से प्रेम करना अलग बात है और अपने चेहरे से इसलिए असंतुष्ट रहना कि समाज उसे पर्याप्त सुंदर नहीं मानता। पहली स्थिति आत्मस्वीकृति है, दूसरी सामाजिक दबाव का परिणाम।

> ***बहस** सौंदर्य के पक्ष या विपक्ष में नहीं, उसके मानकों और सत्ता को लेकर होनी चाहिए। आखिर गोरा रंग ही सुंदर क्यों माना जाए? किसी मनुष्य की सामाजिक कीमत शरीर की बनावट से तय करने का अधिकार किसे है? इन सवालों के जवाब जानें बिना सौंदर्य के नाम पर असमानता को समझना मुश्किल है।*

सत्ता के पैमाने

इसलिए बहस सौंदर्य के पक्ष या विपक्ष में नहीं, उसके मानकों और सत्ता को लेकर होनी चाहिए। आखिर गोरा रंग ही सुंदर क्यों माना जाए? किसी मनुष्य की सामाजिक कीमत शरीर की बनावट से तय करने का अधिकार किसे है? इन सवालों के जवाब जानें बिना सौंदर्य के नाम पर असमानता को समझना मुश्किल है। परिवर्तन की शुरुआत परिवार से होनी चाहिए। बेटी को यह बताने की जरूरत नहीं कि उसका रंग कैसे बदलेगा, उसे यह बताना है कि उसकी क्षमता की कोई सीमा नहीं। बच्चों को आईने में अपनी कमियां तलाशने के बजाय अपनी संभावनाएं पहचानना सिखाना होगा। शिक्षा का उद्देश्य भी ऐसी दृष्टि विकसित करना होना चाहिए, जो व्यक्ति को बाहरी आवरण से आगे देखने की क्षमता दे।

किसी समाज की प्रगतिशीलता का पैमाना यह नहीं कि उसकी स्त्रियां कितनी सुंदर हैं, बल्कि यह है कि उन्हें सुंदर दिखने के लिए कितना विवश किया जाता है। चेहरा समय के साथ बदलता है, मगर विचार की शक्ति बनी रह सकती है। इसलिए जरूरत आईने को तोड़ने की नहीं, उस नजर को बदलने की है, जो मनुष्य को पहले चेहरा और बाद में इंसान समझती है। असली मकड़जाल सौंदर्य में नहीं, सौंदर्य के नाम पर बनाई गई उस मानसिकता में है, जो मनुष्य की पूरी पहचान को उसके चेहरे तक समेट देना चाहती है।

अधूरी बात पर प्रतिक्रिया से करें परहेज

जीवन शैली

आज के व्यस्तता भरे जीवन और तेज सूचना के दौर में किसी भी बात पर तुरंत प्रतिक्रिया देने की आदत आम हो गई है। सोशल मीडिया, मोबाइल संदेश और इंटरनेट ने सूचनाओं के प्रसार को इतना तेज कर दिया है कि लोग पूरी बात जाने-समझे बिना ही अपनी राय बना लेते हैं। कई बार किसी घटना, बयान या संदेश का केवल एक हिस्सा सामने आता है और उसी के आधार पर प्रतिक्रिया शुरू हो जाती है। इसका असर आमने-सामने के संवाद पर भी दिखाई देने लगा है। किसी व्यक्ति की बात को अगर संदर्भ से अलग करके समझ लिया जाए, तो उसका अर्थ पूरी तरह बदल सकता है। बाद में जब पूरी सच्चाई सामने आती है, तब पछतावा ही हाथ लगता है। अधूरी जानकारी पर दी गई प्रतिक्रिया न केवल व्यक्ति के लिए परेशानी पैदा कर सकती है, बल्कि परिवार, समाज और संस्थाओं के बीच भी गलतफहमी बढ़ा सकती है।

सूचना की सच्चाई

परिवार या मित्रों के बीच किसी अधूरी बात को सच मानकर तल्ख टिप्पणी करने या नाराज होने से विश्वास कमजोर हो सकता है। कई बार छोटी-सी गलतफहमी लंबे समय तक चलने वाले विवाद का कारण बन जाती है। सोशल मीडिया ने इस समस्या को और गंभीर बना दिया है। यहां किसी सूचना तस्वीर या वीडियो को बिना जांचे साझा करना बहुत आसान है। मगर एक गलत सूचना कुछ ही मिनटों में हजारों लोगों तक पहुंच सकती है। उसके बाद उसे वापस लेना या सही जानकारी लोगों तक पहुंचाना कठिन हो जाता है।

धैर्य की जरूरत

गुस्सा, दुख, डर या उत्साह की स्थिति में व्यक्ति की सोचने-समझने की क्षमता कमजोर हो सकती है। वह प्रतिक्रिया के रूप में ऐसी टिप्पणी कर सकता है, जिसे वापस लेने के बाद भी उसका असर बना रह सकता है। इसलिए भावनात्मक स्थिति में तत्काल प्रतिक्रिया देने के बजाय धैर्य से पूरी बात को सुनना, जानना और उस पर विचार करना ही समझदारी है। आमने-सामने के संवाद में यदि किसी बात पर भ्रम हो, तो उसे दूर करने की कोशिश की जानी चाहिए। किसी आभासी मंच पर सूचना के बाद प्रतिक्रिया देने से पहले उसके स्रोत की जांच करनी चाहिए। यहीं नहीं, किसी व्यक्ति की कही बातों या सूचना के संदर्भ को समझना भी आवश्यक है।

> ***कई** बार संवाद के दौरान दूसरे की बात सुनते हुए हमारे मन में प्रतिक्रिया के अंश उभरने लगते हैं। यानी सामने वाला अभी अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाता कि हमारे भीतर उत्तर तैयार हो जाता है।*

जिम्मेदार व्यवहार

आज के समय में सूचना पाना जितना आसान है, सही सूचना को पहचानना उतना ही महत्त्वपूर्ण है। पूरी बात सुनकर या सच जानने के बाद संतुलित प्रतिक्रिया देना ही हमारी समझदारी और व्यक्तित्व को दर्शाता है। कई बार परस्पर संवाद के दौरान दूसरे की बात सुनते हुए हमारे मन में प्रतिक्रिया के अंश उभरने लगते हैं। यानी सामने वाला अभी अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाता कि हमारे भीतर उत्तर तैयार हो जाता है। हम उसके संदेश को ठीक से नहीं सुन रहे होते, बल्कि अपनी प्रतिक्रिया पर विचार कर रहे होते हैं। किसने क्या कहा, किस परिस्थिति में कहा और उसका आशय क्या था- इन सवालों के जवाब जानना जरूरी होता है। भ्रम की स्थिति में कई बार चुप रहना भी जिम्मेदार व्यवहार होता है।

मुंह में सफेद छाले जब बन जाए घाव

सेहत

मुंह में छाले बन जाएं, तो ये काफी तकलीफ देते हैं। शुरुआत में साधारण से लगने वाले ये छाले जब लापरवाही के कारण अल्सर में बदल जाते हैं, तो स्थिति गंभीर हो जाती है। ऐसे में मरीज न तो ठीक से बोल पाता है और न ही कुछ खा-पी पाता है। गौर करें तो कई बार छाले होठों के नीचे बन जाते हैं। कभी-कभी कुछ लोगों को तालू, मसूड़े और जीभ पर भी छाले हो जाते हैं। आम तौर पर इन छालों से किसी दूसरे को संक्रमण नहीं होता। फिर भी सावधानी बरतनी चाहिए और स्वच्छता का ध्यान रखना चाहिए। अगर छाले यौन संक्रमण से नहीं बने हैं, तो ये गंभीर नहीं होते। उदर संबंधी रोगों के कारण भी मुंह में छाले बन जाते हैं। ये सामान्य छाले होते हैं और अपने आप कुछ दिनों में ठीक हो जाते हैं। अगर दिक्कत ज्यादा हो, तो चिकित्सक से जरूर परामर्श करना चाहिए।

जोखिम का दायरा

मुंह के छाले बिगड़े नहीं, इसलिए समय रहते इन पर ध्यान देना चाहिए। ये छाले जब अल्सर यानी घाव बन जाते हैं, तो मरीज के लिए स्थिति गंभीर हो जाती है। यह एक ऐसा नासूर बन जाता है जिसे ठीक होने में वक्त लगता है। सवाल है कि मुंह में अल्सर बनते क्यों हैं। कई बार देखा गया है कि खाना खाने के दौरान सहसा गाल का अंदरुनी हिस्सा दांत से कट जाता है और वहां से खून बहने लगता है। अगर यह ठीक न हो, तो तुरंत उपचार कराना चाहिए। कुछ छाले पीले या सफेद रंग के दिखाई देते हैं। गौरतलब है कि 'ओरल लाइकेन' भी अल्सर है। इसमें यह सफेद घाव जैसा दिखता है। कभी-कभी मुंह में कोशिका बढ़ने से भी छाले बन जाते हैं। ये भूरे या सफेद रंग के होते हैं। तंबाकू चबाने और धूम्रपान करने से भी ये हो सकते हैं।

निचले दांत के पीछे और जीभ के नीचे कुछ लोगों को 'एरिथ्रोप्लाकिया' हो जाता है। ये ऐसे छाले हैं जिनमें कैंसर का जोखिम रहता है। तंबाकू उत्पादों के सेवन से यह स्थिति पैदा होती है। सफेद या लाल रंग में दिख रहे घाव कई बार ठीक नहीं होते। कोई छाला हफ्ते-दस दिन में ठीक नहीं हो रहा हो, तो तुरंत चिकित्सक को दिखाना चाहिए।

गंभीर होते लक्षण

सवाल यह कि इसकी नौबत आती ही क्यों है। दरअसल, यह मुख स्वास्थ्य पर ध्यान न देने का परिणाम होता है। मुलायम टूथब्रश का इस्तेमाल न करने से मसूड़े छिल जाते हैं। अंदर के गाल में भी खरोंच लग जाती है। यह इसलिए होता है, क्योंकि ज्यादातर लोग अपने ब्रश जल्दी बदलते नहीं हैं। कभी-कभी दांतों तले जीभ या अंदरुनी गाल का हिस्सा कटने पर लोग गौर नहीं करते और छोटे जख्म कभी-कभी अल्सर में बदल जाते हैं। यों किसी एलर्जी की वजह से भी छाले बन सकते हैं। अगर छाले किसी विषाणु के कारण बने हैं, तो ये अल्सर में भी बदल सकते हैं।

सजगता ही बचाव

छाले की गंभीरता को कम करने के लिए एहतियात बरतें। सबसे पहले तो मुख स्वास्थ्य पर ध्यान देना जरूरी है। अगर बुखार की वजह से छाले बन जाएं, तो व्यक्तिगत चीजें साझा नहीं करनी चाहिए। छाले वाली जगह की साफ-सफाई जरूरी है। इसलिए खाना खाने के बाद अच्छी तरह कुल्ला अवश्य करें। वहां चिकित्सक की सलाह से 'एंटीसेप्टिक जेल' लगाएं। मुंह को स्वच्छ रखें। सुबह-शाम दांतों और जीभ की सावधानी से सफाई करें। गुनगुने पानी में थोड़ा-सा नमक डाल कर कुल्ला करें। रात में सोने से पहले कुल्ला अवश्य करना चाहिए। मिर्च-मसालों से बना आहार नहीं लेना चाहिए। पेट में गर्मी की वजह से छाले बने हों, तो पर्याप्त पानी पीना अच्छा रहता है।

(यह लेख सिर्फ सामान्य जानकारी और जागरूकता के लिए है। उपचार या स्वास्थ्य संबंधी सलाह के लिए विशेषज्ञ की मदद लें।)

बनाना आसान, खाने में मजेदार

रसोई

कच्चे केले का परांठा

केला कच्चा हो या पका हुआ, यह सेहत के लिए बहुत फायदेमंद होता है। कच्चे केले की सब्जी घरों में अक्सर बनाई जाती है, लेकिन इसके परांठे का जायका और भी बेहतरीन होता है। इसे आम परांठे की तरह ही बनाया जाता है, लेकिन इसमें अमचूर का इस्तेमाल किया जाता है, जिससे इसका स्वाद चटपटा हो जाता है।

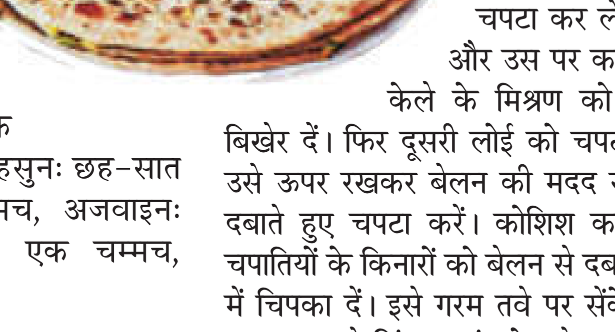

सामग्री

गेहूं का आटा: 200 ग्राम, कच्चे केले: चार-पांच, हरा धनिया (बारीक कटा हुआ), अदरक: एक इंच, हरी मिर्च: तीन-चार, लहसुन: छह-सात कलियां, अमचूर: एक चम्मच, अजवाइन: एक चम्मच, कसूरी मेथी: एक चम्मच, नमक: स्वादानुसार।

विधि

सबसे पहले एक थाली में गेहूं का आटा लें और उसमें हल्का सा नमक, अजवाइन तथा तेल डाल कर अच्छी तरह मिला लें। फिर इसे गुनगुने पानी के साथ गूंथे और कुछ देर तक ढक कर रख दें। इस बीच, कच्चे केले को धोकर उसे प्रेशर कुकर में नरम होने तक उबालें। ठंडा होने पर इसके छिलके निकाल दें और अंदर वाले हिस्से को हाथ से अच्छी तरह मसल दें, ताकि इसमें कोई टुकड़ा न रहे। फिर इसमें अदरक और लहसुन का पेस्ट, बारीक कटी हरी मिर्च, अमचूर पाउडर, हरा धनिया और नमक डालकर अच्छी तरह मिला लें। इसके बाद गूंथे हुए आटे की छोटी-छोटी लोइयां बना लें। अब एक लोई को बेलन की मदद से चपटा कर लें और उस पर कच्चे केले के मिश्रण को चारों ओर बिखेर दें। फिर दूसरी लोई को चपटा करें और उसे ऊपर रखकर बेलन की मदद से धीरे-धीरे दबाते हुए चपटा करें। कोशिश करें कि दोनों चपातियों के किनारों को बेलन से दबाकर आपस में चिपका दें। इसे गरम तवे पर सेंकें और जब एक तरफ से सिंक जाएं, तो उसे पलटकर ऊपर से देसी घी या मक्खन का लेप लगाएं, दूसरी तरफ भी ऐसे ही देसी घी लगाएं। इस तरह सभी परांठे तैयार करें। इन्हें दही, रायता या चटनी के साथ परोसें।

मेथी पनीर मसाला

पनीर की सब्जी अपने आप में स्वादिष्ट एवं पौष्टिक होती है और अगर इसे हरी मेथी के साथ बनाया जाए, तो इसका जायका मजेदार हो जाता है। हरी मेथी का अपना स्वाद होता है और अगर इसे मलाई के साथ मिलाया जाए, तो इसका कड़वापन भी खत्म हो जाता है।

सामग्री

पनीर: 250 ग्राम, हरी मेथी: 150 ग्राम, टमाटर: दो, प्याज: एक, काजू: सात-आठ, अदरक: आधा इंच, लहसुन: तीन-चार कलियां, हरी मिर्च: दो, लाल मिर्च पाउडर: एक चम्मच, धनिया पाउडर: आधा चम्मच, नमक: स्वादानुसार।

विधि

सबसे पहले पनीर को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें और हरी मेथी के पत्तों को अच्छी तरह धोकर बारीक काट लें। इसके बाद एक कड़ाही में तेल गरम करें और उसमें जीरा डालकर चटकने तक भूनें। अब इसमें कटा हुआ प्याज डालें और हल्का सुनहरा रंग आने तक भूनें। फिर कटा हुआ अदरक, लहसुन, हरी मिर्च और बारीक कटे हुए काजू इसमें डालें। इन्हें लगातार चम्मच से चलाते हुए कुछ सेकंड तक भूनें। इसके बाद कटे हुए टमाटर डालकर उन्हें धीमी आंच पर नरम होने तक पकाएं। जब यह सारा मिश्रण ठंडा हो जाए, तो इसे मिक्सी में पीसकर पेस्ट बना लें। अब कड़ाही में फिर से तेल गरम करें और कटी हुई मेथी की पत्तियां डालें। इसे धीमी आंच पर तब तक पकाएं, जब तक ये नरम न हो जाएं। फिर हल्दी पाउडर, लाल मिर्च पाउडर और धनिया पाउडर डालें। अब इसमें पहले से तैयार टमाटर के मिश्रण का पेस्ट मिला दें। फिर इसमें जरूरत के मुताबिक पानी और नमक डालें। इसे धीमी आंच पर तीन-चार मिनट तक उबालें। अब इसमें मलाई डालकर चम्मच से अच्छी तरह मिला लें। फिर पनीर के टुकड़े और गरम मसाला पाउडर डालें। इसे चार-पांच मिनट तक पकाएं और थोड़ा ठंडा होने पर चपाती, नान या परांठे के साथ परोसें।

Lifetime Free Newspapers Access

Editorials PDF

📍EnglishEditorialsPDF with International Newspapers Editorials [35-40pages]

📍 Hindi Editorials PDF

📍 Daily Vocabulary PDF

Magazine Channel

National & International [Genaral & Exam related]

International Newspapers

Newspapers around world. Asian, Europian & American

Hindi Newspapers

1) दैनिक जागरण
2) जनसत्ता
3) हरिभूमि
4) हिंदुस्तान

Indian Newspapers Channel

1. The Indian Express
2. The Hindu
3. Business Line
4. Financial Express
5. Times of India
6. Hindustan Times
7. Economic Times
8. Live Mint
9. Business Standard